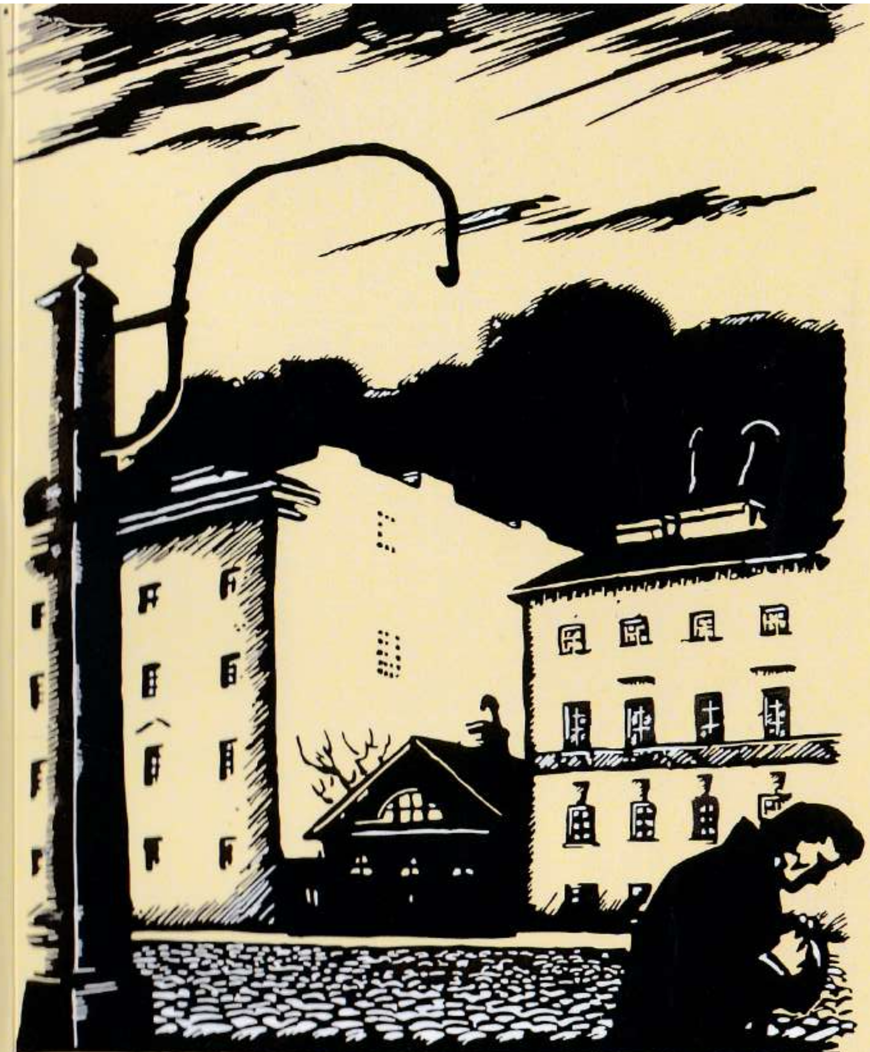


विराट कथानकोंवाले 'अपराध ओर दण्ड', 'महामूर्ख', 'करामाजोव बन्धु', आदि उपन्यासों के जन्मदाता फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की (1821–1881) को रूसी और विश्व साहित्य के इतिहास में मनोवैज्ञानिक लघु उपन्यासों के एक प्रमुखतम लेखक के रूप में भी स्थान प्राप्त है।

'दरिद्र नारायण' (1845) युवा दोस्तोयेव्स्की का पहला लघु उपन्यास था जो उस समय तक ज़ार के दण्ड और निर्वासन के वर्षों (1849–1859) से तोड़ नहीं डाले गये थे।

9788185242965 250/-

दरिद्र नारायण · रजत रातें



फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की

दरिद्र नारायण · रजत रातें

कामगार प्रकाशन

फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की

दरिद्र नारायण
रजत रातें

कामगार प्रकाशन

प्रथम संस्करण, दिसंबर, 2021

अनुवादक : डा0 मदनलाल 'मधु'

प्रकाशक की ओर से

यह प्रकाशन 'दरिद्र नारायण • रजत रातें', फ्योदोर दोस्तोयेव्स्की, रादुगा प्रकाशन, मास्को, 1984 द्वारा प्रकाशित पुस्तक का पुनर्मुद्रण है।

साभार : रादुगा प्रकाशन, मास्को

ISBN:978-81-85242-96-5

मूल्य: रूपये 250/-

प्रकाशक:
बलराम शर्मा
कामगार प्रकाशन
बी-4838, गली नम्बर-112, संतनगर, बुराड़ी,
दिल्ली-110084, मो. 9212504960

बेबसाइट - www.kamgarprakashan.com
फेसबुक - कामगार प्रकाशन
ई-मेल - kamgarprakashan@gmail.com

मुद्रक:
Comservices, A-73, Group Industrial Area,
Wazirpur, Delhi-110052

अनुक्रम

प्रस्तावना

विश्व-विख्यात रूसी लेखक फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की (१८२१–१८८१) की शेक्सपियर, दांते, गेटे और तोलस्तोय जैसी विभूतियों में गणना की जाती है।

मास्को के मारीइन्स्काया नामक ख़ैराती अस्पताल के एक डाक्टर के परिवार में फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की का जन्म हुआ था।

फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की के पिता मिख़ाईल अन्द्रेयेविच रूसी समाज की धार्मिक श्रेणी से सम्बन्ध रखते थे। १८२८ में उन्हें कुलीनों की श्रेणी मिली। १८३१–१८३२ में उन्होंने तूला गुबेर्निया में छोटी-सी जागीर ख़रीद ली। वह किसानों के साथ क्रूरता से पेश आते थे और उनके अपने भू-दासों ने ही १८३९ में उनकी हत्या कर डाली। लेखक की मां धार्मिक और काव्यमयी प्रकृति की महिला थीं। उनका १८३७ में देहान्त हुआ।

अपने बड़े भाई मिख़ाईल के साथ, जिन्हें वह बहुत चाहते थे और जिनके साथ बाद में पत्रकारिता का काम करते हुए उनकी बड़ी घनिष्ठता रही, दोस्तोयेव्स्की १८३८ में पीटर्सबर्ग के सैन्य-इंजीनियरी विद्यालय में दाखिल हुए। १८४३ में इस विद्यालय की पढ़ाई समाप्त करने के बाद वह सेना में नौकरी करने लगे। किन्तु एक साल बाद इस बात का पक्का यक़ीन हो जाने पर कि साहित्य-सृजन ही उनके जीवन का कार्य-क्षेत्र है, उन्होंने नौकरी छोड़ दी।

दोस्तोयेव्स्की के पहले लघु उपन्यास 'दरिद्र नारायण' (१८४५)

ने ही उन्हें जाने-माने यथार्थवादी लेखकों की पांत में ला खड़ा किया। दोस्तोयेव्स्की के समकालीन महान रूसी समालोचक वि-स्सारिओन बेलीन्स्की ने इस रचना का उत्साहपूर्ण स्वागत करते हुए लिखा कि युवा लेखक ने रूसी साहित्य में पहली बार "छोटे व्यक्ति" के भाग्य को सामाजिक त्रासदी के रूप में अभिव्यक्ति दी है और अधिकारहीन तथा भूले-बिसरे व्यक्तित्व में गहन मानवी-यता का उद्घाटन किया है। कुछ समय बाद 'रजत रातें' (१८४८) और 'नेतोच्का नेज़्वानोवा' (१८४९) लघु उपन्यास प्रकाश में आये। इनमें यथार्थवाद के वे लक्षण उभरे जिन्होंने दोस्तोयेव्स्की को उस समय के लेखकों से अलग स्थान प्रदान किया। ये लक्षण थे – गहन मनोवैज्ञानिकता, मानवीय चेतना के दोहरे स्वरूप का विश्लेषण और पात्रों तथा परिस्थितियों की अनन्यता।

१८४७ से दोस्तोयेव्स्की ५वें दशक के मुक्ति आन्दोलन के एक प्रमुखतम कार्यकर्त्ता पेत्राशेव्स्की के मण्डल में जाने लगे। इस मण्डल में काल्पनिक-समाजवादियों की रचनाओं का अध्ययन किया जाता था और १८४८ की फ़्रांसीसी क्रान्ति के विचारों पर चिन्तन-मनन होता था।

रूसी और पश्चिमी-युरोपीय समाजवाद के विचारों में गहरी दिलचस्पी तथा सामाजिक-दार्शनिक बौद्धिक वाद-विवादों ने लेखक के भावी कृतित्व पर गहरी छाप अंकित की। पेत्राशेव्स्की के मण्डल के अन्य सदस्यों के साथ दोस्तोयेव्स्की को भी २३ अप्रैल १८४९ को गिरफ़्तार करके पीटर-पाल के क़िले में बन्द कर दिया गया और मौत की सज़ा सुना दी गयी। उन्हें गोली मारने के कुछ ही क्षण पहले ज़ार निकोलाई प्रथम के आदेशानुसार मृत्यु-दण्ड को चार वर्ष के निर्वासन (१८५०–१८५४) और निर्वासन काल की समाप्ति के बाद साधारण सैनिक के रूप में सैन्य-सेवा में बदल दिया गया।

१८५९ में दोस्तोयेव्स्की को साइबेरिया से पहले त्वेर और फिर पीटर्सबर्ग आने की अनुमति मिली।

कुछ ही समय बाद उनके 'चाचा का सपना' (१८५९) और

'स्तेपान्चिकोवो गांव तथा उसके वासी' (१८५९) लघु उपन्यास छपे और 'अपमानित तथा अवमानित' (१८६१) उपन्यास प्रकाशित हुआ।

निर्वासन के बाद लिखी गयी उनकी प्रमुखतम रचना थी 'मुर्दाघर की टिप्पणियां' (१८६१–१८६२)। साइबेरिया में लगभग दस साल तक की शारीरिक और नैतिक यातनाओं के बावजूद दोस्तोयेव्स्की का जीवन, प्रेम और मानव में विश्वास बना रहा। किन्तु मानवीय व्यथाओं-वेदनाओं के प्रति उनकी संवेदनशीलता तथा मानवजाति के भाग्य में उनकी गहन रुचि और अधिक बढ़ गयी तथा वह पहले से ज़्यादा लगन के साथ सामाजिक न्याय के मार्ग खोजने लगे।

उन्नीसवीं सदी के सातवें-आठवें दशक के दौरान दोस्तोयेव्स्की ने अपने बहुत ही प्रतिभापूर्ण उपन्यास रचे जो रूसी और विश्व साहित्य के इतिहास में संगमील बने। ये उपन्यास थे – 'अपराध और दण्ड' (१८६६), 'महामूर्ख' (१८६८), 'भूत-प्रेत' (१८७१-१८७२), 'किशोर' (१८७५) और 'करामाज़ोव बन्धु' (१८७९–१८८०)।

इसी समय दोस्तोयेव्स्की पत्रकार के रूप में भी सामने आये। वह 'नागरिक' नाम की पत्रिका का सम्पादन करते थे जिसमें उन्होंने अपनी 'लेखक की डायरी' का प्रकाशन आरम्भ किया जो बाद में अलग प्रकाशन के रूप में १८७६, १८७७ में प्रति मास छपती रही। इसका एक अंक १८८० और एक १८८१ में प्रकाशित हुआ।

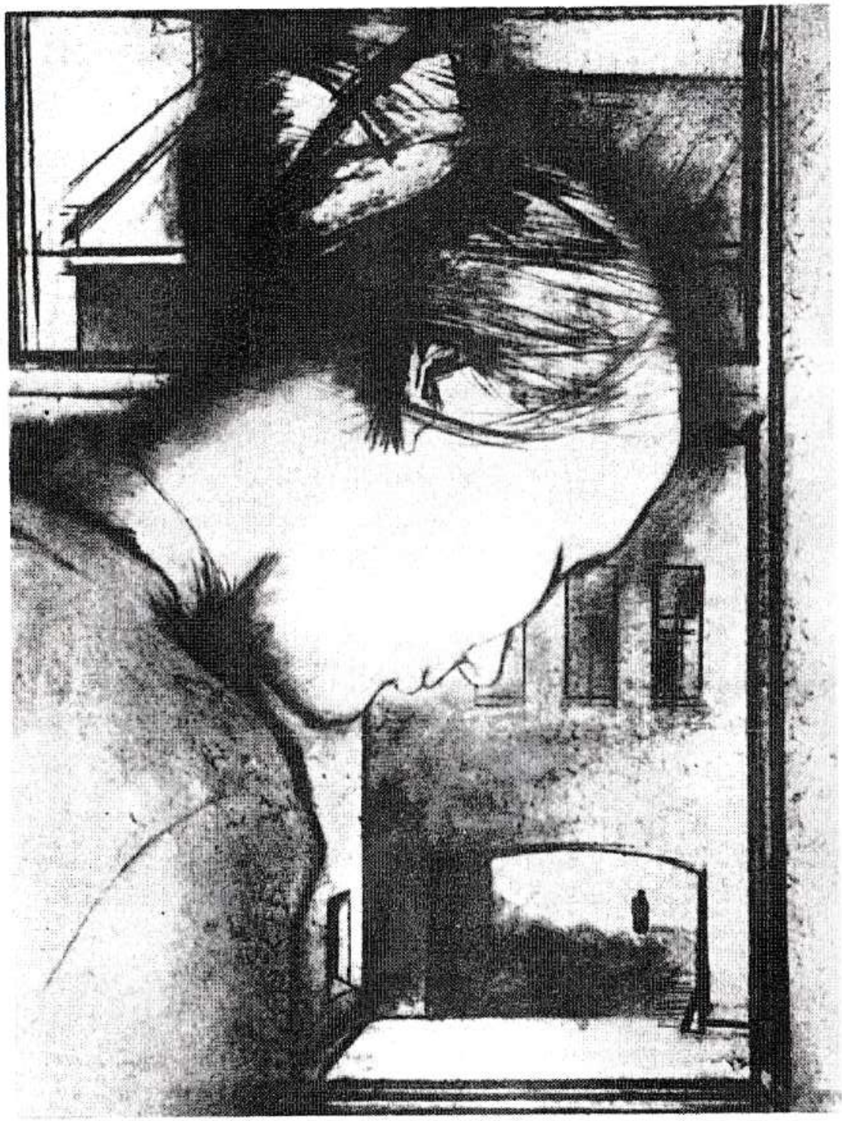
इन अंकों में सामाजिक जीवन के ज्वलन्त विषयों, साहित्यिक-समीक्षात्मक टीका-टिप्पणियों के अलावा 'क्रिसमस के अवसर पर ईसा के यहां लड़का', 'विनीता', 'हास्यास्पद व्यक्ति का सपना' और अन्य कहानियां भी छपीं।

मानवीय दुख-दर्द ही दोस्तोयेव्स्की के यथार्थवादी कृतित्व के आधार हैं और इनके वर्णन-चित्रण में वह बेजोड़ हैं। समाज के अमीरों और ग़रीबों, सत्ताधारियों तथा अधिकारहीनों में विभाजन

के फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले दुख-दर्दों का वर्णन तथा पैसे की ताक़त के कुपरिणामों के दोस्तोयेव्स्की के चित्र सच्चे मानवतावाद से ओत-प्रोत हैं। पाठक को उनकी सभी रचनाओं में "मानव के लिये पीड़ा", उसकी गरिमा पर किये जानेवाले आघात और अपमानितों तथा अवमानितों की यातनाओं की तीव्रानुभूति होती है।

दरिद्र नारायण

लघु उपन्यास



ओह, ये क़िस्से-कहानियां लिखनेवाले! ये कोई उपयोगी, रोचक और सरस चीज लिखते तब भी कोई बात होती, ये तो खोद-बीन ही करते रहते हैं!.. मैं तो इनका लिखना बन्द कर देता! यह भी कोई बात हुई – इनकी चीज पढ़ो... बरबस आदमी सोचने लगता है और सभी तरह की उल्टी-सीधी बातें दिमाग़ में आने लगती हैं। सचमुच मैं इनके लिखने पर रोक लगा देता, इन्हें बिल्कुल न लिखने देता।

प्रिंस व० फ़० ओदोयेव्स्की

मेरी बहुत ही प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

कल मैं बहुत खुश था, बहुत ही खुश था, बेहद खुश था! मेरी हठीली, जीवन में आखिर एक बार तो आपने मेरी बता पर कान दिया। शाम के आठेक बजे मेरी आंख खुली (मेरी रानी, आप तो जानती ही हैं कि काम से लौटने पर मुझे कुछ देर को झपकी लेना अच्छा लगता है), मैंने मोमबत्ती जलायी, काग़ज़ तैयार किया, क़लम की नोक-पलक संवारी, संयोग से नज़र ऊपर उठाई और सच कहता हूं, मेरा मन खुशी से नाच उठा! तो आप समझ ही गयी थीं कि मैं क्या चाहता था, मेरा दिल क्या चाह रहा था! देखता क्या हूं कि आपकी खिड़की का परदा थोड़ा-सा हटा हुआ है, गुलमेंहदी के गमले के साथ ठीक वैसे ही अटका हुआ है, जैसा करने का मैंने संकेत किया था। इसी क्षण मुझे ऐसे भी लगा कि खिड़की के पास मुझे आपके प्यारे चेहरे की झलक मिली है, कि अपने कमरे से

आप भी मेरी ओर देख रही हैं, कि आप भी मेरे बारे में सोच रही हैं। और इस बात से मेरे दिल को कितना दुख हुआ था, मेरी प्यारी, कि आपका प्यारा मुखड़ा मैं अच्छी तरह से नहीं देख पाया था! कभी वह वक़्त भी था जब मुझे सब कुछ साफ़-साफ़ दिखाई देता था, मेरी रानी। मेरी प्यारी, बुढ़ापा कोई नेमत नहीं है! अब तो हर चीज़ धुंधली-धुंधली नज़र आती है। शाम को अगर कुछ देर काम कर लिया, कुछ लिख लिया तो सुबह को आंखों में लाली छा जाती है, उनसे ऐसे पानी बहने लगता है कि किसी के सामने जाते हुए भी शर्म महसूस होती है। फिर भी मेरी कल्पना में आपकी मुस्कान, आपकी प्यारी, मधुर मुस्कान चमक उठी, मेरे नन्हे फ़रिश्ते। मेरे हृदय को बिल्कुल वैसी ही अनुभूति हुई जैसी तब हुई थी, जब मैंने आपको चूमा था, मेरी प्यारी वारेन्का, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, आपको याद है न? मेरी प्रियतमा, मुझे ऐसे भी लगा कि आपने उंगली दिखाकर मुझे धमकाया है? अरी शरारती, क्या ऐसा ही है? आप अपने पत्र में यह सब कुछ विस्तार से लिखियेगा।

आपके परदे के बारे में हमने जो तरकीब सोची, वह कैसी रही वारेन्का? बहुत बढ़िया न? मैं काम करने बैठूं, सोने के लिये लेटूं या जागूं, मुझे हमेशा यह मालूम होता है कि आप मेरे बारे में सोच रही हैं, मुझे भूली नहीं हैं और स्वयं सकुशल तथा सानन्द हैं। जब आप परदा गिरा देती हैं तो उसका मतलब होता है – शुभरात्रि, मकार अलेक्सेयेविच, सोने का वक़्त हो गया! परदा उठा देती हैं तो इसका अर्थ होता है – सुप्रभात, मकार अलेक्सेयेविच, आपको नींद कैसी आई या फिर आपकी तबीयत कैसी है, मकार अलेक्सेयेविच? जहां तक मेरा सम्बन्ध है तो भगवान की कृपा से मैं ठीक-ठाक और खुश हूं। देखती हैं न, मेरे दिल की रानी, कितनी बढ़िया जुगत रही है यह। पत्रों की भी आवश्यकता नहीं रही! है न लाजवाब चतुराई? और यह तो मेरे ही दिमाग़ की सूझ है! क्यों, मुझे कमाल हासिल है न ऐसी बातों में, वरवारा अलेक्सेयेव्ना?

मेरी प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना, आपको मैं यह बताना चाहता हूं कि आशा के विपरीत पिछली रात मैं बहुत अच्छी तरह

से सोया और इस बात की मुझे बड़ी खुशी है। वैसे यह सही है कि नयी जगह पर और नये घर में हमेशा ढंग से नींद नहीं आती – यही लगता रहता है – यह ऐसे नहीं है, यह वैसे नहीं है! आज मैं बिल्कुल ताज़ादम होकर, बहुत ही खुश-खुश जागा हूं। मेरी रानी, आज की सुबह भी कितनी प्यारी है! हमारी खिड़की खुली हुई है, धूप खिली हुई है, पक्षी चहचहा रहे हैं, हवा में वसन्त की महक बसी है, प्रकृति अंगड़ाई ले रही है और शेष सब कुछ भी वसन्त के अनुरूप है, उसकी सुषमा में ढला हुआ है। मैंने तो आज बड़ी मधुर-मधुर कल्पनाएं भी की हैं और वारेन्का, आप ही उन सारी कल्पनाओं का केन्द्र-बिन्दु हैं। मैंने आपकी तुलना आकाश में उड़नेवाली चिड़िया से की जिसका जन्म ही लोगों को खुशी देने और प्रकृति की शोभा बढ़ाने के लिये होता है। इसी समय मैंने यह भी सोचा, वारेन्का, कि चिन्ताओं और परेशानियों में घुलनेवाले हम लोग भोले-भाले तथा निश्चिन्त गगन-विहारी पक्षियों से ईर्ष्या किये बिना नहीं रह सकते – कुछ ऐसी, इसी तरह की दूसरी बातें भी मेरे दिमाग़ में आयीं यानी बहुत दूर-दूर की तुलनाएं करता रहा, उपमाएं ढूंढ़ता रहा। प्यारी वारेन्का, मेरे पास एक किताब है, उसमें यह सब, यही सारी बातें बहुत विस्तार से लिखी हुई हैं। मेरी रानी, मैं इसलिये यह लिख रहा हूं कि तरह-तरह के सपने आया करते हैं दिल-दिमाग़ में। और अब तो चूंकि वसन्त के दिन हैं तो विचार भी बड़े मधुर-मधुर हैं, तीव्रता से उमड़ते-घुमड़ते हैं, मन को छूनेवाले हैं और सपने भी हैं बहुत कोमल-कोमल, गुलाबी रंग में रंगे हुए। इसी कारण मैंने यह सब लिख डाला है। वैसे मैंने किताब से ही ये सारी बातें ली हैं। उसमें लेखक ने कविता के रूप में ऐसी ही इच्छा व्यक्त की है और लिखा है –

काश कि मैं पक्षी ही होता
एक शिकारी पक्षी!

ऐसी ही अन्य बातें भी। उसमें तरह-तरह के दूसरे विचार भी व्यक्त किये गये हैं, पर ख़ैर, हटाइये उन्हें। यह बताइये कि आज सुबह-सुबह आप कहां गयी थीं, वरवारा अलेक्सेयेव्ना? मैं तो काम पर जाने के लिये भी तैयार नहीं हो रहा था, लेकिन आप वसन्त की चिड़िया की तरह फुदककर कमरे से बाहर आयीं और बहुत ही

ख़ुश-ख़ुश-सी आंगन को लांघ गयी। आपको देखकर कैसे खिल उठा था मेरा दिल! ओह, वारेन्का, वारेन्का! आप उदास न हों, आंसू हमारे ग़म की दवा नहीं हो सकते, यह मैं अपने तजरबे से जानता हूं, मेरी प्यारी। अब तो आपके मन को बहुत चैन है और तबीयत भी आपकी कुछ बेहतर हो गयी है। आपकी फ़ेदोरा का क्या हाल-चाल है? ओह, कितनी भली औरत है वह! वारेन्का, आप मुझे लिखिये कि उसके साथ आपकी जिन्दगी कैसे बीत रही है और आप सभी चीज़ों से ख़ुश हैं या नहीं? फ़ेदोरा को कुछ बुड़बुड़ाने की आदत है, लेकिन आप इसकी तरफ़ कोई ध्यान न दें, वारेन्का। बुड़बुड़ाती है तो बुड़बुड़ाती रहे! यों इतनी भली है वह।

अपने यहां की तेरेज़ा के बारे में तो मैं आपको लिख ही चुका हूं – वह भी नेक और भरोसे की औरत है। हमारे पत्रों के बारे में कितना परेशान रहा था मैं! कैसे हम उन्हें एक दूसरे तक पहुंचाया करेंगे? हमारी ख़ुशक़िस्मती ही थी कि भगवान ने तेरेज़ा को हमारी मदद के लिये भेज दिया। वह दयालु, विनम्र और चुप रहनेवाली औरत है। लेकिन हमारी मालकिन बड़ी बेरहम है। वह तो किसी फटे-पुराने चिथड़े की तरह उसे काम में रगड़ती रहती है।

ओह, मैं भी कैसी गुफ़ा में आ गिरा हूं, वरवारा अलेक्सेयेव्ना! क्या कहने हैं इस घर के! आपको मालूम ही है कि पहले मैं ऐसा एकान्त जीवन बिताया करता था, शान्ति और नीरवता का; वहां तो अगर कोई मक्खी भी उड़ती थी तो उसकी आवाज़ तक सुनाई देती थी। लेकिन यहां शोर-गुल है, चीख़-चिल्लाहट और हल्ला-गुल्ला रहता है! हां, आप अभी यह तो जानती नहीं कि यहां की व्यवस्था कैसी है। उदाहरण के लिये आप एक अंधेरे, लम्बे और गंदे दालान की कल्पना करें। उसके दायीं ओर है नंगी-बुच्ची दीवार और बायीं ओर होटल के कमरों की तरह दरवाज़ों की क़तार। इन्हीं कमरों में एक, दो और तीन-तीन किरायेदार रहते हैं। रही व्यवस्था की बात, तो नूह के जहाज़ की तरह यहां ख़ासा गड़बड़-झाला है। वैसे लगता है कि लोग भले हैं, पढ़े-लिखे, विद्वान। एक कर्मचारी है (किसी साहित्यिक संस्था में काम करनेवाला), काफ़ी पढ़ा-लिखा आदमी है, होमर, ब्राम्बेउस और दूसरे

लेखकों की चर्चा करता है, सभी विषयों पर अपने विचार व्यक्त करता है – बड़ा बुद्धिमान व्यक्ति है! दो अफ़सर रहते हैं जो हमेशा ताश हीं खेला करते हैं। एक जहाज़ी अफ़सर भी है और एक अंग्रेज़ अध्यापक भी। मेरी प्यारी, आप थोड़ा सब्र से काम लें, मैं अपने अगले पत्र में आपका जी ख़ुश कर दूंगा, चुटकियां ले लेकर इन सबके बारे में तफ़सील से इनकी असलियत बताऊंगा! हमारी मालकिन टुइयां-सी और गन्दी-मन्दी औरत है, स्लीपर और ड्रेसिंग गाउन पहने हुए दिन भर इधर-उधर आती-जाती रहती है और दिन भर तेरेज़ा को डांटा-डपटा करती है। मैं रसोईघर में रहता हूं या यों कहना ज़्यादा सही होगा कि रसोईघर की बग़लवाले कमरे में (आपको यह बताना ज़रूरी है कि हमारा रसोईघर साफ़-सुथरा, रोशन और बहुत अच्छा है)। यह कमरा छोटा-सा है, मामूली-सा घोंसला है... या फिर यों कहना ज़्यादा बेहतर होगा कि रसोईघर बहुत बड़ा है, उसमें तीन खिड़कियां हैं और उसी में एक दीवार खड़ी करके एक और कमरा बना दिया गया है, नियमित कमरों के अलावा एक और कमरा – जो आरामदेह है और जिसमें खिड़की भी है। थोड़े में यही कि पूरा आराम है। तो यही है मेरा घोंसला। मेरी रानी, आप ऐसा कुछ नहीं सोचियेगा कि मेरी इस बात में कोई दूसरा, कोई रहस्यपूर्ण अर्थ छिपा हुआ है, कि वह तो रसोईघर ही है! मेरा मतलब यह कि रसोईघर में खड़ी कर दी गयी दीवार के पीछे ही रहता हूं। लेकिन इसमें कोई ख़ास बात नहीं – मैं दूसरों से अलग-थलग, अपने ढंग और शान्ति से रहता हूं। मैंने इसमें एक पलंग, मेज़, दो कुर्सियां और अलमारी भी ला रखी है, देव-प्रतिमा भी लटका दी है। यह सही है कि इससे बेहतर फ़्लैट हैं, शायद इससे कहीं बेहतर भी, मगर मुख्य बात तो आराम है। मैंने आराम के लिए ही ऐसा किया है, आप यह नहीं सोचिये कि किसी अन्य कारण से। फिर आपकी खिड़की भी आंगन के उस ओर मेरे सामने है और आंगन है छोटा-सा। आते-जाते आपको देख लेता हूं, मुझ बेचारे, क़िस्मत के मारे का मन बाग़-बाग़ हो जाता है और फिर सस्ता भी है। हमारे यहां भोजन सहित मामूली से मामूली कमरे के लिए पैंतीस रूबल देने पड़ते हैं। यह मेरे बूते के बाहर है! मैं भोजन सहित कुल साढ़े

चौबीस रूबल देता हूं। पहले पूरे तीस रूबल दिया करता था और तब बहुत-सी चीज़ों से मुझे अपने को वंचित रखना पड़ता था। तब मैं चाय हमेशा नहीं पीता था और अब चाय तथा चीनी के लिये भी ख़र्च निकल आता है। मेरी रानी, चाय न पीने से मानो शर्म आती है। यहां सभी खाते-पीते लोग हैं, इसीलिये शर्म आती है। दूसरों के लिये, दिखावे के लिये, अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये उसे पीता हूं। वैसे मुझे इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि चाय पी या नहीं, मैं नखरेबाज़ नहीं हूं। फिर जेबख़र्च के लिये भी कुछ न कुछ चाहिये, कभी कोई जूता, कोई कोट-ओट भी ख़रीदना होता है – तो बाक़ी क्या बचता है? कुछ भी नहीं, सारी तनख़्वाह ख़त्म। लेकिन मैं शिकवा-शिकायत नहीं कर रहा हूं, ख़ुश हूं। मेरे लिये काफ़ी है, कई सालों से काफ़ी है। कभी-कभी बोनस भी मिल जाता है। तो बस, अब काफ़ी है, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! मैंने गुलमेंहदी और जिरेनियम के कुछ गमले ख़रीदे हैं – सस्ते ही। शायद आपको मिनानेट के फूल पसन्द हैं? वे भी मिल रहे हैं, आप लिखिये। और हां, सब कुछ जितना सम्भव हो, अधिक विस्तार से लिखियेगा। वैसे, मेरी प्राण, मेरे बारे में आप कुछ उल्टा-सीधा नहीं सोचियेगा, किसी तरह की शंका को मन में नहीं आने दीजियेगा कि क्यों मैंने ऐसा कमरा किराये पर ले लिया है। नहीं, ऐसा कुछ नहीं, केवल आराम ने ही मुझे ऐसा करने को मजबूर किया है, आराम की भावना ने ही मेरे मन में ऐसी इच्छा पैदा की है। मेरी रानी, मैं पैसे जमा कर रहा हूं, उन्हें अलग रख रहा हूं, बढ़ाता जा रहा हूं। मैं इतना शान्त-सा आदमी हूं, आप इसका यह मतलब नहीं समझियेगा कि कोई मक्खी भी पर मारकर मुझे चारों शाने चित कर सकती है। नहीं, मेरी जान, मैं काफ़ी चुस्त-चालाक हूं, मुझमें चारित्रिक दृढ़ता भी है और आत्मा में किसी तरह का मैल भी नहीं है। तो विदा, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! मैंने तो दो पन्ने घसीट डाले और काम पर जाने को भी देर हो चुकी है। मेरी रानी, आपकी नन्ही-नन्ही उंगलियों को चूमता हूं।

आपका विनीत दास और सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

पुनश्च – यह अनुरोध करता हूं कि यथासम्भव सविस्तार मुझे सब कुछ लिखें, मेरे फ़रिश्ते! प्यारी वारेन्का, आपको एक पौण्ड मिठाई भेज रहा हूं, आशा है कि वह आपको पसन्द आयेगी। हां, भगवान के लिये मेरी बिल्कुल चिन्ता नहीं कीजियेगा, किसी भी तरह की बात मन में नहीं लाइयेगा। तो विदा, मेरी प्यारी।

८ अप्रैल

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

आप जानते हैं या नहीं कि आख़िर मुझे आप से पूरी तरह झगड़ा करना पड़ेगा? दयालु मकार अलेक्सेयेविच, क़सम खाकर कहती हूं कि आपके उपहार स्वीकार करते हुए मेरे दिल को दुख होता है। मैं जानती हूं कि आपको इनके लिये कितनी क़ुर्बानी करनी पड़ती है, अपने लिये ज़रूरी कितनी चीज़ों से मुंह मोड़ना और इन्कार करना पड़ता है। कितनी बार आप से यह कह चुकी हूं कि मुझे कुछ भी, बिल्कुल कुछ भी नहीं चाहिये, कि मैं आपकी अब तक की कृपाओं का बदला चुकाने में असमर्थ हूं। क्या ज़रूरत थी ये गमले भेजने की? गुलमेंहदी के पौधे तो ख़ैर ठीक हैं, लेकिन जिरेनियम भेजने की क्या आवश्यकता था? असावधानी से कोई एक शब्द मुंह से निकल जाने की देर है, उदाहरण के लिये जिरे-नियम के बारे में, और आप उसे फ़ौरन ख़रीदने चल दिये। सच बताइये, महंगे हैं न? कितने सुन्दर फूल हैं उसमें! लाल रंग के, क्रासवाले। कहां मिल गया आपको जिरेनियम का ऐसा गमला? मैंने उसे खिड़की के बीचोंबीच ऐसी जगह पर रख दिया है कि उस पर सबकी नज़र पड़े, फ़र्श पर एक बेंच रख दूंगी और उस पर दूसरे गमले सजा दूंगी। बस, ख़ुद मुझे कुछ अमीर हो जाने दीजिये! फ़ेदोरा की ख़ुशी का तो कोई ठिकाना ही नहीं। हमारे कमरे में तो अब मानो स्वर्ग की बहार है – साफ़-सुथरा, रोशन! और मिठाइयां भेजने की क्या ज़रूरत थी? हां, मैंने आपके पत्र से अभी यह अनुमान लगाया है कि आपके यहां कुछ गड़बड़ ज़रूर है – वहां स्वर्ग है, बसन्त है, महक-लहक है और पक्षी चहचहाते हैं।

मैं सोचने लगी कि कहीं कोई कविता भी होगी? आपके खत में सिर्फ़ कविता की ही कमी है, मकार अलेक्सेयेविच! इसमें कोमल भावनाएं हैं, गुलाबी सपने-कल्पनाएं हैं – सभी कुछ तो है! रहा परदा तो मैंने जान-बूझकर उसे एक तरफ़ को नहीं हटाया, वह तो मेरे गमले रखने के समय खुद ही अटक गया होगा। यही सचाई है!

ओह, मकार अलेक्सेयेविच! आप चाहे कुछ भी क्यों न कहें, मेरी आंखों में धूल झोंकने, मुझे यह दिखाने के लिये अपनी आमदनी का बेशक कैसा ही हिसाब क्यों न पेश करें कि वह सारी आप अपने पर ही खर्च करते हैं, आप मुझ से कुछ भी नहीं छिपा सकते। बिल्कुल साफ़ है कि आप मेरी खातिर अपनी जरूरतों को पूरा करने से इन्कार करते हैं। मिसाल के तौर पर, आपको क्या जरूरत पड़ी थी ऐसा कमरा किराये पर लेने की? अवश्य ही वहां आपको चैन नहीं मिलता, आप परेशान रहते हैं, जगह की तंगी महसूस करते हैं, आराम अनुभव नहीं कर पाते। आपको एकान्त अच्छा लगता है, लेकिन वहां आपके आस-पास हर तरह का शोर-गुल रहता है! आपके वेतन को ध्यान में रखते हुए तो यह कहा जा सकता है कि आप कहीं अच्छा जीवन बिता सकते थे। फ़ेदोरा का कहना है कि पहले आप कहीं अधिक अच्छे ढंग से रहा करते थे। क्या सचमुच आपने अपनी सारी जिन्दगी ऐसे एकाकीपन, अभावों, किसी भी तरह की खुशियों के बिना, मैत्रीपूर्ण प्यारे शब्दों के बिना पराये लोगों के यहां छोटे-छोटे कमरे किराये पर लेकर बिता दी है? ओह, मेरे दयालु मित्र, कितना अफ़सोस होता है मुझे आपके लिये! कम से कम अपने स्वास्थ्य पर तो दया कीजिये, मकार अलेक्सेयेविच! आपने लिखा है कि आपकी आंखों की ज्योति कम होती जा रही है, तो आप मोमबत्ती की रोशनी में लिखने का काम नहीं किया करें। क्या जरूरत है ऐसा करने की? आप बड़ी लगन से काम करते हैं, यह बात तो ऐसा करने के बिना ही शायद आपके संचालकों को मालूम होगी।

एक बार फिर आपकी मिन्नत करती हूं कि मुझ पर इतने पैसे खर्च नहीं किया करें। मैं जानती हूं कि आप मुझे प्यार करते हैं, मगर खुद भी तो अमीर नहीं हैं... आज तो मैं भी बहुत खुश-

खुश जागी थी। बहुत ही खिला हुआ था मेरा मन। फ़ेदोरा बहुत पहले से ही काम में जुटी हुई थी और वह मेरे लिये भी काम ले आई थी। मेरी खुशी की कुछ न पूछिये। मैं तो बस, रेशम खरीदने को गयी और फिर काम में लग गयी। सारी सुबह मेरा मन बहुत हल्का था, बहुत ही खिली-खिली रही मैं। अब फिर से मन में बुरे-बुरे ख्याल आने लगे हैं, दिल उदास-उदास और भारी-भारी हो गया है।

आह, क्या बनेगा मेरा, क्या बदा है मेरे भाग्य में! सबसे ज्यादा दुख की बात तो यह है कि मैं अंधेरे में भटक रही हूं, कि मेरा कोई भविष्य नहीं है, कि मैं यह अनुमान तक नहीं लगा सकती कि मेरे साथ क्या बीतनेवाली है। अतीत की ओर मुड़कर देखने से दिल दहलता है। वहां सब कुछ इतना अधिक दुख में डूबा हुआ है कि उसे याद करने भर से दिल टुकड़े-टुकड़े होने लगता है। उम्र भर उन दुष्ट-क्रूर लोगों की जान को रोती रहूंगी जिन्होंने मेरी जिन्दगी बरबाद कर डाली!

झुटपुटा होने लगा है। अब काम करने के लिये बैठना चाहिये। मैं आपको और भी बहुत कुछ लिखना चाहती थी, लेकिन वक्त नहीं है। ठीक समय पर काम तैयार करके देना चाहिये। जल्दी करनी चाहिये। खत लिखना निश्चय ही बहुत अच्छा है, ऊब कम हो जाती है। आप स्वयं ही कभी हमारे यहां क्यों नहीं आते? क्या कारण है, मकार अलेक्सेयेविच? अब तो आप बिल्कुल निकट ही रहते हैं और कभी-कभी फ़ुरसत भी रहती होगी। कृपया आइयेगा! मैंने आपकी तेरेज़ा को देखा। वह बड़ी बीमार-बीमार-सी लगती है; उस पर तरस आया; मैंने उसे बीस कोपेक दे दिये। अरे हां! मैं तो भूल ही गयी थी – अपने रहन-सहन के बारे में अवश्य ही और जितने अधिक विस्तार से सम्भव हो, लिखियेगा। आपके आस-पास कैसे लोग रहते हैं और उनके साथ आपकी कैसी पटरी बैठती है? मैं यह सब कुछ जानने को बहुत उत्सुक हूं। देखिये, अवश्य ही लिखियेगा! आज तो मैं जान-बूझकर परदा थोड़ा-सा उठा दूंगी। सोने के लिये बिस्तर पर जल्दी ही चले जाइये – कल मैंने आधी रात तक आपके कमरे में बत्ती जलती देखी थी। तो विदा। आज मन बहुत भारी है, ऊब और

उदासी अनुभव हो रही है! मतलब यह कि दिन ही ऐसा है! विदा।

आपकी

वरवारा दोब्रोसेलोवा।

८ अप्रैल

अतीव प्रिय वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

हां, मेरी प्यारी, मेरी रानी, आज का दिन तो मेरे लिये सचमुच बहुत बुरा रहा! अच्छी खिल्ली उड़ायी है आपने मुझ बूढ़े की, वरवारा अलेक्सेयेव्ना! वैसे, इसके लिये मैं ही दोषी हूं, पूरी तरह मेरा ही कुसूर है! सिर पर चार बाल लिये हुए इस बुढ़ापे में मुझे प्यार-मुहब्बत की आंख-मिचौनी नहीं खेलनी चाहिये थी... मैं तो यह भी कहूंगा, मेरी प्यारी, कि आदमी कभी-कभी बड़ी अजीब, बड़ी विचित्र हरकतें करता है। ओह, मेरे भगवान! कभी-कभी ऐसी ऊट-पटांग, ऐसी बेतुकी बातें कह देता है वह! इससे हासिल क्या होता है, इसका नतीजा क्या निकलता है? कुल मिलाकर कुछ भी नहीं और नतीजा ऐसा बुरा निकलता है कि भगवान बचाये! मैं बुरा नहीं मान रहा हूं, मेरी प्यारी, बल्कि मुझे सब कुछ याद करके बहुत अफ़सोस हो रहा है, इस बात का दुख हो रहा है कि मैंने आपको ऐसे लच्छेदार और मूर्खतापूर्ण ढंग से यह सब लिखा। और आज मैं अपने काम पर भी गया तो बहुत शान दिखाता, बहुत अकड़ता हुआ – दिल में खुशी हिलोरें ले रही थी। न जाने क्यों, आत्मा में पर्व का सा रंग छाया था, वह उल्लास से तरंगित थी। बड़े उत्साह से मैं काम करने बैठा – लेकिन बाद में इसका क्या नतीजा निकला! बाद में जैसे ही मैंने इर्द-गिर्द नज़र डाली तो सब कुछ पहले जैसा ही पाया – मनहूस और नीरस-सा। स्याही के वही धब्बे थे, वही मेज़ें और काग़ज़ थे और वही मैं था यानी जैसा था, वैसा ही रह गया था। तो फिर हवा में उड़ने की कौन-सी बात थी? किस कारण ऐसे उल्लास-आह्लाद की अनुभूति हुई थी? इस कारण कि सूरज निकल आया था और आकाश चमक उठा था! क्या इसीलिये ऐसा हुआ था? और फिर सुगन्ध-सुरभि की बात ही क्या थी, जबकि हमारी खिड़कियों के नीचे

आंगन में जाने क्या-क्या होता रहता है। मतलब यह कि सब कुछ मेरे दिमाग़ का पागलपन था। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि आदमी अपनी भावनाओं की भूल-भुलैयां में ही ऐसे भटक जाता है कि उसे किसी चीज़ की सुध-बुध नहीं रहती। यह अन्य किसी कारण से नहीं, बल्कि हृदय के आवश्यकता से अधिक, मूर्खतापूर्ण भावावेश के कारण ही होता है। मैं घर लौटा मानो अपने को धकेलता हुआ। अचानक सिर में ज़ोर का दर्द होने लगा। हमेशा ऐसे ही होता कि मुसीबत पर मुसीबत आती है। (कमर को भी शायद ठण्ड लग गयी।) मैं, मूर्ख तो वसन्त के आने की खुशी से फूला न समाया और ठण्डा कोट पहनकर काम पर चला गया। जहां तक मेरी भावनाओं का सम्बन्ध है तो उन्हें समझने में आपसे भूल हुई है, मेरी प्यारी! आपने उनका बिल्कुल दूसरा ही अर्थ निकाला है। पिता-तुल्य स्नेह, शुद्ध पैतृक भावनाओं ने ही मुझे प्रेरित किया था, वरवारा अलेक्सेयेव्ना। कारण कि आपके कटु, अनाथ जीवन में मेरा स्थान पिता के समान है। मैं दिल की गहराई से, सच्चे दिल से, एक सम्बन्धी के नाते आप से यह कह रहा हूं। चाहे कुछ भी क्यों न हो, मैं आपका सम्बन्धी हूं, बेशक बहुत ही दूर का, फिर भी सम्बन्धी तो हूं। और अब मैं आपका नज़दीकी रिश्तेदार और संरक्षक भी हो गया हूं। कारण कि निकट के सम्बन्धियों में जहां आपको संरक्षण और सुरक्षा मिलनी चाहिये थी, वहां आपके साथ विश्वासघात हुआ, आपको दुख-अपमान मिला। रही कविता की बात तो इस बुढ़ापे में कविता रचना मुझे शोभा नहीं देता, मेरी प्यारी। कविता बड़ी बेहूदा चीज़ है! कविता रचने के कारण तो स्कूल में छात्रों की पिटाई होती है... तो यह मामला है, मेरी प्यारी।

वरवारा अलेक्सेयेव्ना, मेरे आराम, चैन-शान्ति के बारे में आपने यह सब क्या लिखा है? मेरी जान, मैं न तो नकचढ़ा हूं और न ही बहुत ज़्यादा की मांग करनेवाला हूं। जैसे आजकल रह रहा हूं, उससे ज़्यादा अच्छी तरह कभी नहीं रहा। बुढ़ापे में नख़रे-टख़रे की क्या ज़रूरत है? खाने को भर-पेट मिल जाता है, पहनने-ओढ़ने को है, तो और क्या चाहिये मुझे! मैं कोई रईसज़ादा तो हूं नहीं! मेरे पिता भी रईस नहीं थे और मुझ से

थोड़ी आमदनी में सारे परिवार को पालते थे। मैं छुईमुई नहीं हूं। वैसे, अगर ईमानदारी की बात की जाये, तो मेरा पुराना घर कहीं बेहतर था, वहां ज़्यादा आराम था, मेरी रानी। मेरा यह कमरा भी बेशक अच्छा है, कुछ सीमा तक अधिक सुखद, कहा जा सकता है कि विविधता लिये हुए भी। मैं इसके खिलाफ़ कुछ भी नहीं कहना चाहता, लेकिन पुराने के लिये दुख तो है ही। हम बूढ़े, मेरा मतलब कि ढलती उम्र के हम लोग अपने प्रियजन की भांति पुरानी चीज़ों के आदी हो जाते हैं। कमरा तो वह भी छोटा-सा था, दीवारें थीं... सभी दीवारों जैसी दीवारें। लेकिन बात दीवारों की नहीं। ये तो तब की, उस वक़्त की यादें हैं जो मेरे मन को उदास कर देती हैं... अजीब मामला है – मन भारी हो जाता है, लेकिन यादें मानो प्यारी लगती हैं। इतना ही नहीं जो कुछ बुरा था, जिन चीज़ों से मन को कभी-कभी दुख होता था, यादों में वे भी अच्छी हो जाती हैं, मेरी कल्पना में बड़ा सुन्दर रूप धारण कर लेती हैं। बहुत शान्ति का जीवन बिताते थे हम, वारेन्का। मैं और घर की बुढ़िया मालकिन जो अब इस दुनिया में नहीं रही। इसी बुढ़िया को याद करके तो मैं अब उदास हो जाता हूं! बहुत भली औरत थी वह और किराया भी ज़्यादा नहीं लेती थी। वह लम्बी-लम्बी सलाइयों से रंग-बिरंगे कपड़े के टुकड़ों को जोड़कर रज़ाई बनाती रहती थी, बस, यही किया करती थी। हम साझे खर्च से एक ही मोमबत्ती जलाते थे और उसकी रोशनी में एक ही मेज़ पर बैठकर काम करते थे। उसकी एक पोती थी माशा। मुझे तो वह बच्ची की तरह ही याद है और अब शायद तेरह साल की होगी। बहुत ही शरारती थी, बड़ी हंसमुख, हमें लगातार हंसाती रहती थी। तो हम तीनों ऐसे ही रहते थे। जाड़े की लम्बी रातों में हम गोल मेज़ के गिर्द बैठ जाते, चाय पी लेते और फिर अपना-अपना काम करने लगते। माशा को ऊब महसूस न हो या फिर वह शरारतें न करने लगे, इसी चीज़ को ध्यान में रखते हुए बुढ़िया कोई क़िस्सा-कहानी सुनाने लगती। और क्या खूब क़िस्से होते थे वे! बच्चे की तो बात ही क्या, सब कुछ समझने-बूझनेवाले वयस्क को भी अपनी सुध-बुध न रहती। दूसरों की क्या कहूं, खुद मैं भी अपने पाइप के कश लगाते हुए कहानी सुनने में

ऐसा खो जाता कि काम का बिल्कुल ध्यान न रहता। और वह बच्ची, वह हमारी शरारती गुड़िया विचारों में डूब जाती; अपने गुलाबी गाल को हाथ पर टिकाये होती, उसका प्यारा-सा मुंह खुला होता। अगर कहानी कुछ डरावनी होती तो वह बुढ़िया के साथ सटती जाती, और ज़्यादा नज़दीक होती जाती। हमें उसे देखकर बड़ा मज़ा आता। पता भी न चलता और पूरी मोमबत्ती जल जाती। कभी-कभी बाहर बर्फ़ का ज़ोरदार अंधड़ होता, तूफ़ान शोर मचाता, मगर उधर हमारा ध्यान ही न जाता। अच्छा जीवन था वह हमारा, वारेन्का; और ऐसे ही हमने लगभग बीस साल साथ-साथ बिता दिये। अरे, मैं भी यह क्या राम कहानी ले बैठा! आपको शायद यह सब पसन्द नहीं होगा और मुझे भी इसे याद करके कुछ चैन नहीं मिलता, खास तौर पर अब। अंधेरा घिरता आ रहा है। तेरेज़ा किसी काम में उलझी हुई है, मेरे सिर में दर्द है और पीठ भी कुछ-कुछ दुख रही है। और विचार भी तो ऐसे अनूठे हैं मानो वे भी पीड़ित हों। आज मन बहुत उदास है, वारेन्का! यह आपने क्या लिखा है, मेरी प्यारी? कैसे मैं आपके यहां आ सकता हूं? मेरी जान, लोग क्या कहेंगे? आखिर तो मुझे आंगन लांघकर आना पड़ेगा, हमारे लोगों की नज़र पड़ेगी, वे पूछ-ताछ करने लगेंगे – सब अपनी-अपनी अटकल लगायेंगे, कानाफूसी होने लगेगी, मामले को दूसरा ही रंग दे दिया जायेगा। नहीं, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, यही ज़्यादा अच्छा होगा कि कल मैं आपको सन्ध्या की प्रार्थना में देखूं। यही समझदारी की बात होगी और हम दोनों को किसी तरह की हानि भी नहीं पहुंचेगी। मेरी गुड़िया, इस बात से नाराज़ नहीं हो जाइये कि मैंने आपको ऐसा पत्र लिखा है। इसे फिर से पढ़ने पर मैंने पाया कि यह बड़ा बेतुका-सा है। प्यारी वारेन्का, मैं बूढ़ा और बहुत कम पढ़ा-लिखा आदमी हूं। जवानी के दिनों में ही कुछ पढ़ा-पढ़ाया नहीं और अब अगर फिर से ऐसी कोशिश भी करूं तो दिमाग़ में कुछ नहीं घुसेगा। मेरी प्यारी, मैं यह स्वीकार करता हूं कि किसी भी चीज़ का वर्णन करने में मुझे कोई कमाल हासिल नहीं और अगर कल्पना की उड़ान भरकर कुछ दिलचस्प लिखना चाहता हूं तो वह निरी बकवास ही बनकर रह जाता है। हां, आज आपको तब खिड़की के पास देखा जब आप परदा गिरा

रही थीं। तो विदा, विदा, मेरी प्यारी, भगवान आपकी रक्षा करे! विदा, वरवारा अलेक्सेयेव्ना।

आपका सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

पुनश्च – मेरी रानी, मैं अब किसी के बारे में भी व्यंग्य नहीं लिख सकता। इस चीज़ के लिये बुढ़ा चुका हूं, मेरी लाड़ली वरवारा अलेक्सेयेव्ना, कि किसी पर छींटाकशी कर सकूं! और फिर लोग मुझ पर भी तो हंस सकते हैं। वह रूसी कहावत याद है न कि जो दूसरों के लिए गढ़ा खोदता है... उसमें खुद गिरता है।

९ अप्रैल

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

मेरे दयालु मित्र और शुभचिन्तक, मकार अलेक्सेयेविच, आपको शर्म आनी चाहिये ऐसी उल्टी-सीधी बातें सोचने और ऐसे अटपटे विचार मन में लाने के लिये। क्या सचमुच ही आप बुरा मान गये? ओह, मैं अक्सर सावधानी से काम नहीं लेती, लेकिन मैंने ऐसा बिल्कुल नहीं सोचा था कि मेरे शब्दों को आप ऐसे तीखे व्यंग्य-बाण मान लेंगे। विश्वास कीजिये कि आपकी उम्र और आपके चरित्र का मैं कभी मज़ाक उड़ाऊंगी, ऐसा हरगिज़ नहीं होगा। यह तो मेरी नादानी का नतीजा है और इससे भी बढ़कर भयानक ऊब का। ऊब का शिकार होकर आदमी क्या कुछ नहीं कर बैठता? मुझे तो ऐसे लगा था कि अपने पत्र में आप स्वयं भी कुछ हंसी-मज़ाक करना चाहते थे। जब मैंने यह अनुभव किया कि आप मुझ से अप्रसन्न हैं तो मेरा मन बहुत ही उदास हो गया। नहीं, मेरे दयालु मित्र और शुभचिन्तक, मेरे सम्बन्ध में यदि आप कृतघ्नता और संवेदनहीनता का सन्देह करेंगे, तो यह आपकी बहुत बड़ी भूल होगी। क्रूर लोगों, उनके अत्याचारों और घृणा से मुक्ति दिलाकर आपने मुझ पर जो उपकार किया है, मैं अपने हृदय में उसका मूल्य आंकना जानती हूं। मैं आजीवन भगवान से

आपके लिये प्रार्थना करती रहूंगी और अगर भगवान मेरी प्रार्थना को स्वीकार करेगा, उस पर कान देगा तो आप अवश्य ही सौभाग्य-शाली होंगे।

मेरी तबीयत आज बहुत ज़्यादा खराब है। मुझे बुखार है और रह-रहकर जूड़ी चढ़ आती है। फ़ेदोरा मेरे कारण बहुत चिन्तित है। हमारे यहां आने में शर्म महसूस करना तो बिल्कुल व्यर्थ की बात है, मकार अलेक्सेयेविच। दूसरों को इससे क्या लेना-देना है! हमारी जान-पहचान है और बात खत्म!.. विदा, मकार अलेक्सेयेविच। न तो लिखने को ही अब और कुछ है और न लिख ही सकती हूं – बहुत ही ज़्यादा खराब है तबीयत। एक बार फिर अनुरोध करती हूं कि मुझ से नाराज़ नहीं होइयेगा और यह विश्वास रखियेगा कि मैं हमेशा आपका आदर करती रहूंगी, आपके प्रति स्नेहमयी रहूंगी।

सादर आपकी
अनन्य और विनीत दासी
वरवारा दोब्रोसेलोवा।

१२ अप्रैल

मेरी प्रिय वरवारा अलेक्सेयेव्ना!

ओह, मेरी गुड़िया, क्या हो गया आपकी तबीयत को! हर बार ही आप मुझे इस तरह से घबरा देती हैं। अपने हर पत्र में आपको यह लिखता हूं कि आप अपना ध्यान रखा करें, अच्छी तरह से गर्म कपड़े पहना करें, बुरे मौसम में बाहर न जाया करें, हर बात में सावधानी से काम लिया करें। लेकिन आप, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, आप मेरी हर बात को सुनी-अनसुनी कर देती हैं। ओह, मेरी गुड़िया, मानो किसी बच्चे जैसी हैं! आप कमज़ोर हैं, तिनके की तरह कमज़ोर हैं, मुझे यह मालूम है। किसी तरफ़ से हवा का कोई झोंका आया कि आप बीमार पड़ीं। इसलिये सावधानी बरतनी चाहिये, खुद ही अपनी फ़िक्र करनी चाहिये, खतरे से बचना चाहिये और अपने मित्रों को चिन्ता और परेशानी से बचाना चाहिये।

मेरी प्यारी, आप मेरे रहन-सहन और मेरे इर्द-गिर्द की सभी चीज़ों के बारे में जानना चाहती है। मेरी जान, बड़ी खुशी से आपकी यह इच्छा जल्दी से पूरी करने का प्रयास कर रहा हूं। मेरी प्यारी, मैं शुरू से ही इसकी चर्चा आरम्भ करता हूं – ऐसे ही ज़्यादा अच्छा रहेगा। सबसे पहली बात तो यह है कि हमारे घर के प्रवेश-द्वार की सीढ़ी बिल्कुल सीधी है, काफ़ी आकर्षक भी, एकदम साफ़, रोशन, चौड़ी, लोहे और महोगनी की। लेकिन पिछवाड़े की सीढ़ी का ऐसा बुरा हाल है कि कुछ न पूछिये – वह टेढ़ी-मेढ़ी है, सीलन भरी है, गन्दी है, पैड़ियां टूटी हुई हैं और दीवारें इतनी गन्दी हैं कि उनका सहारा लेने पर हाथ चिपक जाता है। सीढ़ी के बीच की चौड़ी जगहों पर टूटे हुए सन्दूक, कुर्सियां और अलमारियां रखी हैं, चिथड़े टंगे हुए हैं, खिड़कियां टूटी हुई हैं। सभी तरह की गन्दगी, कूड़े-करकट, अंडों के छिलकों और मछलियों के टुकड़ों से भरे हुए टब रखे हैं। दुर्गन्ध फैली रहती है ... थोड़े में यही कि बहुत बुरी हालत है।

कमरे किस क्रम में हैं, यह मैं आपको लिख ही चुका हूं। यह सच है कि क्रम सुविधाजनक है, किन्तु कमरों में कुछ घुटन-सी ज़रूर अनुभव होती है। मेरा यह मतलब नहीं कि उनमें दुर्गन्ध है, लेकिन, यदि ऐसा कहा जा सके, हल्की सड़ांध, कुछ तेज़-मीठी-सी गन्ध आती है। पहली बार तो मन पर कुछ अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता, किन्तु इसमें कोई खास बात नहीं। हमारे यहां एक-दो मिनट बिताते ही इसकी अनुभूति जाती रहती है, क्योंकि खुद से भी यही दुर्गन्ध आने लगती है, कपड़ों और हाथों में, सब कुछ में यही गन्ध बस जाती है और आदमी इसका आदी हो जाता है। सिसकिन चिड़ियां यहां ज़िंदा नहीं रह पातीं। जहाज़ी अफ़सर ऐसी पांचवीं चिड़िया खरीदकर ला चुका है – हमारी हवा में वे ज़िंदा ही नहीं रह पातीं। हमारा रसोईघर बड़ा, चौड़ा और रोशन है। यह सच है कि सुबह को जब यहां मांस-मछली तली जाती है तो कुछ गन्ध फैल जाती है, लोग सभी जगह पानी गिरा देते हैं, गीला हो जाता है, लेकिन शाम को तो वहां स्वर्ग ही स्वर्ग होता है। रसोईघर में रस्सियों पर हमेशा पुराने कपड़े लटकते रहते हैं और चूंकि मेरा कमरा उसके पास है यानी रसोईघर से

सटा हुआ है तो इन कपड़ों की गन्ध मुझे कुछ परेशान करती है। मगर कोई बात नहीं – कुछ समय तक यहां रहने पर आदमी इसका आदी हो जाता है।

प्यारी वारेन्का, हमारे यहां सुबह से ही गुल-गपाड़ा शुरू हो जाता है – लोग बिस्तरों से उठकर इधर-उधर आने-जाने और खटखट-ठकठक करने लगते हैं। सभी उठ जाते हैं, जिन्हें काम पर जाना होता है, और वे भी जिन्हें काम पर नहीं जाना होता। सभी चाय पीने लगते हैं। समोवार अधिकतर मकान-मालकिन के हैं, उनकी संख्या काफ़ी नहीं और इसलिये हमें बारी के लिये क़तार में खड़े हो जाना पड़ता है। अगर कोई अपनी केतली लिये हुए बारी के बिना ही चाय ले लेता है तो उसकी वहां दुर्गति कर दी जाती है। पहली बार मैं भी ऐसा ही कर बैठा था, तो ... खैर, इसके बारे में क्या लिखूं! यहीं मेरी सबसे जान-पहचान हुई। सबसे पहले जहाज़ी अफ़सर से परिचय हुआ। वह दुराव-छिपाव के बिना साफ़ दिल का आदमी है। उसने मुझे अपने पिता, माता, बहन के बारे में, जिसकी तूला शहर के कर्मचारी से शादी हुई है, और क्रोंश्तादत नगर के सम्बन्ध में भी सब कुछ बता दिया। सभी तरह से मेरी सरपरस्ती करने का उसने वादा किया और तुरन्त अपने कमरे में चाय पीने के लिये आमन्त्रित कर लिया। मुझे वह उसी कमरे में मिला जहां हमारे यहां आम तौर पर जुआ चलता है। वहां मुझे चाय पिलायी गयी और साथ ही उन्होंने यह चाहा कि मैं भी अवश्य उनके साथ जुआ खेलूं। वे मेरा उल्लू बना रहे थे या नहीं, यह मैं नहीं जानता, किन्तु खुद वे सारी रात ताश खेलते रहे थे और जब मैं उनके कमरे में दाखिल हुआ, तब भी खेल जारी था। खड़िया, ताश के पत्ते और कमरे में ऐसा धुआं फैला हुआ था कि आंखें जलती थीं। मैं खेल में शामिल नहीं हुआ और मुझ से उसी समय यह कह दिया गया कि मैं फ़लसफ़ा बघारता हूं। बाद में किसी ने भी मुझ से बात नहीं की और सच तो यह है कि मुझे इससे खुशी ही हुई। अब मैं उनके यहां कभी नहीं जाऊंगा – उनके यहां तो जुआ, बिल्कुल जुआ खेला जाता है! साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाले कर्मचारी के यहां भी शामों को महफ़िलें जमती हैं। लेकिन यहां सब कुछ ढंग का,

सलीके और शराफ़त का होता है, हर चीज़ शिष्ट और ऊंचे स्तर की होती है।

हां, वारेन्का, मैं यह बताये बिना भी नहीं रह सकता कि हमारी मकान-मालकिन बहुत ही बुरे दिल की औरत है, पूरी डायन है। आपने तेरेज़ा को तो देखा है न। कैसी हालत बनी हुई है उस बेचारी की? नुचे-नुचाये और मरियल चूज़े जैसी है वह। घर में सिर्फ़ दो ही नौकर हैं – तेरेज़ा और फ़ाल्दोनी। शायद उसका कोई दूसरा नाम भी हो, लेकिन वह इस नाम से पुकारे जाने पर भी जवाब देता है। सभी उसे इसी तरह सम्बोधित करते हैं। लाल बाल, काना, चपटी नाकवाला और झगड़ालू। वह हमेशा तेरेज़ा से तू-तू मैं-मैं करता रहता है, बस, हाथापाई की नौबत ही आते-आते रह जाती है। कुल मिलाकर यह कि यहां रहने में मज़ा हो, ऐसा नहीं है... रात को सब एक ही वक़्त पर सो जायें और शान्ति हो जाये – ऐसा कभी नहीं होता। हर रात को ही कहीं न कहीं पर ताश का खेल या जुआ चलता रहता है। कभी-कभी तो ऐसी बातें भी होती हैं कि उनके बारे में लिखते हुए शर्म आती है। अब मैं तो थोड़ा बहुत आदी हो गया हूं, लेकिन हैरान होता हूं कि ऐसे गुल-गपाड़े में परिवारवाले लोग कैसे रह पाते हैं। ग़रीब लोगों के एक परिवार ने हमारी मकान-मालकिन के यहां एक कमरा किराये पर ले रखा है। अन्य कमरों के पास नहीं, बल्कि दूसरी ओर, कोने में, दूसरों से अलग-थलग। वे बहुत ही शान्त लोग हैं! कभी किसी को उनकी आवाज़ तक सुनाई नहीं देती। वे एक ही कमरे को बीच में घेरकर एकसाथ रहते हैं। वह कोई बेरोज़-गार कर्मचारी है, लगभग सात साल पहले किसी कारण उसे काम से अलग कर दिया गया था। उसका कुलनाम गोर्श्कोव है – पके-पके बाल, नाटा-सा। वह ऐसा मैला-कुचैला और फटा-पुराना कोट पहने रहता है कि देखकर दिल को कुछ होने लगता है, मेरे कोट से कहीं गया-बीता! बड़ा ही दयनीय, हड्डियों का ढांचा-सा (दालान में कभी-कभी उससे मेरी भेंट हो जाती है), उसकी टांगें कांपती रहती हैं, हाथ कांपते रहते हैं, सिर कांपता रहता है, किसी बिमारी के कारण या किसी दूसरी वजह से, भगवान जाने। बड़ा भीरु है वह, सभी से डरता-घबराता है, दूसरों से बच-बचकर चलता है।

कभी-कभी झेंपता तो मैं भी हूं, मगर उसकी हालत मुझ से भी बुरी है। उसकी बीवी और तीन बच्चे हैं। बड़ा बेटा बिल्कुल बाप पर गया है, वैसा ही दुबला-पतला है। बीवी कभी सुन्दर रही होगी, यह तो अभी भी पता चलता है। वह बेचारी चिथड़े पहने घूमती रहती है। मैंने सुना है कि इनके सिर पर किराये का क़र्ज़ चढ़ गया है। मकान-मालकिन इनके साथ बुरे ढंग से पेश आती है। यह भी सुना है मैंने कि ख़ुद गोर्श्कोव के साथ कोई बुरी बात हो गयी जिसकी वजह से ही उसे नौकरी से हाथ धोना पड़ा है... उसके ख़िलाफ़ कोई क़ानूनी कार्रवाई हो रही है, या उस पर कोई मुक़दमा चल रहा है, या फिर... – सचाई क्या है, में आपको ठीक से नहीं बता सकता। हे भगवान, ये लोग कितने ग़रीब हैं, कितने ग़रीब हैं! उनके कमरे में हमेशा ऐसी ख़ामोशी छाई रहती है मानो वहां कोई रहता ही न हो। बच्चों तक की आवाज़ सुनाई नहीं देती। कभी ऐसा भी नहीं होता कि बच्चे उछलते-कूदते, हंसते-हंसाते दिखाई दें। यह तो बुरा लक्षण है। एक शाम को ऐसा संयोग हुआ कि मैं उनके कमरे के पास से गुज़रा। उस वक़्त बड़ी असाधारण-सी नीरवता थी घर में। अचानक मुझे किसी की सिसकी सुनाई दी, फिर फुसफुसाहट, इसके बाद फिर से सिसकी, मानो कोई रो रहा हो, लेकिन ऐसे धीमे-धीमे, ऐसे दयनीय ढंग से कि मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े होकर रह गया। इसके बाद इन ग़रीबों का ख़्याल ही रात भर मेरे दिमाग़ में ऐसे चक्कर काटता रहा कि ढंग से सो भी नहीं पाया।

तो विदा, मेरी अनमोल रानी, वारेन्का! जैसे भी मुझ से सम्भव हुआ, मैंने आपको सब कुछ लिख दिया। आज मैं दिन भर केवल आपके बारे में ही सोचता रहा। मेरी प्यारी, आपके लिये मेरा दिल टीसता रहा। मैं तो यह जानता हूं, मेरी गुड़िया, कि आपके पास कोई गर्म कोट नहीं है। ओह, पीटर्सबर्ग का यह वसन्त, बर्फ़ के साथ बारिश और तेज़ हवायें – ये तो हमारा मरण हैं, वारेन्का! ऐसे मौसम से तो भगवान बचाये! मेरी मैना, मेरे लिखने के ढंग के लिये मुझे भला-बुरा नहीं कहिये। मेरे पास शैली नाम की कोई चीज़ नहीं, वारेन्का, कोई शैली नहीं। काश, ऐसा कुछ होता! जो कुछ दिमाग़ में आ जाता है, लिख देता हूं, ताकि

किसी तरह से आपका कुछ मन बहल सके। अगर मैं कुछ पढ़ा-लिखा होता तब तो बात दूसरी होती। लेकिन मेरी पढ़ाई क्या थी? दो कौड़ी की।

आपका आजीवन सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

२५ अप्रैल

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

आज अपनी चचेरी बहन, साशा से मेरी भेंट हुई! हे भगवान! वह बेचारी भी बरबाद हो जायेगी! कहीं से उड़ती-उड़ाती यह ख़बर मुझ तक पहुंची है कि आन्ना फ़्योदोरोव्ना मेरे बारे में अभी भी पूछ-ताछ कर रही है। मुझे लगता है कि वह कभी भी मेरा पिंड नहीं छोड़ेगी। उसका कहना है कि वह मुझे क्षमा कर देना चाहती है, बीती बातों को भुला देना चाहती है और अवश्य खुद ही मुझ से मिलने आयेगी। वह यह भी कहती है कि आपकी तो मुझ से कोई रिश्तेदारी है ही नहीं, कि वह मेरी बहुत नज़दीकी रिश्तेदार है, कि हमारे पारिवारिक जीवन में दख़ल देने का आपको बिल्कुल कोई अधिकार नहीं है, कि आपकी दया और आपके टुकड़ों पर मेरा निर्वाह करना बड़ी भद्दी और शर्म की बात है... उसका यह भी कहना है कि मैं उसके उपकारों को भूल गयी हूं, कि उसने तो मुझे और मेरी मां को शायद भूखों मरने से बचाया है, कि उसने ढाई साल से ज़्यादा अरसे तक अपने ख़र्च पर हमें खिलाया-पिलाया है और इसके अलावा क़र्ज़ भी माफ़ किया है। वह तो मेरी मां को भी बख़्शने को तैयार नहीं। काश, मेरी बेचारी मां को यह मालूम होता कि इन लोगों ने मेरे साथ कैसा सलूक किया है! भगवान साक्षी है इस सबका!.. आन्ना फ़्योदोरोव्ना का कहना है कि अपनी मूर्खता के कारण मैं अपने सुख-सौभाग्य की रक्षा नहीं कर पायी, कि खुद उसी ने मेरे लिये सुख के द्वार खोले थे, कि उसका कोई कुसूर नहीं है, कि मैंने स्वयं ही सुख-सौभाग्य खो दिया और शायद मैं उसे पाना ही नहीं चाहती

थी। हे भगवान, आप ही बतायें कि कौन दोषी है! वह कहती है कि श्रीमान बीकोव ने जो किया, वह बिल्कुल ठीक था और हर किसी के साथ तो वह शादी नहीं कर सकता जो... ख़ैर, लिखा भी क्या जाये! ऐसा झूठ सुनकर दिल ख़ून के आंसू रोता है, मकार अलेक्सेयेविच! मैं बता नहीं सकती कि अब मेरे साथ क्या बीत रही है। मुझे झुरझुरी महसूस होती है, मैं रोती और सिसकती हूं। आपको यह पत्र लिखने में मुझे दो घण्टे लग गये। मेरा ख़्याल था कि अगर और कुछ नहीं, तो वह कम से कम मेरे सामने अपना क़ुसूर तो मान लेगी, लेकिन उसने अब यह रवैया अपनाया है! भगवान के लिये आप परेशान नहीं होइयेगा, मेरे मित्र, मेरे एकमात्र शुभचिन्तक! फ़ेदोरा हमेशा तिल का ताड़ बना देती है – मैं बीमार नहीं हूं। कल जब मैं मां की क़ब्र पर प्रार्थना करने वोल्कोवो गयी तो मुझे थोड़ी ठण्ड लग गयी। आप मेरे साथ क्यों नहीं गये, मैंने इतना अनुरोध किया था आप से। ओह, मेरी बेचारी, बेचारी मां! काश, तुम क़ब्र से बाहर आ सकतीं, काश, तुम्हें मालूम होता, काश तुमने देखा होता कि इन लोगों ने मेरे साथ क्या किया है!..

व० दो०

२० मई

मेरी मैना, वारेन्का,

आपके लिये थोड़े से अंगूर भेज रहा हूं, मेरी प्यारी। कहते हैं कि ये सेहत के लिये अच्छे होते हैं और डाक्टर लोग भी प्यास बुझाने के लिये इनकी सिफ़ारिश करते हैं। प्यास बुझाने के लिये ही सही। मेरी गुड़िया, कुछ दिन पहले आपने मीठी रोटी के लिये इच्छा प्रकट की थी, वह भी अब भेज रहा हूं। मेरी प्यारी, आपको भूख लगती है या नहीं – यही सबसे बड़ी बात है। वैसे, भगवान को धन्यवाद कि सब कुछ ठीक हो गया, संकट टल गया और हमारे बुरे दिनों का भी पूरी तरह से अन्त होने जा रहा है। इसके लिये बहुत-बहुत शुक्र है भगवान का! रही किताबें, तो अभी तक उन्हें मैं कहीं भी हासिल नहीं कर पा रहा हूं। सुना है कि हमारे

यहां एक अच्छी किताब है, बढ़िया ढंग से लिखी हुई। कहते हैं कि पढ़ने लायक़ है। मैंने तो नहीं पढ़ी, मगर यहां दूसरे लोग उसकी बड़ी तारीफ़ करते हैं। मैंने अपने लिये मांगी है, उन्होंने ला देने का वादा किया है। लेकिन आप उसे पढ़ेंगी भी? इस मामले में आप टेढ़ी खीर हैं, आपकी पसंद पूरी करना मुश्किल काम है। मैं तो आपको बहुत अच्छी तरह से जानता हूं, मेरी रानी। आप तो शायद कविताएं ही चाहती हैं, दर्द और प्यार में डूबी हुई। मैं कविताएं भी हासिल कर दूंगा, सब कुछ हासिल कर दूंगा। सुना है कि यहां हाथ से लिखी हुई कविताओं की एक कॉपी है।

मैं तो यहां खूब मजे में हूं। मेरी रानी, कृपया मेरे बारे में आप कोई चिन्ता नहीं करें। फ़ेदोरा ने मेरे संबंध में आप से जो कुछ कहा है, वह बिल्कुल बकवास है। आप उससे कह दीजिये, ज़रूर कह दीजिये कि वह बड़ी बेहयाई से भूठ बोलती है!.. मैंने अपनी नयी वर्दी नहीं बेची। आप खुद ही बताइये, किसलिये, किसलिये मैं उसे बेचूंगा? सुना है कि मुझे चांदी के चालीस रूबल बोनस के तौर पर मिलनेवाले हैं। तो किसलिये मैं अपनी पोशाक बेचूंगा? मेरी बुलबुल, आप बिल्कुल चिन्ता न करें – वह तो मन से बातें गढ़ती है, वह फ़ेदोरा तो। सब कुछ ठीक हो जायेगा, मेरी गुड़िया! बस, आप स्वस्थ हो जायें, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! भगवान के लिये स्वस्थ हो जायें, मुझ बूढ़े को नहीं तड़पायें। यह किसने कहा आप से कि मैं दुबला हो गया हूं? यह भी भूठी, बिल्कुल भूठी बात है! मैं पूरी तरह स्वस्थ हूं, इतना मोटा हो गया हूं कि खुद पर शर्म आती है। खूब खाता-पीता हूं और एकदम मज़े में हूं। काश, आप स्वस्थ हो जायें! तो विदा, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! आपकी उंगलियों को चूमता हूं।

आपका आजीवन, सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

पुनश्च – ओह, मेरी रानी, आपने सचमुच यह फिर से क्या लिखना शुरू कर दिया है? कैसी बेतुकी बातें करती हैं आप! कैसे मैं आपके यहां अक्सर आ सकता हूं, मेरी प्यारी, कैसे? मैं आप से पूछ रहा हूं। रात के अंधेरे का

फ़ायदा उठाकर ही। लेकिन अब तो रातें भी लगभग नहीं होतीं – ऐसा वक़्त है आजकल। मैं तो यों भी, मेरी रानी, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, आपकी बीमारी के दौरान, उस वक़्त जब आप सरसाम की हालत में थीं, लगातार आपके पास ही बैठा रहा। मैं नहीं जानता कि कैसे मैं यह सब कर पाया। हां, बाद में मैंने जाना बन्द कर दिया, क्योंकि लोग सुन-गुन लेने लगे थे, पूछ-ताछ करने लगे थे। यहां तो लोगों ने यों ही भूठी बात बना डाली है। तेरेज़ा पर मुझे भरोसा है, वह बातूनी नहीं है। किन्तु आप स्वयं ही सोचें, मेरी प्यारी, कि अगर हमारे बारे में बात फैल गयी तो इसका क्या नतीजा होगा? लोग क्या सोचेंगे और कैसी-कैसी बातें करेंगे? तो आप अपना दिल कड़ा करें, मेरी रानी, और स्वस्थ होने तक धीरज से काम लें। तब हम घर के बाहर ही कहीं मिल लिया करेंगे।

१ जून

मेरे अतीव कृपालु मकार अलेक्सेयेविच,

मेरे लिये आपकी चिन्ता, दौड़-धूप और प्यार-स्नेह के बदले में मैं आपके लिये कोई सुखद, कोई प्यारी बात करने को बहुत उत्सुक हूं। इसीलिये आखिर मैंने अपनी अलमारी को छान मारने और अपनी कॉपी को ढूंढ़ लेने का निर्णय किया जिसे आपके पास भेज रही हूं। इसे मैंने अपने जीवन के सुखद दिनों में लिखना आरम्भ किया था। आप मेरे बीते जीवन, मेरी मां, पोक्रोव्स्की, आन्ना फ़्योदोरोव्ना के यहां गुज़री मेरी ज़िंदगी और कुछ ही समय पहले की मेरी मुसीबतों के बारे में अक्सर बड़ी जिज्ञासा से पूछते रहे हैं और इस कॉपी को पढ़ने के लिये बहुत बेक़रार थे जिसमें भगवान जाने क्यों, मैंने अपने जीवन के कुछ क्षणों को लिख डाला है। मुझे विश्वास है कि मेरी यह कॉपी पाकर आपको बड़ी प्रसन्नता होगी। इसे फिर से पढ़ने पर मेरा मन तो उदास हो गया था। मुझे लगता है कि इस कॉपी में लिखे गये अन्तिम वाक्य के बाद के समय से मेरी उम्र दुगुनी हो गयी है। यह सब कुछ भिन्न-भिन्न समय पर लिखा गया है। विदा, मकार अलेक्सेयेविच! अब बहुत

ज्यादा ऊब महसूस होती है और उनींदापन अक्सर बुरी तरह सताता है। स्वस्थ हो रही हूं, उदासी अनुभव करती हूं।

व० द०

१

मेरी उम्र उस वक़्त सिर्फ़ चौदह साल थी, जब पिता जी चल बसे। मेरा बचपन मेरे जीवन का सबसे सुखद समय था। उसका आरम्भ यहां बल्कि दूर-दराज़ के प्रान्तीय प्रदेश में हुआ। मेरे पिता जी त० गुबेर्नियां में प्रिंस प० की बहुत बड़ी जमींदारी के कारिन्दा थे। हम प्रिंस के एक गांव में रहते थे, बड़ा शान्त, एकान्त और सुखद जीवन बिताते थे... बचपन में मैं बहुत चंचल थी। बस, दिन भर खेतों, वन-झुरमुटों और बाग-बगीचों में ही दौड़ती-भागती रहती थी। कोई भी मेरी चिन्ता नहीं करता था। पिता जी हमेशा अपने काम-काज में उलझे रहते थे, मां को घर-गृहस्थी के कामों से फ़ुरसत नहीं थी। मुझे कुछ पढ़ाया-सिखाया नहीं गया और मेरे लिये यह खुशी की बात थी। ऐसा होता कि सुबह से ही मैं पोखर पर, वन-कुंजों में अथवा घास या अनाज काटनेवालों के पास भाग जाती और इस बात की ज़रा भी परवाह न करती कि सूरज आग बरसा रहा है, कि मैं घर-बस्ती से बहुत दूर न जाने कहां जा निकली हूं, कि झाड़ियों से तन पर जहां-तहां खरोंचें आ गयी हैं और कपड़े तार-तार हो गये हैं। घर लौटने पर मुझे डांटा-डपटा जाता, लेकिन मेरी बला से।

मुझे लगता है कि अगर उस गांव में, उसी एक जगह पर मेरी सारी ज़िन्दगी बीत जाती तो मुझे बहुत ही खुशी होती। लेकिन मुझे बचपन में ही अपना वह प्यारा गांव छोड़ना पड़ा। मैं केवल बारह साल की थी जब हम पीटर्सबर्ग आ गये। कैसे भारी मन से हमने गांव से रवाना होने की तैयारी की थी, मेरे दिल में अभी तक उसकी बड़ी दुखद याद बनी हुई है! जो कुछ मुझे इतना प्रिय था, उस सब से विदा लेते हुए मैं कैसे रोयी थी! मुझे स्मरण है कि पिता जी के गले में बांहें डालकर मैंने रोते हुए उनकी मिन्नत की थी कि हम गांव में कुछ दिन और रुक जायें। पिता जी मुझ पर

बिगड़ उठे थे। मां ने रोते हुए कहा था कि हमें जाना ही होगा, कि काम-काज ऐसा करने के लिये मजबूर करते हैं। हुआ यह था कि बूढ़े प्रिंस प० इस दुनिया से कूच कर गये थे और उनके वारिसों ने पिता जी को नौकरी से अलग कर दिया था। पिता जी के पास जो कुछ थोड़ी-सी पूंजी थी, वह उन्होंने पीटर्सबर्ग के कुछ लोगों के पास कारोबार में लगा रखी थी। अपनी हालत को सुधार पाने की उम्मीद करते हुए उन्हें यह लगा कि उनका पीटर्सबर्ग में होना ज़रूरी है। मुझे यह सारी बातें बाद में अपनी मां से ही मालूम हुईं। हम यहां पीटर्सबर्ग-स्तोरोना हलके के एक मकान में आ बसे और पिता जी के सदा के लिये आंख मूंद लेने तक यहीं रहे।

कितनी अधिक मुश्किल हुई थी मुझे नयी ज़िन्दगी की आदी होने में! हम पतझर में पीटर्सबर्ग पहुंचे। जिस दिन हमने गांव छोड़ा, वहां धूप खिली हुई थी, मौसम बड़ा प्यारा और सुहावना था। खेती-बाड़ी के काम-काज समाप्त हो चुके थे, खलिहानों में अनाज के ऊंचे-ऊंचे ढेर लगे थे और पक्षियों के झुण्ड चहचहा तथा शोर मचा रहे थे। सब कुछ खिला-खिला और खुशी में डूबा-डूबा था। लेकिन जब हम यहां शहर में दाखिल हुए तो बारिश हो रही थी, पतझर की बेहूदा ठण्डक थी, बेहद गन्दा मौसम था, सभी जगह कीचड़ था और हमारे सामने नये, अपरिचित, ग़ैरमिलनसार, नाखुश और झल्लाये हुए लोगों की भीड़ थी! जैसे-कैसे हमने गृहस्थी जमा ली। मुझे याद है कि नया घर बसाने के सिलसिले में हमें कितनी अधिक दौड़-धूप और झंझट का सामना करना पड़ा था। पिता जी अक्सर घर पर नहीं रहते थे, मां को दम लेने की फ़ुरसत नहीं होती थी – मुझे तो बिल्कुल ही भुला दिया गया था। नये घर में बितायी गयी पहली रात के बाद जब मैं सुबह उठी तो मन बहुत उदास था। हमारे घर की खिड़कियां एक पीली-सी बाड़ की ओर खुलती थीं। सड़क पर हमेशा कीचड़ रहता था। कोई इक्का-दुक्का राहगीर ही उधर से गुज़रता और जो लोग गुज़रते, वे कपड़ों से लदे-लदाये होते, क्योंकि सभी को बेहद ठण्डक लगती थी।

हमारे घर में दिन भर उदासी छाई रहती। हमारे लगभग कोई सम्बन्धी, कोई घनिष्ठ मित्र-परिचित नहीं थे। आन्ना फ्योदोरोव्ना से मेरे पिता जी की अनबन थी। (पिता जी उसके कुछ

क़र्जदार थे।) काम-काज के सिलसिले में लोग अक्सर हमारे यहां आते। वे आम तौर पर झगड़ते, शोर मचाते, चीखते-चिल्लाते। इन लोगों के जाने के बाद पिता जी हर बार ही बुरी तरह से खीझ और झल्ला उठते, कभी-कभी तो त्योरी चढ़ाये हुए घण्टों तक एक कोने से दूसरे कोने तक कमरे में आते-जाते रहते और किसी से एक शब्द तक न कहते। ऐसे मौक़ों पर मां उनसे बात करने की हिम्मत न कर पाती और चुप्पी साधे रहती। मैं किताब लेकर किसी कोने में दुबककर बैठ जाती, एकदम ख़ामोश और दम साधे हुए, यहां तक कि हिलते-डुलते हुए भी घबराती।

हमारे पीटर्सबर्ग में आ बसने के तीन महीने बाद मुझे छात्रा-वास-स्कूल में दाखिल कर दिया गया। ओह, कितनी उदास हुई थी मैं पराये लोगों के बीच शुरू में! सब कुछ इतना नीरस, इतना अप्रिय था! शिक्षिकायें चीखती-चिल्लाती थीं, लड़कियां बुरी तरह मज़ाक उड़ातीं और मैं थी बिल्कुल गंवार। बड़ी सख्ती, बड़ी कड़ाई थी! हर चीज़ के लिये समय नियत था, भोजन एकसाथ किया जाता था, अध्यापकगण बड़े नीरस थे। इन सभी बातों ने शुरू में मुझे व्यथित, बहुत ही दुखी किया। मुझे तो वहां नींद ही नहीं आती थी। लम्बी, उदासी भरी और ठण्डी रातों में लगातार रोती ही रहती थी। शामों को सभी लड़कियां अपने पाठ दोहरातीं, उन्हें याद करतीं। मैं भी वाक्यों और शब्दों को रटती, हिलते-डुलते हुए भी घबराती, लेकिन मेरा मन भटक जाता घर के वातावरण में। मुझे याद आने लगती पिता जी की, मां और बूढ़ी आया तथा उसकी कहानियों की... ओह, कितना भारी हो जाता था मन! घर की मामूली से मामूली चीज़ की याद करके भी मन खिल उठता। रह-रहकर यही ख्याल आता — कितना मज़ा होता इस वक़्त घर पर! हमारे छोटे-से कमरे में मैं स्वजनों के साथ समोवार के पास बैठी होती — सब कुछ अपना, जाना-पहचाना और सुखद होता। मन में ख्याल आता कि कैसे मैंने अपनी मां को ख़ूब कसकर बड़े प्यार से बांहों में भर लिया होता। ऐसे विचारों में खोई रहती, खोई रहती, आंसुओं को मन ही मन पीती हुई उदासी से रोने लगती और शब्द दिमाग़ में न घुसते। अगले दिन का पाठ न याद होता और सारी सारी

रात अध्यापिकाओं, बड़ी अध्यापिका और लड़कियों के ही सपने आते रहते। नींद में सारी रात पाठ रटती रहती, लेकिन अगले दिन उसे सुना न पाती। मुझे घुटनों के बल खड़े होने की सज़ा दी जाती, एक बार ही खाना दिया जाता। मैं बड़ी उदास-उदास, दुख में डूबी-डूबी-सी रहती। शुरू में सभी लड़कियां भी मेरी खिल्ली उड़ातीं, मुझे चिढ़ातीं, जब हम भोजन करने या चाय पीने के लिये क़तार में जाती तो चिकोटियां काटतीं, कोई न कोई बात ढूंढ़कर शिक्षिका से मेरी शिकायत करतीं। लेकिन शनिवार की शाम को जब आया मुझे घर लिवाने आती तो मानो मुझे स्वर्ग मिल जाता। मैं ख़ुशी से दीवानी-सी होकर अपनी बूढ़ी आया को गले लगाती। वह मुझे ख़ूब अच्छी तरह से पहनाती-ओढ़ाती, घर जाते वक़्त रास्ते में बमुश्किल मेरा साथ दे पाती और मैं लगातार कुछ कहती, कुछ न कुछ बताती-सुनाती जाती। घर पहुंचती तो ख़ुशी से ठुमकती और छलछलाती हुई माता-पिता से ऐसे गले मिलती मानो दस बरस की जुदाई के बाद घर लौटी होऊं। सभी तरह की बातें, पूछ-ताछ होने लगती, हाल-चाल सुनाये जाते। मैं सभी का अभिवादन करती, हंसती, ठहाके लगाती, इधर-उधर भागती-दौड़ती, उछलती-कूदती। पिता जी के साथ पढ़ाई, अध्यापिकाओं, फ़्रांसीसी भाषा और लोमोंड के व्याकरण आदि की गम्भीर बातचीत होती। कितने ख़ुश, कितने उल्लास से परिपूर्ण होते थे हम सब। इन क्षणों की याद करके मेरा मन अब भी खिल उठता है। मैं पिता जी को ख़ुश करने के लिये अपनी पूरी कोशिश करती, पूरा ज़ोर लगाकर पढ़ती। मुझ से यह छिपा नहीं था कि उनके पास जो कुछ था, वह सब मुझ पर ख़र्च करते थे और जाने किस तरह से अपना काम चलाते थे। वह दिन प्रति दिन चिड़चिड़े, खीझे-खीझे और खिन्न-खिन्न-से होते जा रहे थे। उनका स्वभाव बिल्कुल ख़राब हो गया था। उनके काम-काज की पटरी नहीं बैठ रही थी, वह क़र्ज़ों के बोझ तले दब गये थे। पिता जी कहीं बिगाड़ न उठें, मां इसलिये रोने, मुंह से एक शब्द तक निकालने से डरती थी। वह रोगी-सी हो गयी थी, लगातार दुबलाती जा रही थी और उसे बुरे ढंग से खांसी आने लगी थी। कभी-कभी जब मैं छात्रावास-स्कूल

से घर आती तो सभी के चेहरे मुरझाये-मुरझाये-से होते, मां छिप-छिपकर आंसू बहाती, पिता जी गुस्से से भुनभुनाते। सभी तरह के ताने-बोलियां, कटु व्यंग्य शुरू हो जाते। पिता जी कहना शुरू करते कि मैं उन्हें किसी भी तरह की खुशी, कोई सन्तोष नहीं दे रही हूं, कि मेरे कारण वे दाने-दाने को मोहताज होते जा रहे हैं और मैं अभी तक फ्रांसीसी नहीं बोल पाती हूं। थोड़े में यह कि सारी असफलतायें, सारे दुर्भाग्य मेरे और मां के मत्थे मढ़े जाते। बेचारी मां को ऐसे संतप्त करना कहां का न्याय था? उसे देखकर तो मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े होने लगता था। उसके गाल पिचक गये थे, आंखें धंस गयी थीं और चेहरे का रंग तपेदिक के रोगी की तरह पीला हो गया था। सबसे ज़्यादा तो मेरी शामत आती थी। बहुत ही मामूली-सी बात से किस्सा शुरू होता और फिर भगवान जाने, कैसे बात का बतंगड़, तिल का ताड़ बन जाता। अक्सर मैं यह समझ ही न पाती कि किसलिये हंगामा हो रहा है। किस किस बात का रोना न रोया जाता! फ्रांसीसी भाषा का, इस बात का कि मैं एकदम उल्लू हूं, कि हमारी बड़ी अध्यापिका बिल्कुल ग़ैरज़िम्मेदार है, मूर्ख औरत है, हमारे चाल-चलन की फ़िक्र नहीं करती; कि पिता जी को अभी तक नौकरी नहीं मिली, कि लोमोंड का व्याकरण बिल्कुल बेहूदा है और ज़ापोल्स्की का व्याकरण उससे कहीं बेहतर है; कि मुझ पर व्यर्थ पैसा बरबाद किया गया है, कि मैं बड़ी पत्थरदिल, सर्वथा भावनाहीन हूं। संक्षेप में यह कि मैं बेचारी तो वाक्य और शब्दों को रटने के लिये अपनी जान लड़ाती और मैं ही सब दुख-मुसीबतों के लिये दोषी और ज़िम्मेदार ठहराई जाती! उसका यह अर्थ नहीं है कि पिता जी मुझे प्यार नहीं करते थे। नहीं, मुझ में और मां में उनके प्राण बसते थे। यह तो उनका ऐसा स्वभाव ही था।

सभी तरह की चिन्ताओं, दुख-क्लेशों और असफलताओं ने पिता जी को बुरी तरह से निचोड़ डाला। वह चिड़चिड़े और शक्की मिजाज के हो गये। उनकी निराशा अक्सर चरम सीमा पर पहुंच जाती थी, उन्होंने अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना छोड़ दिया, उन्हें ठण्ड लग गयी और अचानक बीमार हो गये, कुछ

दिनों तक चारपाई थामे रहे और ऐसे अप्रत्याशित तथा इतनी जल्दी ही चल बसे कि कुछ अरसे तक हम इस धक्के, इस आघात से सम्भल ही नहीं पायीं। मां चेतनाहीन-सी रहती थी और इस ख्याल से कि वह पागल हो जायेगी, मुझे बड़ी घबराहट होती थी, मेरा दिल बहुत डरता था। पिता जी के आंख मूंदने की देर थी कि मानो ज़मीन फाड़कर उनके लेनदारों की भीड़ हमारे सामने आ खड़ी हुई। हमारे पास जो कुछ भी था, हमने सब दे दिया। हमारे पीटर्सबर्ग आने के छः महीने बाद पिता जी ने जो छोटा-सा घर खरीदा था, हमने वह भी बेच दिया। मुझे मालूम नहीं कि बाक़ी सब कुछ कैसे निबटाया गया, लेकिन हम बेघर, असहाय और बेसहारा हो गयीं। मां भयानक रोग में घुलती जा रही थी, हमें रोटियों के लाले पड़े थे, हाथ-पल्ले कुछ भी नहीं था और हमारे सामने मुसीबत और तबाही था। मैं तब सिर्फ़ चौदह साल की थी। उन्हीं दिनों आन्ना फ़्योदोरोव्ना हमारे यहां आई। वह लगातार यह कहती रही कि अमीर ज़मींदारिन है और हमारी रिश्तेदारिन भी। मां ने भी यह कहा कि वह हमारी रिश्तेदारिन तो है, मगर बहुत दूर की। पिता जी के जीवनकाल में वह कभी भी हमारे यहां नहीं आयी थी। वह आंसू बहाती हुई आयी, उसने यह कहा कि हमारे भाग्य में उसकी बहुत गहरी दिलचस्पी है, हमारे दुर्भाग्य, हमारी विकट स्थिति पर उसने बड़ी सहानुभूति प्रकट की और यह भी कहा कि पिता जी स्वयं ही ऐसी हालत के लिये जिम्मेदार थे, कि वह अपनी हैसियत से बाहर रहते थे, उनका दिमाग़ आसमान पर पहुंचा हुआ था और अपने पर ज़रूरत से ज़्यादा भरोसा करते थे। आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने हमारे अधिक निकट होने की इच्छा प्रकट की, यह कहा कि हमें बीती बातों को भूल जाना और गुस्से को थक देना चाहिये। मां ने जब यह उत्तर दिया कि उसके प्रति उसके दिल में कभी कोई गुस्सा-गिला नहीं था तो उसने आंसू बहाये, मां को अपने साथ गिरजे में ले गयी और प्यारे रिश्तेदार के लिये (पिता जी के बारे में उसने इन्हीं शब्दों का उपयोग किया) प्रार्थना करवाई। इसके बाद उसने बड़े अच्छे ढंग से मां के साथ सुलह कर ली।

आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने हमारी दयनीय स्थिति, यतीमी, ला-

चारी और मजबूरी की हालत को गहरे रंगों में प्रस्तुत करके, उनके बारे में लम्बी भूमिकायें बांधकर हमें अपने यहां चलकर रहने को आमन्त्रित किया। मां ने ऐसा करने के लिये उसे धन्यवाद दिया, किन्तु बहुत समय तक उसके लिये राज़ी नहीं हो सकी। मगर चूंकि और कोई चारा नहीं था, दूसरा कोई रास्ता ही नहीं था, इसलिये आखिर उसने आन्ना फ़्योदोरोव्ना से यह कहा कि उसके प्रस्ताव को हम साभार स्वीकार करती हैं। वह सुबह मुझे आज भी कितनी अच्छी तरह से याद है जब हम पीटर्सबर्ग-स्तोरोना से वसीलियेव्स्की द्वीप के इलाके में गयी थीं। पतझर की निर्मल, ठण्डी और सुहानी सुबह थी। मां के आंसू नहीं रुकते थे, मैं बेहद उदास थी, मन टुकड़े-टुकड़े हुआ जाता था, किसी अज्ञात-अस्पष्ट वेदना, भयावह बेचैनी से दिल बहुत भारी था...बहुत बुरा वक़्त था वह।

. . . .

. . . .

२

शुरू-शुरू में, जब तक हम दोनों यानी मैं और मेरी मां आन्ना फ़्योदोरोव्ना के यहां रहने की आदी नहीं हो गयीं, हम परायापन-सा महसूस करती थीं, हमें बुरा-बुरा लगता रहा। आन्ना फ़्योदो-रोव्ना छठी सड़क पर निजी घर में रहती थी। उसके घर में रहने के पांच कमरे थे। तीन कमरों में आन्ना फ़्योदोरोव्ना और मेरी चचेरी बहन साशा रहती थीं। साशा बचपन में ही पूरी तरह से यतीम हो गयी थी और आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने ही उसे पाला-पोसा था। चौथे कमरे में हम दोनों रहती थीं और आखिरी पांचवें कमरे में पोक्रोव्स्की नाम का एक ग़रीब विद्यार्थी रहता था। आन्ना फ़्योदोरोव्ना बड़े ठाठ से रहती थी, आशा से कहीं अधिक अमीरी दिखाती थी। किन्तु उसकी आय का स्रोत भी उसी तरह रहस्यपूर्ण था, जैसे उसका काम-काज। वह हमेशा दौड़-धूप करती रहती, हमेशा किसी काम में उलझी नज़र आती और दिन में कई बार घर से बाहर आती-जाती। लेकिन वह क्या करती थी, किसलिये और किस बारे में चिन्तित रहती थी, मैं इसका किसी प्रकार भी

अनुमान नहीं लगा पाती थी। तरह-तरह के और बहुत अधिक लोगों से उसकी जान-पहचान थी। उसके यहां अक्सर लोग आते, भगवान जाने वे कौन लोग होते थे, हमेशा किसी काम से और पल-दो पल रुककर चले जाते। जैसे ही दरवाज़े की घण्टी बजती, मां हमेशा मुझे हमारे कमरे में ले जाती। आन्ना फ़्योदोरोव्ना ऐसा करने के लिये मां पर बेहद बिगड़ उठती और हमेशा यह राग अलापती कि हम बहुत घमण्डी हैं, अपनी औक़ात से ज़्यादा घमण्डी हैं, कि हममें घमण्ड करने की कोई बात भी तो होती और वह घण्टों तक यही कहती जाती। घमण्ड के बारे में उसके इन ताने-बोलियों को तब मैं नहीं समझती थी। मैं तो केवल अभी यह जान पायी हूं या कम से कम भांप पायी हूं कि मां आन्ना फ़्योदोरोव्ना के यहां जाकर रहने से क्यों हिचकिचाती थी। बहुत ही बददिमाग़ औरत है वह, हमें लगातार सताती रहती थी। यह बात मेरे लिये अभी तक राज़ बनी हुई है कि उसने किसलिये हमें अपने यहां रहने को आमन्त्रित किया था? शुरू में वह हमारे प्रति काफ़ी स्नेह दिखती रही, किन्तु बाद में, जैसे ही यह समझ गयी कि हम बिल्कुल लाचार हैं और हमारे लिये कोई दूसरा ठौर-ठिकाना नहीं है, उसने हमें अपना असली रूप दिखाना आरम्भ किया। बाद में वह मेरे प्रति तो काफ़ी स्नेहमयी हो गयी, चापलूसी की हद तक स्नेहमयी। लेकिन शुरू में मां के साथ-साथ मुझे भी उसके ज़ुल्म सहने पड़े। वह हर वक़्त हमें उलाहने देती रहती, अपने उपकारों का गाना गाती। पराये लोगों के सामने हमें ग़रीब रिश्तेदारों, बेसहारा यतीमों-अनाथों के रूप में पेश करती जिन्हें उसने दया करके, ईसाई धर्म की प्रेम-भावना के अनुरूप अपने यहां शरण दे दी थी। भोजन के समय वह हमारे एक-एक और पर कड़ी नज़र रखती और अगर हम न खाती तो भी हंगामा करती। कहती कि हम नाक चढ़ाती हैं, कि हमें ख़ास पकवान चाहिये, कि भगवान ने उसे जो कुछ दिया है, वह तो उसी से खुश है, कि हमारे पास अगर अपना कुछ बेहतर होता, तब भी कोई बात थी। पिता जी के बारे में लगातार भला-बुरा कहती रहती, ताने देती कि वह दूसरों से बढ़-चढ़कर रहना चाहता था, कि इसका बुरा नतीजा निकला, कि बीवी और बेटी को बेघर-बार

छोड़ गया और अगर परोपकारी, ईसाई धर्म को माननेवाली और सहानुभूति रखनेवाली रिश्तेदार न मिल जाती तो भगवान जाने, कहां-कहां की ठोकरें खानी पड़तीं, भूखों मरना पड़ता। क्या-क्या नहीं कहती थी वह! उसकी बातें सुनकर दिल तो दुखता ही था, उससे ज़्यादा नफ़रत भी होती थी। मां हर वक़्त रोती रहती, उसकी सेहत हर दिन बिगड़ती जा रही थी, वह स्पष्टतः घुलती जा रही थी। इसके साथ ही साथ हम सुबह से रात तक हाड़तोड़ मेहनत भी करती थीं, दूसरों के कपड़े सीती थीं, मगर आन्ना फ़्योदोरोव्ना को यह भी बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। वह लगातार यही कहती रहती कि उसका घर दर्ज़ीख़ाना नहीं है। किन्तु हमारे लिये अपने कपड़े-लत्तों, अप्रत्याशित आ जानेवाले खर्चों और ऐसी ज़रूरतों को पूरा करने को कुछ पैसा जुटाना ज़रूरी था। हमें अपने ही पैसे की ज़रूरत थी। हम यह आशा करती हुई भी कुछ पैसा जमा करती थीं कि कुछ अरसे बाद किसी दूसरी जगह पर जाकर रहने लगेंगी। मां काम कर-करके अपनी सेहत का बिल्कुल सत्यानास करती जा रही थी, हर दिन अधिकाधिक दुर्बल होती जाती थी। बीमारी स्पष्ट रूप से घुन की तरह उसे खाये जा रही थी, उसे मौत के मुंह में धकेलती जा रही थी। मैं यह सब कुछ देख रही थी, सब कुछ अनुभव कर रही थी, सह रही थी। यह सब कुछ मेरी आंखों के सामने हो रहा था!

दिन पर दिन गुज़रते जाते थे और हर नया दिन पिछले दिन की तरह ही नीरस होता था। हम ऐसे चुप-चुप रहतीं मानो शहर में न रहती हों। आन्ना फ़्योदोरोव्ना को जैसे-जैसे यह यक़ीन होता गया कि उसने हम पर अपनी धाक जमा ली है, वैसे-वैसे वह भी शान्त होती चली गयी। वैसे हमारे मन में तो उसका विरोध करने का कभी ख़्याल भी नहीं आया था। बीच के बरामदे की बदौलत हमारा कमरा उसके कमरों से दूर था और जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूं, हमारी बग़ल में पोक्रोव्स्की रहता था। वह साशा को फ़्रांसीसी और जर्मन भाषा, इतिहास तथा भूगोल – आन्ना फ़्योदोरोव्ना के शब्दों में सारी विद्यायें पढ़ाता-सिखाता था और इसके बदले में उसे रहने का कमरा तथा रोटी मुफ़्त मिलती थी। साशा बहुत समझदार, यद्यपि चंचल और शरारती लड़की थी।

उस वक़्त उसकी उम्र कोई तेरह साल थी। आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने मेरी मां से कहा कि अगर मैं भी साशा के साथ पढ़ने लगूं तो कुछ बुरा नहीं होगा, ख़ास तौर पर जबकि छात्रावास-स्कूल में मेरी पढ़ाई अधूरी ही रह गयी थी। मां ने ख़ुशी से यह बात मान ली और साशा के साथ-साथ मैं भी साल भर पोक्रोव्स्की के पास पढ़ती रही।

पोक्रोव्स्की ग़रीब, बेहद ग़रीब नौजवान था। उसकी सेहत इतनी अच्छी नहीं थी कि वह नियमित रूप से पढ़ने जा सकता और उसे हमारे यहां आदत के तौर पर ही विद्यार्थी कहा जाता था। वह बड़ी सीधी-सादी, शान्त और ख़ामोशी की ज़िन्दगी बिताता था और हमारे कमरे में तो उसकी आवाज़ तक सुनाई नहीं देती थी। देखने में वह बड़ा अजीब-सा था, ऐसे अटपटे ढंग से चलता था, अभिवादन करते हुए ऐसे विचित्र ढंग से झुकता था और बात करता था कि शुरू में तो उसे देखकर मुझे हंसी आये बिना नहीं रहती थी। वह जब हमें पढ़ाता तो साशा उस वक़्त तो ख़ास तौर पर उसका लगातार मज़ाक़ उड़ाती रहती। और बातों के अलावा वह चिड़चिड़े मिज़ाज का भी था, लगातार खीझता-झल्लाता था, छोटी-छोटी बातों पर आपे से बाहर हो जाता था, हम पर चीख़ता-चिल्लाता था, हमारी शिकायतें करता था और अक्सर पाठ को ख़त्म किये बिना ही भुनभुनाता हुआ अपने कमरे में चला जाता था। अपने कमरे में वह सारा-सारा दिन किताबों से मत्थापच्ची करता रहता था। उसके पास ढेरों किताबें थीं और सभी बड़ी क़ीमती और दुर्लभ। वह कहीं और भी पढ़ाता था, वहां से भी उसे कुछ पैसे मिलते थे और जैसे ही उसके पास कुछ रक़म जमा हो जाती, वह उससे तुरन्त किताबें ख़रीद लेता।

कुछ समय बीतने पर मैं उसे अधिक अच्छी तरह और घनिष्ठ रूप में जान-समझ गयी। वह बहुत ही दयालु, आदर के योग्य और जिन लोगों से मिलने का मुझे अवसर मिला, उनमें सबसे अच्छा था। मां उसकी बड़ी इज़्ज़त करती थी। बाद में तो वही, हां मां को छोड़कर, मेरा सबसे अच्छा मित्र रहा।

इतनी बड़ी लड़की होने पर भी शुरू में तो मैं भी साशा के साथ मिलकर शरारतें करती। कभी-कभी हम घण्टों तक ऐसी

तरकीबें सोचती रहती कि उसे किस तरह इतना अधिक चिढ़ाया जाये कि उसके सब्र का प्याला छलक उठे। वह बड़े हास्यास्पद ढंग से झल्लाता-भुनभुनाता था और हमें इसमें बड़ा मज़ा आता था। (अब इसकी याद करके भी शर्म आती है।) एक दिन हमने उसे इतना अधिक तंग किया कि उसकी आंखों में आंसू आते-आते रह गये और मैंने उसे स्पष्ट रूप से यह फुसफुसाते सुना – "कैसी ज़ालिम लड़कियां हैं।" मुझे अचानक झेंप महसूस हुई, शर्म आई, मेरे दिल को दुख हुआ और उसपर दया आई। मुझे याद है कि मैं शर्म से पानी-पानी हो गयी थी और लगभग रुआंसी होकर मैंने उससे यह अनुरोध किया था कि वह शान्त हो जाये, हमारी बेहूदा शरारतों का बुरा न माने। लेकिन उसने किताब बन्द कर दी और पाठ समाप्त किये बिना ही अपने कमरे में चला गया। पश्चाताप से दिन भर मैं बेहद बेचैन रही। यह ख्याल मुझे बुरी तरह सताता रहा कि हम छोकरियों ने अपनी हरकतों से उसे रुला दिया। इसका यही मतलब था कि हम उसकी आंखें भर आने की राह देख रही थीं, हम यही चाहती थीं, आख़िर हमने उसके सब्र का प्याला छलका दिया था, उस बेचारे, क़िस्मत के मारे को हमने जबर्दस्ती उसके दुर्भाग्य की याद दिला दी थी! दुख, उदासी और संताप-पश्चाताप से मुझे रात भर नींद नहीं आई। सुनने में आता है कि पश्चाताप से मन का बोझ हल्का हो जाता है। नहीं, बात इसके उलट है। कह नहीं सकती कि मेरे खेद के साथ मेरे स्वाभिमान की भावना कैसे घुल-मिल गयी। मैं यह नहीं चाहती थी कि वह मुझे बच्ची समझे। तब मैं पन्द्रह साल की हो चुकी थी।

उस दिन से मैं तरह-तरह की हज़ारों योजनायें बनाते हुए अपनी कल्पना को खूब परेशान करने लगी कि कैसे पोक्रोव्स्की को अपने बारे में उसकी राय बदलने को मजबूर कर सकूं। लेकिन मैं झेंपू और संकोची थी। अपनी उस समय की स्थिति में मैं कुछ भी तय नहीं कर पायी और केवल सपने देखने तक ही सीमित रही (भगवान जानता है कि कैसे सपने थे वे!)। मैंने सिर्फ़ शरारतों में साशा का साथ देना बन्द कर दिया। पोक्रोव्स्की अब हम पर नहीं बिगड़ता था। किन्तु मेरे स्वाभिमान की तुष्टि के लिये यह काफी नहीं था।

अपने जीवन में मुझे जिन लोगों से मिलने का अवसर मिला, उनमें एक सबसे अजीब, सबसे अनूठे और दयनीय व्यक्ति के बारे में मैं अब कुछ शब्द कहूंगी। अपनी डायरी के इस स्थल पर मैं इसीलिये उसकी चर्चा करना चाहती हूं कि इसके पहले मैंने उसकी तरफ़ कभी कोई ध्यान नहीं दिया था और अब पोक्रोव्स्की से सम्बन्धित हर चीज़ में अचानक मेरी गहरी दिलचस्पी हो गयी!

हमारे घर में कभी-कभी एक बूढ़ा आता था, गन्दा-मन्दा, फटेहाल, नाटा-सा, पके बलोंवाला, बड़ा अटपटा और ऐसा अजीब कि बयान से बाहर। पहली नज़र में ऐसा लगता था मानो वह किसी कारण शर्मा रहा है, उसे खुद अपने से झेंप महसूस हो रही है। इसी वजह से वह ऐसे सिमटता-सिकुड़ता, ऐसी उल्टी-सीधी हरकतें और आचार-व्यवहार करता, मुंह बनाता कि लगभग भूल-चूक के बिना यह निष्कर्ष निकाला जा सकता था कि इस आदमी के कुछ पेच ढीले हैं। कभी-कभी वह आता, ड्योढ़ी में शीशे के दरवाज़े के पास खड़ा रहता और भीतर दाखिल होने की हिम्मत न कर पाता। मैं, साशा या उन नौकरों में से कोई, जिसे वह अपने प्रति दयालु मानता था, जब पास से गुज़रता तो वह हाथ हिलाकर हमें अपनी ओर बुलाता, तरह-तरह के संकेत करता और जब हम सिर से इशारा करके या पुकार कर उसे यह स्पष्ट कर देते कि घर में कोई पराया आदमी नहीं है और वह भीतर आ सकता है, तब बूढ़ा धीरे से दरवाज़ा खोलता, मुस्कराता, खुशी से हाथ मलता और पंजों के बल चलता हुआ पोक्रोव्स्की के कमरे की तरफ़ चल देता। यह पोक्रोव्स्की का पिता था।

बाद में मुझे इस बेचारे बूढ़े के जीवन के बारे में सब कुछ सविस्तार मालूम हुआ। कभी वह किसी दफ़्तर में बाबू था, उसमें बिल्कुल योग्यता नहीं थी और इसलिये वह सबसे छोटे, सबसे तुच्छ पद पर काम करता था। जब उसकी पहली पत्नी यानी पोक्रोव्स्की की मां का देहान्त हो गया तो उसने फिर से शादी करने का फ़ैसला किया। नयी बीवी के आते ही घर में सब कुछ उल्टा-सीधा हो गया, उसने सबके नाक में दम कर दिया, सबको अपने इशारों पर नचाना शुरू किया। पोक्रोव्स्की तब दस साल का बच्चा था और सौतेली मां को फूटी आंखों नहीं सुहाता था। लेकिन

क़िस्मत ने लड़के का साथ दिया। बीकोव नाम के एक जमींदार ने, जो कर्मचारी पोक्रोव्स्की को जानता था और कभी उसका उपकारी सहायक रह चुका था, लड़के को अपने संरक्षण में ले लिया और उसे किसी स्कूल में दाखिल करवा दिया। उसने लड़के में इसलिये दिलचस्पी ली कि उसकी दिवंगत मां को जानता था जिस पर उसकी युवावस्था में आन्ना फ्योदोरोव्ना की कृपादृष्टि रही थी और उसी ने दफ़्तर के बाबू पोक्रोव्स्की से उसकी शादी करवा दी थी। आन्ना फ़्योदोरोव्ना के मित्र और घनिष्ठ परिचित श्रीमान बीकोव ने उपकार की भावना से प्रेरित होकर दुलहन को दहेज के रूप में पांच हज़ार रूबल भी दिये थे। यह रक़म कहां गयी – कोई नहीं जानता था। मुझे यह सब आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने ही बताया था। विद्यार्थी पोक्रोव्स्की को अपनी पारिवारिक परिस्थितियों की चर्चा करना कभी पसन्द नहीं था। लोग कहते हैं कि पोक्रोव्स्की की मां ख़ासी सुन्दर थी और मुझे यह बात बड़ी अजीब-सी लगती है कि उसकी ऐसे मामूली आदमी से ऐसी बेढंगी शादी क्यों हुई ... शादी के कोई चार साल बाद, जवानी के दिनों में ही वह इस दुनिया से कूच कर गयी।

स्कूल के बाद किशोर पोक्रोव्स्की ने हाई-स्कूल की पढ़ाई ख़त्म की और फिर विश्वविद्यालय में दाखिल हुआ। श्रीमान बीकोव अक्सर पीटर्सबर्ग आते रहते थे और यहां भी वह पोक्रोव्स्की की सरपरस्ती करते रहे। सेहत बिगड़ जाने के कारण पोक्रोव्स्की विश्वविद्यालय में अपनी पढ़ाई जारी नहीं रख सका। श्रीमान बीकोव ने आन्ना फ़्योदोरोव्ना से उसका परिचय करवा दिया, ख़ुद उसकी सिफ़ारिश की और इस तरह मुफ़्त रिहायश और रोटी के बदले में उसे साशा को सभी विद्यायें पढ़ाने के लिये रख लिया गया।

बीवी के अत्याचारों से तंग आकर बूढ़ा पोक्रोव्स्की शराब पीने की बुरी आदत का शिकार हो गया और लगभग हमेशा ही नशे में धुत्त रहता। बीवी उसे मारती-पीटती, रसोईघर में बन्द रखती और उसने आख़िर उसकी ऐसी हालत कर दी कि वह मार-पीट और बुरे सलूक का आदी हो गया और किसी तरह का शिकवा-शिकायत भी न करता। वह ख़ास बूढ़ा तो नहीं था, मगर बुरी आदत की वजह से उसका दिमाग़ लगभग चल निकला था।

बेटे के प्रति असीम प्यार ही उसकी अच्छी, मानवीय भावनाओं का एकमात्र लक्षण था। लोगों का कहना था कि नौजवान पोक्रोव्स्की हू-ब-हू अपनी मां की तस्वीर था। क्या पहली, उदार बीवी की मधुर स्मृति ने ही इस गये-बीते बूढ़े के दिल में अपने बेटे के लिये ऐसा असीम प्यार पैदा कर दिया था? बेटे के सिवा बूढ़ा और किसी की चर्चा ही नहीं करता था और नियमित रूप से हफ़्ते में दो बार उससे मिलने आता था। इससे अधिक बार आने की वह हिम्मत नहीं कर पाता था, क्योंकि जवान पोक्रोव्स्की को बाप का आना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। युवा पोक्रोव्स्की की सभी त्रुटियों में पिता के प्रति अनादर भाव निश्चय ही पहली और सबसे बड़ी त्रुटि था। वैसे, कभी-कभी बूढ़ा भी बर्दाश्त के बाहर होता था। सबसे पहले तो यह कि वह अत्यधिक जिज्ञासु था, दूसरे यह कि बहुत ही तुच्छ और बेमतलब की बातों के बारे में अपने ढेरों सवालों और पूछ-ताछ से वह बेटे की पढ़ाई में बाधा डालता और फिर कई बार नशे की हालत में भी आता। बेटा पिता को थोड़ा-बहुत सुधारने की कोशिश करता, हर चीज़ में जिज्ञासा प्रकट करने और लगातार बोलते जाने की उसकी आदतों को दूर करने का प्रयत्न करता जिसका नतीजा यह हुआ कि वह बेटे की हर बात को देववाणी मानने लगा और उसकी अनुमति के बिना मुंह तक खोलने की हिम्मत न करता।

बेचारा बूढ़ा अपने पेतेन्का (वह स्नेहवश बेटे को इसी नाम से बुलाता था) को देख-देखकर निहाल होते, उसकी तारीफ़ करते न थकता। जब वह बेटे से मिलने आता, तो हमेशा उसके चेहरे पर घबराहट होती, वह सहमा-सहमा-सा रहता। शायद इसका कारण इस बात की अस्पष्टता होती थी कि बेटे का रवैया कैसा होगा। आम तौर पर वह देर तक भीतर जाने से झिझकता रहता और अगर मैं संयोग से वहां आ जाती, तो वह बीस मिनट तक मुझ से कुछ इस तरह के सवाल करता रहता – पेतेन्का कैसा है? उसकी तबीयत अच्छी है न? उसका मूड कैसा है, वह कोई बहुत ज़रूरी काम तो नहीं कर रहा है? इस वक़्त वह किस काम में व्यस्त है? लिख रहा है या सोच-विचार में डूबा हुआ है? जब मैं उसे काफ़ी तसल्ली दे देती, उसकी हिम्मत बढ़ा देती, तब वह

भीतर जाने का साहस जुटाता और बहुत धीरे-धीरे, बड़ी सावधानी से दरवाज़ा खोलता, पहले ज़रा सिर बढ़ाकर भीतर झांकता और अगर यह देखता कि बेटा बुरा नहीं मान रहा है और उसने सिर के इशारे से भीतर आने की अनुमति भी दे दी है तो दबे पांव कमरे में दाखिल होता, अपना कोट और टोप उतारता जो हमेशा मुड़ा-मुड़ाया, सुराखों और फटे किनारोंवाला होता, खूंटी पर टांगता और यह सब वह बहुत ही धीरे-धीरे, आवाज किये बिना करता। इसके बाद वह सावधानी से कुर्सी पर बैठ जाता, बेटे पर नज़र टिकाये हुए बड़े ध्यान से उसकी सारी गति-विधियों को देखता और यह अनुमान लगाने का यत्न करता कि पेतेन्का का मूड कैसा है। अगर बेटे का मूड अच्छा न होता और बूढ़ा यह भांप जाता तो फ़ौरन उठ खड़ा होता और कहता – "पेतेन्का, मैं तो यों ही एक मिनट को आ गया था। कहीं दूर गया था, इधर से गुज़र रहा था और इसलिये ज़रा दम लेने को चला आया।" इतना कहकर वह चुपचाप, बड़े नम्रभाव से अपना कोट और टोप ले लेता, धीरे से दरवाज़ा खोलता, मन मारकर मुस्कराता ताकि दिल को लगी ठेस को बेटे के सामने प्रकट न होने दे, और चला जाता।

लेकिन जब कभी ऐसा होता कि बेटा उसका अच्छे ढंग से स्वागत करता तो उसकी खुशी का कोई ठिकाना न रहता। उसके चेहरे, हाव-भाव और गति-विधि में खुशी छलछलाती दिखाई देती। अगर बेटा उससे बात करने लगता तो बूढ़ा हमेशा अपनी कुर्सी से तनिक उठकर खड़ा हो जाता, बहुत धीमे, दास-भाव से, लगभग श्रद्धापूर्वक उत्तर देता और हमेशा चुने हुए, पर वास्तव में बहुत ही मज़ाक़िया वाक्यों का उपयोग करने का प्रयास करता। किन्तु वाक्य-पटुता में उसे कमाल हासिल नहीं था, हमेशा वह गड़बड़ा और ऐसे सहम जाता कि समझ न पाता कि अपने हाथों का क्या करे, खुद को क्या करे और इसके बाद देर तक फुसफुसाते हुए अपने जवाब को ऐसे दोहराता रहता मानो उसे ठीक करने की कोशिश कर रहा हो। अगर वह ढंग से जवाब दे पाता तो खिल उठता, अपनी वास्कट, टाई और फ़ाक-कोट को ठीक-ठाक करता और उसमें आत्मगरिमा की भावना झलकने लगती। कभी-कभी तो वह यहां तक रंग में आ जाता, इस हद तक उसकी हिम्मत

बढ़ जाती कि धीरे से कुर्सी से उठता, किताबों के ताकों के नज़दीक जाता, कोई किताब हाथ में ले लेता और चाहे कोई भी किताब क्यों न होती, वहीं खड़ा रहकर उसे पढ़ने लगता। वह आत्म-विश्वास और लापरवाही का ऐसा ढोंग करता मानो बेटे की किताबों को हमेशा इसी तरह से हाथ में ले सकता हो, कि बेटे का स्नेह उसके लिये कोई नयी बात नहीं है। लेकिन मुझे एक बार यह देखने का मौक़ा हुआ कि जब बेटे ने उससे किताबें न छेड़ने का अनुरोध किया तो वह बेचारा कैसे डर गया था। वह घबरा गया, उसने किताब वापस रखने की उतावली की, उसे उल्टा रख दिया, इसके बाद उसे ठीक करने की कोशिश में अटपटे ढंग से टिका दिया, मुस्कराया, शर्म से लाल हो गया और समझ नहीं पा रहा था कि अपनी इस भूल को सुधारने के लिये क्या करे। बेटा अपनी सलाहों, सुझावों से बाप की बुरी आदतों को दूर करने की कोशिश करता और कोई तीनेक बार उसके शराब पिये बिना आने पर उसे पच्चीस, पचास या इससे अधिक कोपेक इनाम के तौर पर भेंट करता। कभी उसे जूते, टाई या वास्कट खरीद देता। बूढ़ा नये कपड़े पहनकर बड़ी शान दिखाता। कभी-कभी वह हमारे कमरे में आता। मेरे और साशा के लिये वह मुर्ग़े की शक्लवाली मीठी रोटियां और सेब लाता और हमारे साथ पेतेन्का के बारे में ही बातें करता रहता। हमसे यह अनुरोध करता कि हम ध्यान से पढ़ें, पेतेन्का की बात मानें, यह कहता कि वह बहुत भला, आदर्श बेटा है, इतना ही नहीं, विद्वान बेटा है। यह कहकर वह ऐसे मज़ाक़िया ढंग से हमारी ओर अपनी बायीं आंख मिचमिचाता, ऐसे मनोरंजक ढंग से मुंह बनाता कि हमारी हंसी छूट जाती और हम खूब खिलखिलाकर उस पर हंसतीं। मां उसे बहुत चाहती थी। लेकिन बूढ़ा आन्ना फ़्योदोरोव्ना से बेहद नफ़रत करता था, यद्यपि उसकी उपस्थिति में उसकी बोलती बन्द हो जाती थी।

शीघ्र ही मैंने पोक्रोव्स्की से पढ़ना छोड़ दिया। मुझे वह पह-ले की तरह साशा के समान ही बच्ची, शरारती लड़की मानता था। मेरे दिल को इससे बहुत दुख होता था, क्योंकि मैंने अपने पहले के बुरे आचरण के धब्बे को धोने की हर चन्द कोशिश की थी। लेकिन मेरी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। इससे

मेरी खीझ अधिकाधिक बढ़ती जाती थी। पाठ के बाद मैंने पोक्रो-व्स्की से कभी कोई बात नहीं की थी और कर भी नहीं सकती थी। मैं लज्जारुण हो जाती, बुरी तरह घबरा जाती और फिर दुखी मन से कहीं अलग बैठकर रोती रहती।

अगर एक अजीब परिस्थिति से हम निकट न आ जाते, तो कह नहीं सकती इस सबका क्या अन्त होता। एक शाम को मां जब आन्ना फ्योदोरोव्ना के पास बैठी हुई थी, मैं दबे पांव पोक्रोव्स्की के कमरे में चली गयी। मुझे मालूम था कि वह घर पर नहीं है और मेरे लिये यह कहना मुश्किल है कि मेरे दिमाग में उसके कमरे में जाने का विचार क्यों आया। बेशक हम एक साल से ज्यादा अरसे से एक-दूसरे की बग़ल में रह रहे थे, फिर भी मैं कभी उसके कमरे में नहीं गयी थी। मेरा दिल इतने जोर से, इस तरह धड़क रहा था कि मानो निकलकर बाहर आ गिरेगा। मैंने विशेष जिज्ञासा से कमरे में सभी ओर नज़र दौड़ाई। कमरा बहुत मामूली-सा था, उसमें बड़ी गड़बड़ थी। दीवारों पर किताबों से भरे हुए पांच लंबे ताक टंगे थे। मेज और कुर्सियों पर तरह-तरह के काग़ज़ पड़े थे। सभी जगह किताबें थीं, काग़ज़ थे। मेरे दिमाग में एक अजीब-सा ख्याल आया और साथ ही अवसाद की एक अप्रिय-सी भावना मुझ पर हावी हो गयी। मुझे लगा कि मेरा मैत्री-भाव, मेरा प्यार करनेवाला दिल उसके लिये काफ़ी नहीं। वह था विद्वान, मैं थी बुद्धू, कुछ भी तो नहीं जानती थी, मैंने तो एक भी कि-ताब नहीं पढ़ी थी... मैंने किताबों के बोझ तले दबे जा रहे लम्बे ताकों को ईर्ष्या की दृष्टि से देखा। मुझ पर खीझ, पीड़ा और पागलपलन का भूत-सा सवार हो गया। मेरे मन में तीव्र चाह पैदा हुई और मैंने इसी समय यह तय कर लिया कि उसकी सभी, एक-एक किताब को जितनी भी जल्दी हो सके, पढ़ डालूंगी। कह नहीं सकती, लेकिन शायद मैंने यही सोचा कि जो कुछ वह जानता था, उस सबकी जानकारी पा लेने पर मैं उसकी दोस्ती के अधिक लायक़ हो जाऊंगी। मैं पहले ताक की ओर लपकी, कुछ भी सोचे-समझे बिना, वहां रुके बिना मैंने हाथ में आनेवाली पहली ही किताब उठा ली जो पुरानी थी और जिस पर धूल जमी हुई थी तथा घबराहट से लाल, ज़र्द होती, उत्तेजना तथा डर से

कांपती हुई चोरी की इस किताब को अपने कमरे में ले आई। मैंने तय किया कि इसे मां के सो जाने पर धीमी रोशनी में रात को पढ़ूंगी।

लेकिन मुझे कितनी अधिक निराशा हुई, जब मैंने अपने कमरे में आकर किताब को जल्दी-जल्दी उलट-पलटकर देखा और पाया कि वह बेहद पुरानी, लगभग सड़ी तथा दीमक की खाई हुई लातीनी भाषा की किताब है। मैं तुरन्त लौटी। मैं किताब को ताक पर रखने ही जा रही थी कि बरामदे में आवाज़ और पैरों की आहट सुनाई दी। मैंने जल्दी की, बेहद उतावली की, मगर यह मनहूस किताब दूसरी किताबों के बीच ऐसे ठूंसकर, दबाकर रखी हुई थी कि जब मैंने उसे निकाला तो बाकी किताबें अपने आप ही एक-दूसरी से ऐसे सट गयीं कि अब उसके लिये जगह नहीं रही थी। किसी तरह इस किताब को उनके बीच घुसेड़ दूं, मुझमें इतना ज़ोर नहीं था। फिर भी मैंने अपनी पूरी ताक़त लगाकर किताबों को एक तरफ़ को हटाया। जंग लगी कील जिसके सहारे ताक टंगा हुआ था और जो शायद टूटने के लिये इसी क्षण की प्रतीक्षा कर रही थी, टूट गयी। ताक उसी सिरे से नीचे जा गिरा। किताबें भरभरा कर फ़र्श पर बिखर गयीं। इसी वक़्त दरवाज़ा खुला और पोक्रोव्स्की कमरे में दाखिल हुआ।

यहां यह बताना ज़रूरी है कि कोई उसकी इस दुनिया में दखल दे, यह तो वह बर्दाश्त ही नहीं कर पाता था। कोई उसकी किताबों को हाथ लगाये, तो समझो कि उसकी शामत आ गयी। आप कल्पना कर सकते हैं कि उस समय भय से मेरी क्या हालत हुई होगी, जब छोटी-बड़ी, मोटी-पतली और सभी तरह की किताबें ताक से निकलकर नीचे गिर गयीं और मेज़-कुर्सियों के नीचे सारे कमरे में बिखर गयीं। मैंने भाग जाना चाहा, मगर देर हो चुकी थी। मैंने सोचा – "बस, अब सब कुछ खत्म हो गया। मैं कहीं की नहीं रही, अब कुछ नहीं बचा! मैं दस साल की छोकरी की तरह बेवकूफ़ियां करती हूं, शरारतें करती हूं! बुद्धू लड़की हूं! एकदम उल्लू हूं!" पोक्रोव्स्की गुस्से से आग-बबूला हो उठा, चिल्लाने लगा – "बस, यही कसर रह गयी थी!.. कभी अक़्ल भी आयेगी आपको?" और वह किताबें उठाने लगा। मैं भी उसकी मदद

4*

करने को झुकी। "रहने दीजिये, रहने दीजिये," वह चिल्ला उठा। "यह कहीं ज़्यादा अच्छा होता कि जहां आपको बुलाया नहीं गया, वहां न जाया करें।" किन्तु इसी बीच मेरे विनम्र हाव-भाव से थोड़ा नर्म होकर वह तनिक शान्त हो गया और कुछ समय पहले के अध्यापक के अपने अधिकार के अनुरूप मुझे अक़्ल सिखाने के अन्दाज़ में कहता गया–"आप कब संजीदा होंगी, कब आपको अक़्ल आयेगी? ज़रा अपने पर नज़र डालिये, आप अब बच्ची नहीं हैं, पन्द्रह साल की हो चुकी हैं।" इतना कहकर सम्भवतः यह विश्वास करने के लिये कि मैं बच्ची नहीं हूं, उसने ग़ौर से मेरी तरफ़ देखा और शर्म से लाल हो गया। मैं कुछ भी समझ नहीं पा रही थी–मैं उसके सामने खड़ी हुई हैरानी से आंखें फाड़-फाड़कर उसे देख रही थी। वह उठा, झेंपता हुआ-सा मेरे पास आया, बेहद घबरा रहा था, उसने कुछ कहा, लगता है कि किसी चीज़ के लिये, शायद इस बात के लिये माफ़ी मांगी कि केवल अभी उसे यह चेतना हुई है कि मैं इतनी बड़ी लड़की हो चुकी हूं। आख़िर मैं भी इस चीज़ को समझ गयी। मुझे याद नहीं कि तब मेरी क्या हालत हुई थी–मैं बुरी तरह घबरा गयी थी, मेरे होश-हवास ठिकाने नहीं रहे थे, मेरा चेहरा पोक्रोव्स्की से भी ज़्यादा लाल हो गया था और मैं उसे दोनों हाथों से ढांपकर कमरे से बाहर भाग गयी थी।

मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूं, शर्म के मारे मेरी जो बुरी हालत थी, उससे कैसे अपने को उबारूं। यही बात मुझे कचोट रही थी कि मैं उसके कमरे में रंगे हाथों पकड़ी गयी! तीन दिन तक मुझे उससे नज़र मिलाने की हिम्मत नहीं हुई। शर्म से मेरी ऐसी हालत हो जाती कि आंसू छलकने को हो आते। बहुत ही विचित्र, बड़े हास्यास्पद विचार मेरे दिमाग़ में चक्कर काटते रहते थे। उनमें सबसे ज़्यादा पागलपन का विचार तो यह था कि मैं उसके पास जाऊं, उससे सारी बात कह दूं, सब कुछ मान लूं, सब कुछ साफ़-साफ़ बता दूं और यह विश्वास दिलाऊं कि मैंने एक मूर्ख लड़की की तरह नहीं, बल्कि नेक इरादे से यह सब किया था। मैंने तो बिल्कुल तय ही कर लिया था, किन्तु भला हो भगवान का कि मेरी हिम्मत ने मेरा साथ न दिया।

मैं कल्पना कर सकती हूं कि यह कितनी बड़ी मूर्खता होती! मैं तो इसकी याद करके अब भी शर्म से गड़ जाती हूं।

कुछ दिनों के बाद मां अचानक सख़्त बीमार हो गयी। दो दिन तक वह बिस्तर से नहीं उठी और तीसरी रात को उसे ज़ोर का बुख़ार हो गया और वह सरसाम की हालत में उल्टी-सीधी बातें करने लगी। मैं पूरी एक रात नहीं सोयी थी, मां की देख-भाल करती रही थी, उसके पलंग के पास बैठी हुई उसे पानी तथा नियत समय पर दवाई पिलाती रही थी। दूसरी रात को मेरी बुरी हालत हो गयी। रह-रहकर नींद से मेरी आंखें बन्द होने लगतीं, आंखों के सामने हरे-हरे धब्बे तैरते, सिर चकराता और मैं थकान के कारण किसी भी क्षण कुर्सी से नीचे गिर सकती थी। लेकिन मां की धीमी-धीमी कराहट से मैं सचेत हो जाती, सिहर उठती, क्षण भर को जाग जाती और इसके बाद नींद फिर से मुझे दबोच लेती। बहुत बुरी हालत थी मेरी। मालूम नहीं–मैं याद कर पाने में असमर्थ हूं–किन्तु नींद और जागरण के बीच हो रहे यातनापूर्ण संघर्ष के क्षण में एक भयानक स्वप्न, एक भयानक छाया-सी मेरे परेशान दिमाग़ के सामने घूम गयी। मैं बहुत ही डरकर, घबराकर जाग उठी। कमरे में अन्धेरा था, मोमबत्ती बुझती जा रही थी, प्रकाश अचानक या तो सारे कमरे में फैल जाता, या प्रकाश-रेखायें दीवार पर हल्की-हल्की झलकतीं या फिर पूरी तरह ग़ायब हो जातीं। किसी कारण मेरा दिल बुरी तरह डर गया, किसी भय ने मुझे दबोच लिया, मेरे विचार भयानक स्वप्न में उलझ गये और गहरे अवसाद ने दिल को जकड़ लिया... मैं उछलकर कुर्सी से उठ खड़ी हुई और किसी यातनापूर्ण, बहुत ही बोझल, असह्य वेदना से बरबस चीख़ उठी। इसी समय दरवाज़ा खुला और पोक्रोव्स्की हमारे कमरे में आया।

मुझे केवल इतना ही याद है कि जब मुझे होश आया तो मैं उसकी बांहों में थी। उसने बड़ी सावधानी से मुझे आरामकुर्सी पर बिठा दिया, मुझे पीने को पानी का गिलास दिया और सवाल पर सवाल पूछने लगा। याद नहीं कि मैंने उसे क्या जवाब दिये। "आप बीमार हैं, आप ख़ुद बहुत बीमार हैं," उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "आपको बुख़ार है, आप अपने को

चौपट कर रही हैं, अपनी सेहत का जरा भी ख्याल नहीं रख रही हैं। आप शान्त हो जायें, लेट जायें, सो लें। मैं दो घण्टे बाद आपको जगा दूंगा, थोड़ा आराम कर लीजिये... लेट जाइये, लेट जाइये!" – मुझे आपत्ति के रूप में एक भी शब्द कहने का अवसर न देते हुए वह कहता गया। थकान के कारण मुझमें जरा भी ताक़त नहीं रही थी, कमज़ोरी से मेरी आंखें मुंदी जा रही थीं। मैं यह सोचकर कि आध घण्टे तक झपकी ले लेती हूं, आरामकुर्सी पर ही लेट गयी और सुबह तक सोयी रही। जब मां को दवाई पिलाने का वक़्त हुआ, तो पोक्रोव्स्की ने मुझे तभी जगाया।

अगले रोज़ दिन के वक़्त थोड़ा आराम करने के बाद जब मैं यह पक्का इरादा बनाकर कि आज हरगिज़ नहीं सोऊंगी, मां के पलंग के पास कुर्सी पर बैठने को तैयार हुई तो रात के लगभग ग्यारह बजे पोक्रोव्स्की ने हमारे कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। मैंने दरवाज़ा खोला। "अकेले बैठे-बैठे आपको ऊब महसूस होगी," उसने मुझसे कहा, "यह किताब ले लीजिये, आपका मन लगा रहेगा।" मैंने किताब ले ली, याद नहीं कि वह क्या किताब थी। बेशक मैं सारी रात नहीं सोई थी, तो भी शायद ही मैंने उसे खोलकर देखा हो। एक अजीब-सी आन्तरिक उत्तेजना ने मुझे सोने नहीं दिया। मेरे लिये एक ही जगह पर टिककर बैठना असम्भव था। मैं कई बार कुर्सी से उठी और कमरे में इधर-उधर आती-जाती रही। अपने रोम रोम में मैं कोई आन्तरिक पुलक अनुभव कर रही थी। पोक्रोव्स्की ने मेरी ओर ध्यान दिया था, मैं इससे बेहद खुश थी। अपने बारे में उसकी बेचैनी और चिन्ता से मुझे गर्व की अनुभूति हो रही थी। मैं सारी रात सोचती और सपने बुनती रही। उस रात को पोक्रोव्स्की फिर नहीं आया, मैं जानती थी कि वह आयेगा भी नहीं और यह अनुमान लगाती रही कि अगली रात को आयेगा या नहीं।

अगली रात को जब घर में सभी लोग बिस्तरों पर चले गये तो पोक्रोव्स्की ने अपना दरवाज़ा खोला और वह अपने कमरे की दहलीज़ पर खड़े रहकर मुझ से बातें करने लगा। हमने उस वक़्त एक-दूसरे से क्या बातचीत की, मुझे अब उसका एक भी शब्द याद नहीं! मुझे सिर्फ़ इतना याद है कि मैं बहुत झेंपती और घबराती

रही, अपने पर झल्लाती रही और बड़ी बेचैनी से बातचीत के समाप्त होने का इन्तज़ार करती रही, यद्यपि जी-जान से ऐसा चहती थी, दिन भर इस बातचीत की कल्पना करती और इसके बारे में अपने सवाल-जवाब गढ़ती रही थी... इसी रात से हमारी मित्रता का श्रीगणेश हुआ। मां की पूरी बीमारी के दौरान हम हर रात कई-कई घण्टे साथ-साथ बिताते थे। धीरे-धीरे मैं अपने संकोच पर क़ाबू पाती जाती थी, यद्यपि हमारी हर बातचीत के बाद मुझे किसी कारण अभी भी अपने पर खीझ आती रहती थी। हां, यह देखकर मुझे छिपी-छिपी खुशी और गर्व से ओत-प्रोत प्रसन्नता होती थी कि मेरे कारण वह अपनी मनहूस किताबों को भूलता जा रहा था। एक बार मज़ाक़ ही मज़ाक़ में उसके ताक से गिरने की बात चल पड़ी। यह बड़ा विचित्र क्षण था; मैंने बहुत ही ज्यादा निश्छलता और निष्कपटता दिखाई, मैं किसी उत्साह, किसी अजीब-से उल्लास की धारा में बह गयी और मैंने उसके सामने सब कुछ स्वीकार कर लिया... यह कह दिया कि मैं कुछ पढ़ना चाहती थी, कुछ ज्ञान प्राप्त करना चाहती थी, कि मुझे छोकरी और बच्ची माना जाता है, इस विचार से मेरे दिल को बड़ी ठेस लगती थी... मैं दोहराती हूं कि उस वक़्त मेरी अजीब ही मनःस्थिति थी। मेरा दिल बड़ा नर्म था, आंखों में आंसू थे। मैंने कुछ भी नहीं छिपाया, सब कुछ, सभी कुछ कह दिया कि मैं उसके प्रति मैत्री-भाव रखती हूं, उसे प्यार करना चाहती हूं, उसके साथ बड़ा हेल-मेल चाहती हूं, उसे तसल्ली और सान्त्वना देना चाहती हूं। वह बड़े अजीब ढंग से, खोया-खोया और हैरान होता हुआ मेरी ओर देखता रहा तथा उसने मुझ से एक भी शब्द नहीं कहा। अचानक मुझे बेहद दुख हुआ, मन बड़ा उदास हो गया। मुझे लगा कि वह मुझे समझ नहीं पा रहा है, शायद मुझ पर हंस रहा है। मैं सहसा बच्चे की तरह फूट-फूट कर रोने, सिसकने लगी, अपने को वश में नहीं रख पायी। मुझे तो जैसे दौरा पड़ गया था। उसने मेरे हाथ थाम लिये, उन्हें चूमा, उन्हें अपनी छाती से लगाया, कुछ कहा, मुझे तसल्ली दी। उसका मन उमड़ पड़ा था। मुझे याद नहीं कि उसने मुझ से क्या कहा, लेकिन यह स्मरण है कि मैं रोती थी, हंसती थी, फिर से रोती थी, शर्म से लाल होती थी

और खुशी के मारे एक भी शब्द नहीं कह पा रही थी। वैसे अपनी सारी उत्तेजना के बावजूद मैंने यह देखा कि पोक्रोव्स्की में किसी तरह का संकोच, कुछ झेंप-सी बनी रही। लगता है कि मेरे ऐसे व्यवहार, मेरे ऐसे उल्लास, ऐसे अप्रत्याशित उत्साह, ऐसे तीव्र मैत्री-भाव के प्रदर्शन से वह पूरी तरह हक्का-बक्का रह गया था। शायद शुरू में उसे केवल जिज्ञासा हुई, बाद में उसके मन की दुविधा दूर हो गयी और उसने मेरी जैसी ही सीधी-सरल भावना से अपने प्रति मेरे लगाव, मेरे स्नेह-शब्दों और मेरे अपनत्व को स्वीकार किया तथा एक सच्चे मित्र, एक सगे भाई की तरह वैसे ही अपनेपन, मैत्री और स्नेह-सिक्तता से उसका उत्तर दिया। ओह, मेरा मन कैसा गद्‌गद था, कितना चैन अनुभव कर रहा था!.. मैं उससे कुछ भी तो नहीं छिपाती थी, कोई दुराव-छिपाव नहीं रखती थी। वह यह देखता, अनुभव करता था और हर दिन मेरें अधिकाधिक निकट आता जा रहा था।

सच, अब याद नहीं कि रात्रि-मिलन के अपने उन यातनापूर्ण और साथ ही अति मधुर क्षणों में, दीपक की थरथराती लौ की मद्धिम रोशनी में और बेचारी बीमार मां के पलंग के पास ही बैठे हुए हमने क्या-क्या बातें नहीं कीं!.. दिमाग़ में जो कुछ भी आ गया, दिल ने जो कुछ भी चाहा, जो कुछ भी कहना चाहा, सभी कुछ कह-सुन लिया। और हम लगभग बड़े सुखी थे... ओह, वह दुखद और सुखद समय भी था – सब कुछ साथ-साथ। और उसकी याद करके मेरा मन अब भी खुश और उदास होता है। स्मृतियां मधुर या कटु, कैसी भी क्यों न हों, हमेशा यातनाप्रद होती हैं। कम से कम अपने बारे में तो मैं यही कह सकती हूं। किन्तु यह यातना भी मधुर होती है। और मन जब भारी हो जाता है, उदासी, व्यथा और वेदना से टीसने लगता है, तब यादें उसे ताज़गी देती हैं, उसे वैसे ही नवजीवन प्रदान करती हैं जैसे नम शाम में शबनम की बूंदें दिन भर की गर्मी से झुलसे और मुरझाये हुए फूल को ज़िन्दगी दे देती हैं।

मां स्वस्थ होती जा रही थी, किन्तु मैं अभी भी रातों को उसके बिस्तर के पास बैठी रहती थी। पोक्रोव्स्की मुझे अक्सर पढ़ने को किताबें देता। शुरू में मैं उन्हें इसलिये पढ़ती थी कि

नींद न आये, इसके बाद अधिक ध्यान और चाव से पढ़ने लगी। इसकी बदौलत मुझे अचानक बहुत-सी नयी, अब तक अनदेखी-अनसुनी और अनजानी बातों की जानकारी हुई। एक प्रबल प्रवाह की भांति नये विचार, नये प्रभाव मेरे हृदय में उमड़ पड़े। नये प्रभाव, नई छापें ग्रहण करने के लिये मुझे जितनी अधिक उत्तेजना, घबराहट और श्रम का सामना करना पड़ता, वे मुझे उतनी ही अधिक प्रिय लगतीं, उतनी ही अधिक मधुरता से मेरी आत्मा को झकझोरतीं। ये छापें अचानक एकबारगी मेरे हृदय में उमड़-घुमड़ पड़तीं और उसे चैन न लेने देतीं। एक अजीब-सा गड़बड़-झाला मेरे समूचे अस्तित्व को परेशान करने लगा। किन्तु यह मानसिक उथल-पुथल मेरे सन्तुलन को पूरी तरह से गड़बड़ नहीं कर पायी और ऐसा कर भी नहीं सकती थी। मैं सपनों की बेहद दीवानी थी और इस चीज़ ने मुझे बचा लिया।

मां के बिल्कुल ठीक हो जाने पर पोक्रोव्स्की के साथ मेरे रात्रि-मिलन और लम्बी-लम्बी बातों का सिलसिला ख़त्म हो गया। कभी-कभार हमें दो-चार बातें करने का मौक़ा मिलता, अक्सर हमारी बातें बेमानी और मामूली-सी होतीं, किन्तु मैं उन्हें अपना ही महत्त्व, अपना विशेष आशय और अर्थ प्रदान करती। मुझे अपने जीवन में कोई कमी नहीं खलती थी, मैं सुखी और शान्त थी, हल्के-हल्के सुख से अभिभूत थी। ऐसे ही कुछ सप्ताह बीत गये...

एक दिन बूढ़ा पोक्रोव्स्की हमारे यहां आया। वह देर तक हमारे साथ गपशप करता रहा, असाधारण रूप से खुश और बड़े उत्साह में था, खूब बातें कर रहा था। उसकी हंसी फूटी पड़ रही थी, वह अपने ढंग से चुटकियां लेता था और आखिर उसने अपने इस उल्लास का रहस्य खोलते हुए बताया कि ठीक एक हफ़्ते बाद उसके पेतेन्का का जन्मदिन आनेवाला था, कि उस मौक़े पर वह नयी वास्कट और नये जूते पहनकर, जिन्हें ख़रीद देने का बीवी ने वादा किया था, ज़रूर ही अपने बेटे को बधाई देने आयेगा। थोड़े में यह कि बूढ़े की खुशी का पारावार नहीं था और जो कुछ भी उसके दिमाग़ में आता था, वह बोलता जाता था।

पोक्रोव्स्की का जन्मदिन! यह जन्मदिन मुझे दिन-रात चैन

नहीं लेने देता था। मैंने पक्का इरादा बना लिया कि पोक्रोव्स्की को अपनी दोस्ती की याद दिलाऊंगी और उसे कोई न कोई उपहार दूंगी। लेकिन क्या उपहार दिया जाये? आखिर सोच-सोचकर मैंने तय किया कि किताबें भेंट करूंगी। मुझे मालूम था कि वह पुश्किन की सम्पूर्ण रचनाओं के नये संस्करण का सेट पाने को बहुत उत्सुक था और मैंने यही सेट खरीदने का निर्णय किया। मेरे पास सिलाई करके कमाये गये लगभग अपने तीस रूबल थे। नया फ्राक खरीदने के लिये मैंने इन्हें जमा किया था। मैंने बावर्चिन, बूढ़ी मात्र्योना को यह जानने के लिये तुरन्त दुकान पर भेजा कि पुश्किन का पूरा सेट कितनी क़ीमत का है। हाय, मुसीबत! अच्छी जिल्दवाले पुश्किन के पूरे सेट की क़ीमत कम से कम साठ रूबल थी। तो मैं बाक़ी पैसे कहां से लाऊं? मैं अपना दिमाग़ खपाती रही और यह तय न कर पायी कि क्या करूं। मैंने मां से पैसे नहीं लेने चाहे। मां ने बेशक फ़ौरन मेरी मदद की होती, लेकिन तब सारे घर को हमारे तोहफ़े के बारे में पता चल जाता। इसके अलावा तब यह उपहार पोक्रोव्स्की द्वारा मुझे साल भर पढ़ाने के लिये की गयी मेहनत का पारिश्रमिक-सा बन जाता। मैं उसे एकान्त में, दूसरों से गुप्त रखते हुए ही उसे यह उपहार देना चाहती थी। रही उसकी मेहनत, तो उसके लिये तो मैं जीवन भर उसकी कृतज्ञ रहना चाहती थी, अपनी मैत्री के अतिरिक्त और कोई पारिश्रमिक नहीं देना चाहती थी। आखिर मुझे इस मुश्किल को हल करने की एक तरकीब सूझ ही गयी।

मुझे मालूम था कि गोस्तीनी द्वोर में, जहां पुरानी किताबों की दुकानें थीं, होशियारी से मोल-भाव करने पर अक्सर बहुत कम इस्तेमाल की गयी और लगभग नयी किताबें भी कभी-कभी आधी क़ीमत पर खरीदी जा सकती हैं। मैंने गोस्तीनी द्वोर जाने का फ़ैसला किया। इसका संयोग भी बन गया – अगले दिन हमारे यहां और आन्ना फ़्योदोरोव्ना के यहां भी किसी काम से बाज़ार जाने की ज़रूरत पैदा हुई। मां की तबीयत अच्छी नहीं थी और आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने आलस के कारण जाना नहीं चाहा। चुनांचे मुझे ही सारा काम सौंपा गया और मैं मात्र्योना को साथ लेकर बाज़ार चली गयी।

मेरी खुशक़िस्मती कहिये कि बहुत जल्द ही मैंने खासी खूबसूरत जिल्दवाली पुश्किन की रचनाओं का पूरा सेट ढूंढ़ लिया। मैं मोल-भाव करने लगी। शुरू में तो दुकानदार ने नयी किताबों से भी ज्यादा क़ीमत मांगी। लेकिन बाद में, सो भी काफ़ी कोशिश और दुकान से कई बार लौट जाने का नाटक करने के बाद मैंने दुकानदार को क़ीमत घटाने के लिये मजबूर कर दिया और वह चांदी के दस रूबलों में उन्हें देने को राज़ी हो गया। मोल-भाव करने में मुझे कितना मज़ा आ रहा था!.. बेचारी मात्र्योना की समझ में नहीं आ रहा था कि मुझे हुआ क्या है और किसलिये मैं इतनी अधिक किताबें खरीदना चाह रही हूं। लेकिन, हाय मुसीबत! मेरी सारी पूंजी तो तीस काग़ज़ी रूबल थे और दुकानदार और अधिक क़ीमत घटाने को तैयार नहीं था। आखिर मैं उसकी मिन्नत-समाजत करने लगी, गिड़गिड़ाने लगी और अन्त में उसे कुछ और घटने के लिये विवश कर दिया। लेकिन उसने सिर्फ़ ढाई रूबल ही कम किये, क़सम खाकर यह कहा कि सिर्फ़ मेरी खातिर ही उसने ऐसा किया है, कि मैं बहुत अच्छी लड़की हूं और किसी दूसरे से तो उसने कभी भी इतनी कम क़ीमत न ली होती। मेरे पास अभी ढाई रूबल की कमी थी। दुख के कारण मुझे रोना आ रहा था। किन्तु सर्वथा अप्रत्याशित परिस्थिति ने मुझे इस परेशानी से उबार लिया।

अपने निकट ही किताबों की दूसरी मेज़ पर मुझे बूढ़ा पोक्रोव्स्की दिखाई दिया। पुरानी किताबें बेचनेवाले चार-पांच लोग उसे घेरे हुए थे। उन्होंने उसे पूरी तरह से चक्कर में डाल दिया था, उसे घबरा दिया था। हर कोई अपना-अपना माल पेश कर रहा था, वे सभी तरह की किताबें खरीदने का सुझाव देते थे और वह खुद भी जाने क्या-क्या खरीदना चाहता था। बेचारा बूढ़ा मानो होश-हवास खोये हुए उनके बीच खड़ा था और समझ नहीं पा रहा था कि क्या खरीदे और क्या न खरीदे। मैंने उसके पास जाकर पूछा कि वह यहां क्या कर रहा है? बूढ़े को मेरे आने से बहुत खुशी हुई। वह मुझे बहुत चाहता था, शायद पेतेन्का से कुछ कम नहीं। "अरे, किताबें खरीद रहा हूं, वरवारा अलेक्सेयेव्ना," उसने जवाब दिया, "पेतेन्का के लिये खरीद रहा हूं। अजी, जल्द ही उसका जन्मदिन आनेवाला है, उसे किताबों

से लगाव है, सो मैं उसी के लिये इन्हें खरीद रहा हूं..." बूढ़े के बातचीत के अन्दाज़ से तो यों भी हमेशा हंसी आती थी और इस वक़्त तो वह बहुत घबराया हुआ भी था। वह जिस भी किताब की क़ीमत पूछता, वही चांदी के एक, दो या तीन रूबल की होती। बड़ी किताबों की तो वह क़ीमत ही नहीं पूछता था, सिर्फ़ हसरत की नज़र से देखता, कुछ पन्ने उलटता-पलटता, हाथों में लेकर ऊपर-नीचे करता और फिर से वहीं वापस रख देता। "नहीं, नहीं, यह तो महंगी है," वह बुदबुदाता, "शायद इनमें से कोई अच्छी हो?" यह कहकर वह पतली-पतली किताबों, गीतों-गानों की किताबों और गुटकों में से कुछ चुनने लगता। ये सभी किताबें बेहद सस्ती थीं। "किसलिये आप इन्हें खरीदना चाहते हैं?" मैंने पूछा, "ये सब तो बिल्कुल बेकार हैं।" – "ओह, नहीं," उसने उत्तर दिया, "आप ज़रा देखिये तो, यहां कैसी अच्छी, कितनी अच्छी-अच्छी किताबें भी हैं!" उसने अन्तिम शब्द ऐसे खींचते हुए और दर्द भरे अन्दाज़ में कहे कि मुझे लगा – वह इस दुख के कारण अभी रो पड़ेगा कि अच्छी किताबें इतनी महंगी क्यों हैं, कि अभी आंसू की बूंद उसके पीले गालों से लुढ़ककर लाल नाक पर आ गिरेगी। मैंने पूछा कि उसके पास कितने पैसे हैं। "ये हैं," इस बेचारे ने अखबार के गन्दे-से काग़ज़ में लिपटे हुए सारे पैसे निकाले – "यह रहा पचास कोपेक और बीस कोपेक का चांदी का सिक्का और तांबे के सिक्कों की बीस कोपेक की रेज़गारी।" मैं उसे फ़ौरन अपने दुकानदार के पास खींच ले गयी। "इन ग्यारह की ग्यारह किताबों की नोटों की शक्ल में सिर्फ़ साढ़े बत्तीस रूबल क़ीमत है। मेरे पास तीस रूबल हैं, आप ढाई रूबल इनमें शामिल कर दीजिये, तब हम ये सारी किताबें खरीदकर इन्हें हम दोनों की ओर से भेंट कर देंगे।" बूढ़ा तो खुशी से नाच उठा, उसने सारे पैसे दुकानदार के सामने ढेर कर दिये और दुकानदार ने हमारी साझी पुस्तकों का बंडल हमारी तरफ़ बढ़ा दिया। बूढ़े ने अपनी सभी जेबों में किताबें ठूंस लीं, दोनों हाथों में उठा लीं, बगलों में दबा लीं और यह वादा करके कि अगले दिन सभी किताबें चुपके से मेरे पास ले आयेगा, उन्हें अपने घर ले गया।

अगले दिन बूढ़ा अपने बेटे के पास आया, कोई घण्टा भर उसके

साथ बैठा रहा, उसके बाद हमारे यहां आया और बड़ी रहस्य-पूर्ण-सी मज़ाकिया सूरत बनाये हुए मेरी बग़ल में बैठ गया। सबसे पहले तो मुस्कराते और किसी खास राज़ को जाननेवाले व्यक्ति की गर्वीली प्रसन्नता से हाथ मलते हुए उसने मुझे यह बताया कि सभी किताबें वह चुपके से यहां ले आया है और मात्र्योना की देख-रेख में रसोईघर के कोने में रखी हुई हैं। इसके पश्चात् स्व-भावत: जन्मदिन के समारोह की चर्चा चल पड़ी। इस सम्बन्ध में बूढ़े ने सविस्तार यह बताया कि कैसे हम ये किताबें भेंट करेंगे। वह इस विषय की जितनी अधिक गहराई में उतरता गया, इसकी जितनी अधिक चर्चा करता गया, उतना ही अधिकाधिक मुझे यह आभास होता गया कि उसकी आत्मा पर कोई बोझ है, कोई ऐसी चीज़ उसे परेशान कर ही है जिसे वह व्यक्त नहीं कर सकता, उसकी ऐसा करने की हिम्मत नहीं हो रही, यहां तक कि वह ऐसा करते हुए डरता है। मैं प्रतीक्षा करती हुई चुप रही। रहस्य-मयी प्रसन्नता, छिपी हुई खुशी जो मैं उसके विचित्र हाव-भाव, उसके मुंह बनाने और बायीं आंख के मिचमिचाने में बड़ी आसानी से देख पा रही थी, लुप्त हो गयी। वह हर क्षण अधिकाधिक बेचैन और परेशान होता गया तथा आखिर अपनी बात कहे बिना न रह सका।

"सुनिये," उसने सहमे-सहमे और दबी-दबी ज़बान से कहना शुरू किया, "मेरी बात सुनिये, वरवारा अलेक्सेयेव्ना... बात यह है, वरवारा अलेक्सेयेव्ना..." बूढ़ा बहुत बुरी तरह से घबराया हुआ था। "सुनिये, जैसे ही उसका जन्मदिन आये, दस किताबें लेकर उन्हें स्वयं भेंट कर दीजिये यानी अपनी तरफ़ से तोहफ़े के तौर पर दे दीजिये। मैं सिर्फ़ ग्यारहवीं पुस्तक उसे अपनी ओर से भेंट कर दूंगा। इस तरह से, देखिये न, आपके पास भी भेंट करने को कुछ हो जायेगा और मेरे पास भी भेंट करने को कुछ हो जायेगा; हम दोनों के पास ही भेंट करने को कुछ हो जायेगा।" इतना कहकर बूढ़ा बिल्कुल सिटपिटा गया और चुप हो गया। मैंने उसकी ओर देखा – वह सहमा-सहमा-सा मेरे फ़ैसले का इन्तज़ार कर रहा था। "आप ऐसा क्यों चाहते हैं, ज़खार पेत्रोविच, कि हम साझे उपहार के रूप में उन्हें भेंट न करें?" – "बात यह है,

वरवारा अलेक्सेयेव्ना, ऐसे... इस तरह, यों...'' संक्षेप में यह कि बूढ़ा बिल्कुल घबरा गया, घबराहट से उसका चेहरा लाल हो गया, वह अपने वाक्य में उलझ गया और और बात जारी नहीं रख सका।

"बात यह है, वरवारा अलेक्सेयेव्ना," उसने आखिर बात साफ़ की, "मैं कभी-कभी उल्टी-सीधी हरकतें करता हूं... मेरा मतलब है, मैं आपके सामने निवेदन करना चाहता हूं कि उल्टी-सीधी हरकतें करता रहता हूं और हमेशा ही करता रहता हूं... कुछ बुरी लतों का आदी हो गया हूं... मेरा मतलब यह है कि कभी बहुत ज्यादा ठण्ड हो जाती है, इसी तरह कभी कोई बात मन को कचोटने लगती है, किसी वजह से मन उदास हो जाता है, या कोई बुरी बात हो जाती है, तो उस वक़्त मैं कभी-कभी अपने को वश में नहीं रख पाता, उल्टी-सीधी हरकत कर बैठता हूं, यानी कभी-कभी कुछ ज्यादा ही पी जाता हूं। पेत्रूशा को यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। तो वरवारा अलेक्सेयेव्ना, वह बिगड़ उठता है, मुझे भला-बुरा कहता है, तरह-तरह की नसीहतें देता है, अक़्ल सिखाता है। इसलिये मैं अब अपने उपहार से उसके सामने यह सबूत पेश करना चाहता हूं कि मैं अपने को सुधार रहा हूं, ठीक रास्ते पर आ रहा हूं। उसे यह दिखाना चाहता हूं कि मैंने किताब खरीदने के लिये पैसे जमा किये हैं, बहुत समय तक इन्हें जमा करता रहा हूं, क्योंकि उन पैसों के अलावा जो पेत्रूशा मुझे कभी-कभार देता है, मेरे पास लगभग कभी पैसे नहीं होते। उसे यह मालूम है। तो इस तरह वह यह देख लेगा कि मैंने अपने पैसों को कैसे इस्तेमाल किया है और यह कि मैं सिर्फ़ उसी के लिये यह सब कुछ करता हूं।"

मुझे बूढ़े पर बहुत तरस आया। मैंने अधिक देर तक सोच-विचार नहीं किया। बूढ़ा बेचैनी से मेरी ओर देख रहा था। "सुनि-ये, ज़ख़ार पेत्रोविच," मैं बोली, "आप ये सभी उसे भेंट कर दी-जिये!" – "सभी? आपका मतलब है कि सभी किताबें?.." – "हां, सभी किताबें।" – "और सभी अपनी ओर से?" – "हां, बेशक अपनी ओर से" – "अकेले अपनी ओर से? यानी अपने नाम से?" – "हां, हां, अपने नाम से..." मुझे लगता है कि मैंने

तो बहुत साफ़ ढंग से अपनी बात कही थी, लेकिन बूढ़ा बहुत देर तक उसे समझ नहीं पाया।

"अरे हां," उसने सोचते हुए जवाब दिया, "हां! यह बहुत अच्छा होगा, यह तो सचमुच बहुत अच्छा रहे, लेकिन तब आप क्या करेंगी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना?" – "मैं कुछ भी भेंट नहीं करूंगी।" – "क्या मतलब!" बूढ़ा लगभग भयभीत होकर चिल्ला उठा, "आप पेतेन्का को कुछ भी भेंट नहीं करेंगी, आप उसे कुछ भी भेंट नहीं करना चाहतीं?" बूढ़ा डर गया। मुझे लगा कि इस समय वह अपने प्रस्ताव को इसलिये वापस ले लेना चाहता था कि मैं भी उसके बेटे को कुछ भेंट कर सकूं। बहुत उदारमना था यह बूढ़ा! मैंने उसे विश्वास दिलाया कि उसके बेटे को कुछ भेंट करके मुझे बड़ी खुशी होती, किन्तु उसकी प्रसन्नता नहीं छीनना चाहती। "अगर आपके बेटे को खुशी होगी," मैंने इतना और जोड़ दिया, "और आप खुश होंगे तो मुझे भी प्रसन्नता होगी, क्योंकि अपने दिल की गहराई में तो मैं अनुभव करूंगी कि वास्तव में मैंने ही उन्हें भेंट किया है।" इन शब्दों से बूढ़ा बिल्कुल शान्त हो गया। वह हमारे यहां दो घण्टे तक और रहा, किन्तु एक पल को भी चैन से नहीं बैठ सका। वह रह-रहकर उठता, कुछ न कुछ करता, शोर मचाता, साशा के साथ कोई शरारत करता, चुपके से मुझे चूम लेता, हाथ पर चिकोटी काटता और आन्ना फ़्योदोरोव्ना की नज़र बचाकर उसका मुंह चिढ़ाता। आन्ना फ़्यो-दोरोव्ना ने आख़िर उसे खदेड़ दिया। थोड़े में यह कि बूढ़ा खुशी से ऐसे दीवाना हो गया, जैसा कि उसके साथ शायद पहले कभी नहीं हुआ था।

समारोह के दिन वह सुबह की प्रार्थना के फ़ौरन बाद ठीक ग्यारह बजे यहां चला आया। वह ढंग से रफ़ू किया हुआ फ़ाक-कोट और सचमुच ही नयी वास्कट तथा नये जूते पहने था। उसके दोनों हाथों में किताबों के बंडल थे। उस वक़्त हम सभी आन्ना फ़्योदोरोव्ना के साथ हॉल में बैठे हुए कॉफ़ी पी रहे थे (इतवार का दिन था)। जहां तक मुझे याद है बूढ़े ने यहां से अपनी बात शुरू की कि पुश्किन खासा अच्छा कवि था; इसके बाद वह अपनी इस चर्चा से भटक गया और घबराकर अचानक यह कहने लगा

कि आदमी को ढंग की जिन्दगी बितानी चाहिये और अगर वह ढंग की ज़िन्दगी नहीं बिताता तो इसका मतलब है कि वह गड़बड़ करता है; कि बुरी आदतें उसे तबाह-बरबाद करती हैं। उसने अपने को लगाम न लगा सकनेवाले कुछ लोगों की मिसालें भी पेश कीं और अन्त में यह कहा कि पिछले कुछ अरसे में वह बिल्कुल सुधर गया है और बहुत ही अच्छी ज़िन्दगी बिताता है। वह तो पहले भी बेटे की नसीहतों को ठीक मानता था, बहुत अरसे से ऐसा ही महसूस करता था, उन्हें अपने दिल में जगह देता था और अब तो वास्तव में ही प्याले का दीवाना नहीं रहा है। इसके प्रमाणस्वरूप बहुत अरसे के दौरान जोड़े गये पैसों से ख़रीदी गयी किताबें बेटे को भेंट करता है।

बेचारे बूढ़े की बातें सुनते हुए मुझे हंसी भी आ रही थी और रोना भी। ज़रूरत होने पर वह खूब बढ़िया ढंग से झूठ भी बोल सकता था! किताबें पोक्रोव्स्की के कमरे में ले जाकर ताक पर सजा दी गयीं। पोक्रोव्स्की तो फ़ौरन ही सचाई को भांप गया। बूढ़े को दोपहर के खाने के लिये आमन्त्रित किया गया। इस दिन हम सभी बेहद खुश थे। भोजन के बाद ताश की बाज़ियां खेली गयीं। साशा बड़ी चंचलता दिखा रही थी और मैं उससे पीछे नहीं थी। पोक्रोव्स्की मेरी ओर बड़ा ध्यान दे रहा था और लगातार मुझसे एकान्त में बात करने का मौक़ा ढूंढ़ रहा था, मगर मैं ही कन्नी काटती रही। मेरे जीवन के पूरे चार सालों में यह सबसे प्यारा दिन था।

और अब उदासी भरी और टीसती स्मृतियां आरम्भ होती हैं, मेरे बुरे दिनों की दास्तान शुरू होती है। शायद इसीलिये मेरी लेखनी धीरे-धीरे चल रही है और मानो आगे लिखने से इन्कार कर रही है। शायद इसीलिये अपने सुखी दिनों की छोटी से छोटी तफ़सीलों को भी मैंने इतना मन लगाकर और इतने अधिक प्यार से लिखा है। ये दिन बहुत समय तक नहीं रहे; दुख ने, बहुत भयानक दुख-मुसीबतों ने उनका स्थान ले लिया जिनका भगवान जाने कब अन्त होगा।

पोक्रोव्स्की की बीमारी और मौत से मेरे दुर्भाग्य का आरम्भ हुआ।

मैंने जिन अन्तिम बातों की चर्चा की है, उसके दो महीने बाद वह बीमार हो गया। इन दो महीनों के दौरान उसने कोई अच्छी नौकरी पाने की जी-जान से कोशिश की, क्योंकि अभी तक वह कोई ऐसी जगह हासिल नहीं कर सका था। तपेदिक के सभी मरीज़ों की भांति वह भी जीवन के अन्तिम क्षण तक अपने हृदय में बहुत लम्बे अरसे तक जीते रहने की आस संजोये रहा। उसे अध्यापक की नौकरी मिल सकती थी, मगर यह काम उसे पसन्द नहीं था। सेहत ख़राब होने की वजह से उसे कोई सरकारी नौकरी नहीं मिल सकी और इसके अलावा ऐसी नौकरी में पहला वेतन मिलने तक उसे काफ़ी इन्तज़ार करना पड़ता। थोड़े में यह कि पोक्रोव्स्की को हर जगह असफलताओं का मुंह देखना पड़ा; वह चिड़चिड़ा हो गया। उसकी सेहत बिगड़ती जा रही थी, मगर वह इसकी तरफ़ कोई ध्यान नहीं देता था। पतझर का मौसम आ गया। हल्का-सा ओवरकोट पहने हुए वह हर दिन नौकरी की तलाश में, कोई काम पाने के लिये लोगों की मिन्नत-समाजत करने बाहर जाता और मन ही मन कुढ़ता रहता। उसके पांव भीगते रहते, बारिश में खुद भी भीग जाता और आख़िर उसने बिस्तर थाम लिया जिससे फिर कभी नहीं उठा... वह पतझर के मध्य में, अक्तूबर महीने के अन्त में इस दुनिया से चल बसा।

उसकी बीमारी के दौरान मैं लगभग पूरे वक़्त उसके कमरे में ही रहती, उसकी देख-भाल और टहल-सेवा करती। अक्सर रात-रात भर नहीं सोती थी। वह बहुत कम ही होश में होता, अक्सर सन्निपात की हालत में रहता। भगवान जाने वह क्या-क्या बोलता जाता – अपनी नौकरी के बारे में, किताबों, मेरे और अपने पिता के सम्बन्ध में... इन्हीं दिनों में मैंने उसकी परिस्थितियों के बारे में बहुत कुछ सुना जो पहले नहीं जानती थी और जिनके बारे में अनुमान भी नहीं लगा सकती थी। उसकी बीमारी के पहले दिनों में सभी अजीब ढंग से मेरी ओर देखते थे। आन्ना फ़्योदोरोव्ना तो सिर भी हिलाती। लेकिन मैं किसी भी तरह की झिझक या संकोच के बिना उनसे नज़रें मिलाती। पोक्रोव्स्की में मेरी दिलचस्पी के लिये बाद में उन्होंने मुझे भर्त्सना की दृष्टि से देखना छोड़ दिया। कम से कम मां का तो ऐसा ही रवैया हो गया था।

पोक्रोव्स्की कभी-कभी मुझे पहचानता, लेकिन ऐसा बहुत कम ही होता था। लगभग पूरे वक़्त वह बेहोशी की हालत में रहता। कभी-कभी तो वह सारी रात किसी से बहुत-बहुत देर तक अस्पष्ट और अजीब-से शब्दों में बातें करता रहता और उसके छोटे-से कमरे में उसकी खरखरी-सी आवाज़ मानो क़ब्र में से आती-सी प्रतीत होती। ऐसे मौक़ों पर मुझे बहुत डर लगता। आखिरी रात को तो वह खास तौर पर बहुत बेचैन रहा।

वह अत्यधिक कष्ट और पीड़ा सहता रहा, उसकी आहें-कराहें मेरे दिल के टुकड़े-टुकड़े किये दे रही थीं। घर में हर कोई डरा-सहमा-सा था। आन्ना फ़्योदोरोव्ना भगवान से प्रार्थना करती रही कि वह रोगी को जल्दी से उठा ले। डाक्टर को बुलाया गया और उसने कहा कि सुबह होते-होते रोगी अवश्य चल बसेगा।

पोक्रोव्स्की के पिता ने बेटे के कमरे के सामने बरामदे में ही सारी रात बितायी। वहां उसके लिये मामूली चटाई-सी बिछा दी गयी थी। वह रह-रहकर कमरे में जाता। उसे तो देखने से डर लगता था। इस दुख ने उसका ऐसा बुरा हाल कर दिया था कि वह बिल्कुल पत्थर और सर्वथा चेतनाहीन-सा प्रतीत होता था। भय से उसका सिर कांप रहा था, वह खुद भी पूरी तरह से कांप रहा था, लगातार कुछ फुसफुसाता-बुदबुदाता और अपने आप से बातें करता जा रहा था। मुझे लगता था कि वह दुख से पागल हो जायेगा।

पौ फटने के पहले मानसिक व्यथा से अत्यधिक क्लान्त बूढ़ा अपनी चटाई पर गहरी नींद सो गया। सात बजने के कुछ देर बाद बेटा आखिरी सांसें लेने लगा और मैंने पिता को जगा दिया। पोक्रोव्स्की बिल्कुल होश में था और उसने हम सब से विदा ली। बड़ी अजीब बात थी कि मैं रो नहीं पायी! लेकिन मेरा दिल फटा जा रहा था।

उसके अन्तिम क्षणों ने तो मुझे विशेष रूप से बहुत व्यथित किया, अत्यधिक यातना दी। अपनी लड़खड़ाती ज़बान से वह बहुत देर तक किसी चीज़ का अनुरोध करता रहा, किन्तु मैं उसके शब्दों का कोई अर्थ न समझ पायी। दुख से मेरा कलेजा मुंह को आ रहा था! वह एक घण्टे तक बेचैन रहा, किसी चीज़ के लिये

आकुल-व्याकुल होता रहा, अपने ठण्डे पड़ गये हाथों से उसने कोई संकेत करने का प्रयास किया, फिर से गिड़गिड़ाती, खरखरी तथा फटी-फटी आवाज़ में किसी बात का अनुरोध किया। किन्तु उसके शब्द असम्बद्ध ध्वनियों से अधिक कुछ नहीं थे और मैं फिर से कुछ न समझ पायी। मैंने सभी लोगों को बारी-बारी से उसके पास बुलाया और पानी पिलाया; लेकिन वह उदासी से सिर हिलाता रहा। आखिर मैं समझ ही गयी कि वह क्या चाहता है। वह यह चाह रहा था कि मैं परदा हटाकर झिलमिलियां ऊपर उठा दूं। शायद वह आखिरी बार दिन की रोशनी, सूरज की प्रकाश को देखना चाहता था। मैंने परदा हटा दिया, किन्तु मरनेवाले के बुझते जीवन-दीप की भांति नया दिन भी दुख और उदासी में डूबा-डूबा था। सूरज नहीं था, बादलों ने आकाश को कुहासे से ढक रखा था, उसके तेवर बिगड़े हुए थे, वह उदास और नीर भरे बादलों के कारण झुका-झुका था। खिड़कियों के शीशों पर बूंदा-बांदी हो रही थी और उन पर ठण्डे, गन्दे पानी की धारायें बह रही थीं। धुंधलका और अन्धेरा-अन्धेरा-सा था। बहुत ही क्षीण प्रकाश-किरणें कमरे में आ रही थीं और देव-प्रतिमा के सामने जल रहे दीप की कांपती लौ से बमुश्किल होड़ कर पा रही थीं। आखिरी सांसें लेनेवाले ने बहुत ही उदास-उदास नज़रों से मेरी ओर देखा और सिर हिलाया। क्षण भर बाद वह इस दुनिया से कूच कर गया।

कफ़न-दफ़न का सारा प्रबन्ध आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने किया। बहुत ही मामूली-सा ताबूत खरीदा गया और किराये की सस्ती-सी घोड़ा-गाड़ी बुलवाई गयी। आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने अपने सारे खर्च के बदले में मृत की सारी किताबों और सभी चीज़ों पर क़ब्ज़ा कर लिया। बूढ़े पोक्रोव्स्की ने उसके साथ झगड़ा किया, शोर मचाया, जितनी भी सम्भव हो सकीं, उतनी किताबें छीन लीं, उन्हें अपनी सभी जेबों में ठूंस लिया, टोप और अन्य जिस भी चीज़ में सम्भव हुआ भर लिया, तीन दिन तक उन्हें अपने साथ लिये घूमता रहा और जब गिरजाघर जाना था, तब भी उन्हें अपने से अलग नहीं किया। इन दिनों उसके होश-हवास ठिकाने नहीं थे, वह मानो पूरी तरह से अपनी सुध-बुध खो बैठा था और

अजीब-सी चिन्ता प्रकट करता हुआ ताबूत के इर्द-गिर्द मंडराता रहा। कभी तो वह मृत के सिर पर रखा हुआ मुकुट ठीक करता, कभी मोमबत्ती जलाता और कभी उसे बुझाता। साफ़ ज़ाहिर था कि उसके विचार किसी एक बात पर ढंग से रुक नहीं पा रहे थे। अन्त्येष्टि-प्रार्थना के समय न तो मां और न आन्ना फ्योदोरोव्ना ही गिरजे में आई। मां की तबीयत अच्छी नहीं थी, आन्ना फ्योदोरोव्ना चलने को बिल्कुल तैयार हो गयी थी, मगर बूढ़े पोक्रोव्स्की के साथ उसका झगड़ा हो गया और उसने इरादा बदल लिया। बस, मैं और बूढ़ा ही वहां थे। प्रार्थना के समय किसी भय ने मुझे जकड़ लिया – मानो यह भविष्य की पूर्वानुभूति थी। मैं बड़ी मुश्किल से ही प्रार्थना के अन्त तक गिरजे में खड़ी रह पायी। आख़िर ताबूत को बन्द किया गया, कीलें ठोंक दी गयीं और घोड़ा-गाड़ी उसे लेकर चल दी। मैं गली के सिरे तक ही उसके साथ-साथ रही। इसके बाद कोचवान ने घोड़ा दौड़ा दिया। बूढ़ा ज़ोर-ज़ोर से रोता हुआ गाड़ी के पीछे दौड़ने लगा। दौड़ने के कारण उसकी आवाज़ कांपती और बीच-बीच में टूट जाती थी। बेचारे का टोप गिर गया, मगर वह उसे उठाने के लिये नहीं रुका। बारिश से उसका सिर भीग रहा था, हवा तेज़ हो गयी थी, पाला चेहरे को काट रहा था। बूढ़ा तो जैसे इस बुरे मौसम को महसूस ही नहीं कर रहा था और रोता हुआ कभी तो गाड़ी के एक तरफ़, तो कभी दूसरी तरफ़ भाग रहा था। उसके जर्जर कोट के पल्लू पंखों की भांति हवा में लहरा रहे थे। उसकी सभी जेबों से किताबें बाहर निकली हुई थी; एक बड़ी-सी किताब वह अपने हाथ में लिये था और उसे कसकर पकड़े था। राहगीर अपनी टोपियां उतारते और छाती पर सलीब का निशान बनाते। कुछ लोग रुक जाते और हैरानी से बेचारे बूढ़े को ताकते रहते। किताबें रह-रहकर उसकी जेबों से निकलकर कीचड़ में गिर जातीं। लोग उसे रोकते, किताबों की तरफ़ इशारा करते, वह उन्हें उठाता और ताबूत के निकट पहुंचने के लिये फिर तेज़ी से दौड़ने लगता। सड़क के मोड़ पर कोई भिखारिन बुढ़िया ताबूत के पीछे-पीछे उसके साथ हो ली। आख़िर घोड़ा-गाड़ी मोड़ मुड़कर आंखों से ओझल हो गयी। मैं घर लौट चली। दुख से बुरी तरह निढाल मैं मां के सीने पर गिर पड़ी।

मैंने उसे अपनी बांहों में कस लिया, चूमा, सिसक-सिसककर रोने लगी, भयभीत-सी होकर उसे अपने साथ चिपटाती गयी मानो अपने जीवन के आख़िरी सहारे को अपनी बांहों में ही भरे रहना चाहती थी और मौत से उसकी रक्षा करना चाहती थी... किन्तु मौत तो मेरी बेचारी मां के सिर पर मंडरा रही थी! . . . .

. . . .

११ जून

कल द्वीप पर आपके साथ सैर के लिये मैं आपकी कितनी आभारी हूं, मकार अलेक्सेयेविच! वहां कितना अच्छा है, कितनी ताजगी और कैसी हरियाली है! एक अरसे से मैंने हरियाली नहीं देखी थी। जब मैं बीमार थी तो मुझे यही लगता था कि मैं मरनेवाली हूं और ज़रूर मर जाऊंगी। आप स्वयं ही निणर्य करें कि कल मुझे कैसी अनुभूति होनी चाहिये थी, क्या अनुभव करना चाहिये था मुझे! आप इस बात के लिये मुझ से नाराज़ नहीं होइयेगा कि कल मैं इतनी उदास-उदास थी। मैं बहुत खुश थी, मेरे मन को बड़ा चैन मिल रहा था, किन्तु अपने जीवन के सुखद-तम क्षणों में भी हमेशा ही न जाने किस कारण मैं उदास हो जाती हूं। और यह कि मैं रो पड़ी थी, इसको तो बिल्कुल महत्त्व न दीजिये। मैं खुद भी नहीं जानती कि किसलिये रोती रहती हूं। मैं बहुत दुखी रहती हूं, चिड़चिड़ापन महसूस करती हूं और मेरी अनुभूतियों पर भी मेरी ऐसी मनोदशा की छाप पड़ती रहती है। निर्मल, कुछ उदास-उदास-सा आकाश, डूबता हुआ सूरज, शाम की ख़ामोशी – कितना अच्छा था यह सब कुछ, किन्तु, – मुझे मालूम नहीं क्यों, – कल मेरी मनःस्थिति ही कुछ ऐसी थी कि मैंने सारी अनुभूतियों को दुखद और यातनापूर्ण ढंग से ग्रहण किया, दिल भर आया और आंसू छलक पड़े। किन्तु मैं आपको यह सब कुछ क्यों लिख रही हूं? मेरे हृदय के लिये यह समझ पाना भी कठिन है और इसे बयान करना तो और भी ज़्यादा मुश्किल है। लेकिन आप तो शायद मुझे समझ जायेंगे। आंसू भी और आह्लाद भी! सचमुच आप कितने दयालु हैं, मकार अले-

क्सेयेविच ! कल आप लगातार मेरी आंखों में झांकते रहे ताकि उनमें जो कुछ झलक रहा था, उसे पढ़ सकें और मेरे उल्लास से खुश होते रहे। मैं झाड़ियों, वीथी या जलधारा के पास, कहीं भी क्यों न जाती, आप बड़ी फुर्ती से मेरे सामने आ खड़े होते और मेरी आंखों को बहुत ध्यान से ऐसे देखते मानो मुझे अपनी जागीर दिखा रहे हों। यह इस बात का प्रमाण है कि आपका हृदय बहुत दयालु है, मकार अलेक्सेयेविच ! इसी के लिये मैं आपको प्यार करती हूं। तो विदा! मैं आज फिर बीमार हूं। कल मेरे पांव भीग गये और मुझे ठण्ड लग गयी। फ़ेदोरा की भी तबीयत अच्छी नहीं। तो हम दोनों ही मरीज़ बनी हुई हैं। मुझे भूलिये नहीं, हमारे यहां अधिक से अधिक आया करें।

आपकी

व०द०

१२ जून

मेरी प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना, मेरी गुड़िया !

मैंने तो यह सोचा था कि आप कल की सारी अनुभूतियों को बढ़िया कविता के रूप में लिख भेजेंगी, किन्तु आपने तो मामूली-सा एक पृष्ठ ही लिखा है। मैं यह कहना चाहता हूं कि आपने यद्यपि एक पृष्ठ ही लिखा है तथापि वह असाधारण रूप से अच्छा है और वर्णन बड़ा मधुर है। प्रकृति-चित्रण और भावनाओं को भी यानी सब कुछ बहुत अच्छे ढंग से व्यक्त किया गया है। लेकिन मेरे पास ऐसी प्रतिभा नहीं है। बेशक दस पन्ने काले कर डालूं, फिर भी कोई बात नहीं बनती, कुछ भी तो नहीं लिख पाता। मैं कोशिश करके देख चुका हूं। मेरी रानी, आपने लिखा है कि मैं दयालु व्यक्ति हूं, दूसरों के प्रति कठोर-क्रूर नहीं हूं, औरों का बुरा नहीं कर सकता, भगवान की सारी देन और प्रकृति को भी समझता हूं यानी आपने तरह-तरह से मेरी प्रशंसा की है। यह सच है, यह सब बिल्कुल सच है, मेरी गुड़िया। मैं वास्तव में ही वैसा हूं, जैसा कि आपने लिखा है और खुद भी यह जानता हूं। लेकिन जैसा कि आपने लिखा है, वैसा कुछ पढ़ते

ही मन अनायास विह्वल हो उठता है और इसके बाद ही मस्तिष्क में तरह-तरह के बोझल और परेशान करनेवाले विचार आने लगते हैं। तो आप मेरी बात सुनें, मेरी रानी, मैं आपको कुछ बताना चाहता हूं।

मैं यहां से शुरू करता हूं कि जब मैं नौकरी करने लगा तो मेरी उम्र सिर्फ़ सत्रह साल थी। जल्द ही यह काम करते हुए मुझे तीस साल हो जायेंगे। दफ़्तर की बहुत-सी वर्दियां फाड़ चुका हूं मैं; छोकरे से मर्द बना, समझदार हुआ, लोगों को जाना-समझा; कह सकता हूं कि इस दुनिया में जी चुका हूं, ऐसे जी चुका हूं कि कभी तो पुरस्कार देने के लिये मेरा नाम प्रस्तावित करने की भी बात चली। आप शायद यक़ीन नहीं करेंगी, लेकिन मैं झूठ नहीं बोल रहा हूं। तो मेरी रानी, बुराई करनेवाले भी मिल गये ! मेरी प्यारी, बेशक मैं मूढ़ और मूर्ख व्यक्ति हूं, लेकिन दिल तो मेरे पास भी दूसरों जैसा ही है। तो जानती हैं, वारेन्का, उस बुरे आदमी ने मेरे साथ क्या किया? उसने जो कुछ किया, बताते हुए शर्म आती है। यह पूछिये कि उसने ऐसा क्यों किया? इसलिये कि मैं ऐसा शान्त व्यक्ति हूं, इसलिये कि चुपचाप रहता हूं, इसलिये कि मैं ऐसा दयालु हूं! उसे यह सब अच्छा नहीं लगा और हो गया वह मेरे खिलाफ़ चालू। शुरुआत उसने ऐसे की – "मकार अलेक्सेयेविच, आप ऐसे हैं, वैसे हैं।" इसके बाद यह कहना शुरू किया – "मकार अलेक्सेयेविच से और आशा ही क्या की जा सकती है?" उसके बाद यह फ़तवा दिया जाने लगा – "यह तो मकार अलेक्सेयेविच की ही करतूत है!" तो देखती हैं न, मेरी प्यारी, मामले को कैसे आगे बढ़ाया गया – सभी बातों के लिये मकार अलेक्सेयेविच को ही दोष दिया जाने लगा। सारे दफ़्तर में मकार अलेक्सेयेविच की बुराइयों का ढिढोरा पीट दिया गया, मुझे एक तरह की गाली ही बना दिया गया। मेरे जूतों, वर्दी, बालों और आकृति तक पर रहम नहीं किया गया। सब कुछ उनकी पसन्द, उनकी मन-मर्ज़ी के मुताबिक़ बदला जाना चाहिये था! और यह सब एक ज़माने से हर दिन हो रहा है। मैं इसका आदी हो गया हूं, क्योंकि हर चीज़ का आदी हो जाता हूं, क्योंकि मैं शान्त व्यक्ति हूं, क्योंकि मैं छोटा आदमी हूं। लेकिन ऐसा सब क्यों है? मैंने किसके

साथ कोई बुराई की है? किसी का ओहदा छीन लिया? बड़े अफ़सरों के सामने किसी की निन्दा-चुगली की है? पुरस्कार पाने के लिये एड़ियां रगड़ी हैं? किसी तरह का कोई छल-फ़रेब किया है? आप भूलकर मेरे बारे में कभी ऐसा सोचें भी नहीं, मेरी प्यारी! मैं भला यह सब कर सकता हूं क्या? आप तनिक विचार तो करें, मेरी रानी, क्या मुझ में छल-कपट और महत्त्वाकांक्षा के लिये इतनी क्षमता भी है? तो फिर भगवान के लिये कोई बताये कि क्यों मुझ पर इस तरह का कीचड़ उछाला जा रहा है? आखिर आप तो मुझे एक अच्छा आदमी मानती हैं और आप इन सबसे कहीं ज्यादा अच्छी हैं, मेरी प्यारी। एक नागरिक के नाते हमारा सबसे बड़ा गुण क्या है? हाल ही में येवस्ताफ़ी इवानोविच किसी से अपनी बातचीत के दौरान कह रहा था कि पैसे बनाना, किसी भी तरह पैसे कमाना यही सबसे बड़ा नागरिक गुण है। येवस्ताफ़ी इवानोविच ने यह बात मज़ाक़ में कही थी (मैं जानता हूं कि यह मज़ाक़ था), लेकिन नैतिकता हमें यही सिखाती है कि हम किसी दूसरे पर बोझ न बनें। मैं किसी के लिये भी बोझ नहीं हूं! मैं ख़ुद अपनी रोटी कमाता हूं, बेशक मामूली-सी, कभी-कभी बासी-सूखी भी। किन्तु मैं उसे अपने गाढ़े पसीने से, क़ानूनी ढंग से कमाता हूं और इसके लिये कोई मेरी किसी तरह की लानत-मलामत नहीं कर सकता। लेकिन कोई चारा भी तो नहीं! मैं ख़ुद यह जानता हूं कि नक़ल करने का मामूली-सा काम करता हूं। फिर भी मैं इस पर गर्व करता हूं। मैं मेहनत करता हूं, पसीना बहाता हूं। भला इसमें क्या दोष है कि मैं नक़लनवीस हूं! नक़ल करना क्या कोई गुनाह है? "अरे, वह तो सिर्फ़ नक़ल करता है!" – "अरे, यह तो दफ़्तर का नक़ल करनेवाला चूहा है!" इसमें भला लज्जा-अपमान की कौनसी बात है? मेरी लिखावट इतनी अच्छी और साफ़ है कि देखकर जी ख़ुश होता है और बड़े साहब को पसन्द है! उनके सभी महत्त्वपूर्ण काग़ज़ों-पत्रों की मैं ही नक़ल तैयार करता हूं। रही अच्छी शैली की बात तो मैं ख़ुद यह जानता हूं कि वह कम्बख़्त मेरे पास नहीं है। इसीलिये तो मैं किसी ऊंचे पद पर नहीं पहुंच सका और, मेरी प्यारी, आपको भी सीधे-सादे ढंग से, किसी तरह के अलंकार के बिना वैसे ही लिख रहा

हूं, जैसे विचार मेरे मस्तिष्क में आते हैं... मैं यह सब कुछ जानता हूं, लेकिन अगर सभी साहित्य रचना करने लगें तो नक़ल कौन करेगा? यह है मेरा सवाल और, मेरी गुड़िया, आप से अनुरोध करता हूं कि आप मेरे इस प्रश्न का उत्तर दें। तो मैं कह सकता हूं कि मेरी भी जरूरत है, कि मेरे बिना काम नहीं चल सकता और किसी भले आदमी का उल्लू बनाने में कोई तुक नहीं। अगर उन्हें मुझ में चूहे से मिलता-जुलता कुछ नज़र आता है, तो बेशक वे मुझे चूहा ही कहें। लेकिन यह चूहा तो आवश्यक है, यह चूहा उपयोगी है, इस चूहे को सहेजा जाता है, इसे पुरस्कृत किया जाता है – तो ऐसा चूहा है यह! वैसे, मेरी गुड़िया, अब बहुत हो चुकी इस चूहे की चर्चा! मैं इसके बारे में लिखना नहीं चाहता था, योंही थोड़ा उत्तेजित हो उठा। कभी-कभी अपने प्रति न्याय कर लेना भी कुछ बुरा नहीं। तो विदा, मेरी प्यारी, मेरी बुलबुल, मेरे दिल का चैन, मेरी दयालु रानी! मैं आपके यहां आऊंगा, अवश्य ही आऊंगा, मेरी रोशनी। फ़िलहाल आप उदास नहीं हों। किताब लाऊंगा। तो विदा, वारेन्का।

सच्चे हृदय से आपका शुभचिन्तक
मकार देवुश्किन।

२० जून

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

मैं बहुत उतावली में आपको यह चिट्ठी लिख रही हूं, क्योंकि मुझे वक़्त पर काम पूरा करके देना है। देखिये, एक अच्छा सौदा करने की सम्भावना पैदा हुई है। फ़ेदोरा ने बताया है कि उसकी जान-पहचान का कोई आदमी अपनी बिल्कुल नयी वर्दी बेचना चाह रहा है, पतलून, वास्कट और टोपी सहित। फ़ेदोरा का कहना है कि वह काफ़ी सस्ती भी है। आप उसे ख़रीद लें न! अब तो आपका हाथ तंग नहीं है, आपके पास पैसे भी हैं – आप ख़ुद ही कहते हैं कि आपके पास पैसे हैं। कृपया कंजूसी नहीं कीजिये। इस सबकी आपको जरूरत है। ज़रा अपने पर नज़र डालिये तो!

कैसे पुराने-धुराने कपड़े पहने रहते हैं। शर्म की बात है! जहां-तहां पैबन्द लगे हुए हैं। नया सूट तो आपके पास है नहीं, यद्यपि आप विश्वास दिलाते हैं कि है। भगवान जाने, क्या हुआ आपका वह नया सूट। तो मेरी बात मानिये, कृपया उसे खरीद लीजिये। मेरी खातिर ऐसा कीजिये, अगर मुझे प्यार करते हैं तो खरीद लीजिये।

आपने उपहार के रूप में मुझे कुछ शमीज़ें भेजी हैं। लेकिन सुनिये तो, मकार अलेक्सेयेविच, आपका तो ऐसे दीवाला निकल जायेगा। यह भी कोई मज़ाक़ है कि आप मुझ पर इतना पैसा खर्च करते हैं – ओह, कितना अधिक पैसा! ओह, कैसे उड़ाते हैं आप अपना पैसा! मुझे इन चीज़ों की ज़रूरत नहीं, ये बिल्कुल फ़ालतू हैं। मैं जानती हूं, मुझे यक़ीन है कि आप मुझे प्यार करते हैं। सच कहती हूं कि उपहारों द्वारा मुझे इसकी याद दिलाने की बिल्कुल ज़रूरत नहीं। इन्हें स्वीकार करते हुए मुझे दुख होता है। मैं जानती हूं कि इसके लिये आपको कितना त्याग करना पड़ता है। बस, एक बार ही हमेशा के लिये यह बात तय हो गयी। सुनते हैं न? आपसे अनुरोध, आपकी मिन्नत करती हूं। मकार अलेक्सेयेविच, आपने यह इच्छा प्रकट की है कि मैं आपको अपनी डायरी का अगला भाग भेजूं, उसे पूरा कर दूं। मैं नहीं जानती कि कैसे वह सब लिख पाई जो मेरे पास लिखा हुआ है! किन्तु अब अपने अतीत की चर्चा करने के लिये मुझ में शक्ति ही नहीं है, मैं तो उसके बारे में सोचना तक नहीं चाहती। अतीत की स्मृतियों से ही मेरा दिल कांपने लगता है। अपनी बेचारी मां की चर्चा करना, जो अपनी लाचार बिटिया को इन दरिन्दों के हाथों में छोड़ गयी, मेरे लिये सबसे ज्यादा दुखद है। याद करने भर से मेरा दिल खून के आंसू रोने लगता है। यह सब कुछ अभी बहुत ताज़ा है। मैं इसे भूल नहीं पाई हूं, शान्त नहीं हो पाई हूं, यद्यपि इसे एक साल से अधिक समय हो चुका है। लेकिन आप तो सब कुछ जानते ही हैं।

आन्ना फ्योदोरोव्ना का अब क्या रवैया है, मैं इसके बारे में पहले भी कुछ लिख चुकी हूं। वह तो मुझे ही कृतघ्न बताती है और यह कि श्रीमान बीकोव के साथ मिलकर उसने कुछ नहीं

किया। वह यह कहते हुए मुझे अपने पास बुला रही है कि मैं भिखारिन बन गयी हूं, बुरे रास्ते पर चल रही हूं। उसका कहना है कि अगर मैं उसके पास लौट जाऊं तो वह श्रीमान बीकोव के साथ मेरा सारा मामला सुलझा देने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेती है और वह बीकोव को मेरे सामने अपना क़ुसूर मानने के लिये भी विवश करेगी। वह कहती है कि श्रीमान बीकोव मुझे दहेज देना चाहते हैं। मुझे ज़रूरत नहीं उसकी मुझे यहां आपके साथ, दयालु फ़ेदोरा के यहां बहुत अच्छा लगता है जो अपने लगाव से मुझे भगवान को प्यारी हो गयी मेरी आया की याद दिलाती है। आप बेशक मेरे दूर के रिश्तेदार हैं, किन्तु आपके नाम से मेरी रक्षा होती है। वे मेरे कोई नहीं। अगर भूल सकी तो उन्हें भूल जाऊंगी। वे मुझ से और क्या चाहते हैं? फ़ेदोरा का कहना है कि यह सब बकवास है और आखिर वे मेरा पिंड छोड़ देंगे। भगवान करे कि ऐसा ही हो!

व०द०

२१ जून

मेरी मैना, मेरी प्यारी,

लिखना चाहता हूं, किन्तु समझ में नहीं आ रहा कि कहां से आरम्भ करूं। कितनी अजीब बात है, मेरी रानी, कि हम दोनों अब इस तरह से जी रहे हैं। मेरा अभिप्राय यह है कि पहले कभी भी मेरे दिन ऐसी खुशी में नहीं बीते। ऐसे लगता है कि भगवान की कृपा से ही मुझे घर और परिवार मिला है। मेरी अच्छी, मेरी प्यारी गुड़िया! आप उन चार शमीज़ों का, जो मैंने भेजी हैं, इतना लम्बा-चौड़ा क़िस्सा क्यों बना रही हैं। मुझे फ़ेदोरा से पता चल गया था कि आपको उनकी ज़रूरत है। मेरी प्यारी, आपको खुशी देकर तो मुझे खास खुशी होती है। यह तो मेरी प्रसन्नता है, आप इसे मेरे पास रहने दें, इसे मुझ से छीनने की कोशिश नहीं करें, मेरा विरोध नहीं करें, मेरी प्यारी। मेरी ज़िन्दगी में खुशी के ऐसे दिन कभी नहीं आये थे, मेरी रानी। अब तो मैं

सोसाइटी में भी आने-जाने लगा। हां। पहली बात तो यह है कि अब मैं अकेला नहीं होता हूं, क्योंकि आप भी मेरे बिल्कुल निकट रहती हैं, मेरे दिल को चैन देती रहती हैं। दूसरे यह कि एक किराये-दार, मेरे पड़ोसी राताज्यायेव ने, उसी अफ़सर ने जिसके यहां साहित्यिक गोष्ठियां हुआ करती हैं, मुझे आज शाम को अपने यहां आमन्त्रित किया है। आज उसके यहां बैठक होगी, साहित्य पढ़ा जायेगा। तो ऐसे हाल-चाल हैं अब हमारे, मेरी प्यारी! तो विदा। मैने तो किसी विशेष उद्देश्य के बिना यह सब लिख दिया है। सिर्फ़ इसलिये कि आपको अपने कुशल-मंगल की सूचना दे दूं। मेरी जान, आपने तेरेज़ा से कहलवाया है कि आपको कसीदाकारी के लिये रंगीन रेशमी धागे की ज़रूरत है। अवश्य ही खरीद लाऊंगा, मेरी रानी, अवश्य ही खरीद लाऊंगा रेशमी धागे। कल ही आपकी इच्छा पूरी करने का सुख प्राप्त कर सकूंगा। मुझे तो यह भी मालूम है कि उन्हें कहां खरीदा जा सकता है।

आपका सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

२२ जून

मेरी प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मेरी रानी, आपको यह सूचित करना चाहता हूं कि हमारे मकान में एक दुखद, सचमुच बहुत दुखद बात हो गयी है! सुबह के चार बजने के कुछ देर बाद गोर्श्कोव का छोटा-सा बेटा चल बसा। मुझे अच्छी तरह से यह मालूम नहीं कि किस बीमारी से उसकी मृत्यु हुई। शायद लाल बुखार या कुछ ऐसा ही था। मैं अफ़सोस करने उनके यहां गया था। ओह मेरी प्यारी, कितनी भयंकर ग़रीबी है उनके यहां! और कैसी गड़बड़ है! इसमें हैरानी की बात भी कुछ नहीं, क्योंकि पूरा परिवार एक ही कमरे में रहता है और थोड़ी सुविधा के लिये उन्होंने बीच में परदे टांग रखे हैं! उनके यहां तो ताबूत भी आ गया था, मामूली-सा, मगर ढंग का। उन्होंने बना-बनाया ही ख़रीद लिया था। लड़का कोई नौ साल का था और उससे बड़ी उम्मीदें की जा रही थीं। इन लोगों को देखकर दिल भर भर आता था, वारेन्का! मां रोती नहीं थी,

लेकिन बड़ी उदास थी, बेचारी! शायद उनको इस चीज़ से राहत मिली है कि चलो एक बच्चे का बोझ तो कम हुआ। उनके दो बच्चे और हैं – एक गोद का और छः साल से कुछ अधिक उम्र की बच्ची। ज़रा ख्याल तो करें कि मां-बाप के दिल पर कैसी भारी गुज़रती होगी जब वे देखते होंगे कि बच्चा कष्ट उठा रहा है और वे उसकी कोई मदद भी नहीं कर सकते! बाप फटा-पुराना कोट पहने हुए टूटी कुर्सी पर बैठा था। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। शायद दुख के कारण नहीं, बल्कि आदत की वजह से, शायद आंखें खराब हैं। बड़ा अजीब-सा आदमी है वह! उससे बात करो तो शर्माता और झेंपता रहता है और उससे जवाब देते नहीं बनता। उनकी छोटी-सी बच्ची ताबूत से टेक लगाये खड़ी थी। बेचारी बड़ी उदास-उदास और सोच में डूबी-डूबी! प्यारी वारेन्का, बच्चे को सोच में डूबे देखना मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता, दिल को कुछ होने लगता है! चिथड़ों की बनी हुई एक गुड़िया-सी उसके पास पड़ी थी – वह उससे खेलती नहीं थी। वह तो होंठों पर उंगली रखे बुत बनी खड़ी थी। हमारी मकान-मालकिन ने उसे टॉफ़ी दी, बच्ची ने ले ली, मगर खाई नहीं। दिल को बहुत अफ़सोस होता है, वारेन्का! ठीक है न?

मकार देवुश्किन।

२५ जून

प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

आपकी किताब लौटा रही हूं। कैसी बेहूदा किताब है यह! इसे तो हाथ में लेना भी पाप है! कहां से ढूंढ़ लाये आप ऐसा हीरा? मज़ाक़ की बात अलग, क्या सचमुच आपको ऐसी किताबें अच्छी लगती हैं, मकार अलेक्सेयेविच? मुझ से किसी ने कोई अच्छी किताब भेजने का वादा किया है। अगर चाहेंगे, तो पढ़ने के लिये आपके पास भी भेज दूंगी। तो अब विदा। सच, और लिखने की बिल्कुल फ़ुरसत नहीं है।

व०द०

२६ जून

प्यारी वारेन्का,

बात यह है, मेरी रानी, कि वह किताब तो मैंने वास्तव में पढ़ी ही नहीं थी। हां, योंही कुछ पन्ने उलटे-पलटे थे, लगा कि हंसने-हंसाने, मन बहलाने के लिये लिखी गयी किताब है। सोचा कि आपका जी खुश होगा, शायद आपको अच्छी लगे। इसलिये आपके पास भेज दी।

अब राताज्यायेव ने वादा किया है कि कुछ वास्तविक साहित्यिक रचनायें पढ़ने को देगा और मेरी प्यारी, आपके पास पढ़ने को कुछ अच्छी किताबें हो जायेंगी। राताज्यायेव तो इस मामले का पारखी है – बहुत ही बड़ा पंडित है। खुद लिखता है, और वाह, क्या खूब लिखता है! जादू है उसकी क़लम में और शैली के तो कहने ही क्या! एकदम अर्थहीन, बिल्कुल मामूली, एकदम साधारण शब्द में भी, जो मैं कभी-कभी फ़ाल्दोनी या तेरेज़ा से कहता हूं, वह जान डाल देता है। मैं उसके यहां साहित्य गोष्ठियों में भी जाता हूं। हम धूम्रपान करते रहते हैं और वह अपनी रचनायें पढ़कर सुनाता रहता है, पांच-पांच घण्टे तक, और हम सुनते रहते हैं। साहित्य नहीं, रस की धारा बहती रहती है! वाह, वाह, मज़ा आ जाता है। लगता है कि फूल बरस रहे हैं, सचमुच फूल और हर पृष्ठ से मानो गुलदस्ता बनाया जा सकता है! वह बड़ा मिलनसार, बहुत दयालु और स्नेहशील है। उसकी तुलना में भला मैं क्या हूं? कुछ भी तो नहीं। वह ठहरा नामी आदमी, और मैं? मैं तो कुछ भी नहीं, मेरा तो अस्तित्व ही नहीं। मुझ पर भी वह बहुत मेहरबान है। मैं उसके लिये कुछ नक़ल कर देता हूं। वारेन्का, आप यह नहीं सोचियेगा कि इसमें भी कोई चालाकी है, कि वह इसीलिये मुझ पर मेहरबान रहता है कि मैं उसकी रचनाओं की नक़ल कर देता हूं। आप ऐसी घटिया बातों पर यक़ीन नहीं कीजिये, मेरी प्यारी, बिल्कुल यक़ीन नहीं कीजिये! नहीं, ऐसा कुछ नहीं। मैं तो खुद ही, अपनी इच्छा से, उसकी खुशी के लिये ऐसा करता हूं और अगर वह मुझ पर मेहरबान रहता है तो मेरी खुशी के लिये। मेरी गुड़िया, मैं लोगों के व्यवहार की नज़ाकत को तो समझता हूं। वह दयालु, बहुत दयालु व्यक्ति है और कमाल

का लेखक है।

साहित्य अच्छी, बहुत अच्छी चीज़ है, वारेन्का, दो दिन पहले मुझे इसका पता चला। बड़ी गहरी चीज़ है यह! साहित्य लोगों का दिल मज़बूत करता है, सीख देता है और तरह-तरह की दूसरी बहुत-सी बातें होती हैं किताब में। बहुत ढंग की बातें लिखी होती हैं! साहित्य – यह तो चित्र है यानी एक तरह का चित्र और दर्पण। उसमें तीव्र भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है, सूक्ष्म आलोचना, नसीहत भी और वह दस्तावेज़ भी होता है। मैंने यह सब उन्हीं लोगों से सीखा है। साफ़-साफ़ कहूं, मेरी रानी, तो सचाई यह है कि उनके बीच बैठकर उनकी बातें सुनता रहता हूं (उन्हीं की तरह पाइप से धुआं उड़ाते हुए) और जैसे ही वे विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद और बहस शुरू करते हैं तो मेरे मुंह पर ताला लग जाता है। मेरी प्यारी, उस वक़्त तो मुझे खामोश ही रहना पड़ता है। ऐसे क्षणों में मैं अपने को बिल्कुल बुद्धू, महामूर्ख अनुभव करता हूं। मुझे खुद अपने पर शर्म आती है। सारी शाम मत्था-पच्ची करता रहता हूं कि साझी बहस में मैं भी एकाध शब्द जोड़ सकूं, लेकिन वह एकाध शब्द भी तो मानो जान-बूझकर दिमाग़ में नहीं आता! खुद अपने पर तरस आता है, वारेन्का, कि मुझ में यह नहीं है, वह नहीं है और मानो वह कहावत लागू होने लगती है – उम्र गंवाई, अक़्ल न आई। अपने फ़ुरसत के वक़्त में मैं अब क्या करता हूं? उल्लुओं की तरह सोता रहता हूं। बेकार सोते रहने के बजाय कोई ढंग का काम कर सकता था – बैठकर कुछ लिखता रहता। अपने को लाभ और दूसरों का भी भला होता। मेरी रानी, आप कल्पना तो करें कि इस काम के लिये वे कितने पैसे लेते हैं। भगवान उनका भला करे! मिसाल के तौर पर राताज्यायेव को ही लिया जा सकता है। कितने पैसे वह लेता है। एक फ़ारमा लिख डालना उसके लिये क्या मानी रखता है? किसी-किसी दिन वह पांच फ़ारमे तक लिख डालता है और कहता है कि हर फ़ारमे के लिये तीन सौ रूबल लेता है। अगर कोई बहुत ही दिलचस्प क़िस्सा या कौतूहल बढ़ानेवाली कहानी हो तो वह एक फ़ारमे के पांच सौ रूबल तक लेता है। बेशक कहीं से भी लाओ, लेकिन वह पांच सौ से कौड़ी कम नहीं लेगा। नहीं तो अगली बार वह

एक हज़ार से कम में बात नहीं करेगा! क्यों, कैसी रही, वरवारा अलेक्सेयेव्ना, इतना ही नहीं! उसके पास एक छोटी-सी कॉपी है जिसमें कवितायें लिखी हुई हैं, छोटी-छोटी कविताएं। वह उसके लिये सात हज़ार रूबल मांगता है, मेरी प्यारी, सात हज़ार रूबल! यह तो किसी जागीर, किसी बढ़िया हवेली की क़ीमत है! उसका कहना है कि कविताओं की उस कॉपी के लिये उसे पांच हज़ार मिल रहे हैं, लेकिन वह लेने को तैयार नहीं। मैं उसे अक़्ल देता हूं कि भैया, पांच हज़ार देते हैं तो वही ले लो और क़िस्सा खत्म करो। पांच हज़ार तो कोई छोटी-सी रक़म नहीं है! लेकिन वह कहता है कि वे चोर के बच्चे सात हज़ार ही देकर रहेंगे। है न खासा चलता पुरज़ा!

अब चूंकि यह चर्चा चल पड़ी है, तो लीजिये, मैं आपको 'इतालवी प्रेम-भावनायें' से कुछ अंश लिख भेजता हूं। यह राताज्यायेव की एक रचना का नाम है। वारेन्का, इसे पढ़कर आप स्वयं ही उसके बारे में निर्णय कर लें।

"...व्लादीमिर सिहरा, उन्मादी प्रेम-भावना उसके अंग-अंग में व्याप्त हो गयी, उसकी नसों में रक्त तेज़ी से दौड़ने लगा...

"'काउंटेस,' वह चिल्ला उठा, 'काउंटेस! आप जानती हैं कि कैसी तूफ़ानी है यह प्रेम भावना, कितना असीम है यह उन्माद? नहीं, मेरे सपनों ने मुझे धोखा नहीं दिया! मैं प्यार करता हूं, पागलों की तरह, दीवानों की तरह प्यार करता है। तुम्हारे पति के शरीर का सारा रक्त भी मेरी आत्मा की उन्मादी, अत्यधिक व्याकुल प्यास को तृप्त नहीं कर सकता! छोटी-मोटी बाधायें मेरे अंग-अंग को झुलसती, धधकती, भयानक आग के रास्ते में नहीं आ सकतीं। ओ, ज़िनाईदा, ज़िनाईदा!'

"'व्लादीमिर!' अपनी सुध-बुध खोये हुए काउंटेस उसके कंधे पर सिर रखकर फुसफुसायी...

"'ज़िनाईदा!' व्लादीमिर उल्लास से दीवाना होकर चिल्ला उठा।

"उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़क रहा था। प्रेम की वेदी पर वासना की ज्वाला धधक उठी थी और क़िस्मत के मारे इन

दोनों प्रेमियों को झुलसे दे रही थी।

"'व्लादीमिर!' काउंटेस दीवानगी की हालत में फुस-फुसायी। उसकी सांस तेज़ हो गयी थी, गाल दहक रहे थे और आंखों में वासना की आग जल रही थी... इस तरह एक नया, भयानक मिलन सम्पूर्ण हुआ! . . . .

. . . .

"आध घण्टे बाद बूढ़े काउंट ने पत्नी के कक्ष में प्रवेश किया।

"'मेरी प्यारी, क्या प्यारे मेहमान के लिये समोवार गर्माने का आदेश दूं?' उसने पत्नी का गाल थपथपाते हुए पूछा।"

तो प्यारी वारेन्का, अब मैं आपसे पूछता हूं कि कैसी लगी आपको यह रचना? यह सही है कि इसमें सीमा का कुछ उल्लंघन हुआ है, लेकिन है बढ़िया! सच बढ़िया है, बहुत बढ़िया! आपकी अनुमति से मैं उसकी उपन्यासिका 'येर्माक और ज़ुलेईका' का भी एक अंश लिख भेजता हूं।

मेरी प्यारी, आप यह कल्पना करें कि साइबेरिया का वहशी और भयानक विजेता येर्माक साइबेरिया के ज़ार कुचुम की बेटी ज़ुलेईका को प्यार करने लगता है जो उसकी बन्दी है। जैसा कि आप देख रही हैं, ज़ार इवान रौद्र के ज़माने की याद ताज़ा करती है यह कहानी। तो यहां प्रस्तुत है येर्माक और ज़ुलेईका का वार्तालाप –

"'तुम मुझे प्यार करती हो न, ज़ुलेईका! ओह, कहो, एक बार फिर से कहो!'

"'मैं तुम्हें प्यार करती हूं, येर्माक,' ज़ुलेईका बुदबुदायी।

"'मेरे अल्लाह, शुक्रगुज़ार हूं मैं तेरा! मैं बेहद खुशनसीब हूं!.. तुमने मुझे वह दिया है जिसके लिये एक मुद्दत से मेरी रूह तड़प रही थी। तो यहां ले आये हो तुम मुझे मेरी क़िस्मत के सितारे, इसलिये ले आये हो तुम मुझे उराल पहाड़ों के पार। मैं सारी दुनिया को अपनी ज़ुलेईका दिखाऊंगा और सिरफ़िरे ज़ालिम लोग मुझ पर उंगली उठाने की हिम्मत नहीं कर पायेंगे! काश, वे समझ सकते उसकी कोमल आत्मा की छिपी हुई तड़प को! काश, वे

मेरी जुलेईका के आंसू की एक बूंद में एक पूरी कविता पढ़ सकते! ओह, लाओ, मैं अपने चुम्बन से आंसू की इस बूंद को पी लूं, स्वर्गीय आंसू की इस बूंद को!'

"'येर्माक,' जुलेईका बोली, 'दुनिया बड़ी ज़ालिम है और लोग बड़े अन्यायी! वे हमें सतायेंगे, वे हम पर कीचड़ उछालेंगे, मेरे प्यारे येर्माक! अपने प्यारे साइबेरिया की बर्फ़ और अपने पिता के तम्बू में पलकर बड़ी हुई मैं बेचारी युवती तुम्हारी भावनाहीन, कठोर, निर्दयी और घमण्डी दुनिया का सामना कैसे करूंगी? लोग मुझे नहीं समझ पायेंगे, मेरे दिल के राजा, मेरे प्रियतम!'

"'तब मुझ कज़्ज़ाक की तलवार उनकी गर्दनों पर गिरेगी,' आंखों से अंगारे बरसाता हुआ येर्माक ज़ोर से चिल्ला उठा।"

मेरी वारेन्का, ज़रा सोचो कि उस वक़्त येर्माक की क्या हालत हुई होगी जब उसे यह पता चला कि उसकी जुलेईका को कत्ल कर दिया गया है। अन्धे और बूढ़े कुचुम ने रात के अंधेरे में येर्माक की ग़ैरहाज़िरी में उसके तम्बू में घुसकर अपनी बेटी को कत्ल कर डाला। इस तरह से उसने येर्माक पर, जिसने उसका ताज-तख़्त छीन लिया था, घातक चोट की।

"'मुझे पत्थर पर लोहे की चमक देखना अच्छा लगता है!' अपने इस्पाती छुरे को पत्थर पर तेज़ करते हुए येर्माक पागलों की तरह चिल्ला उठा। 'मुझे उनका ख़ून चाहिये, उनका ख़ून! मैं उनके टुकड़े-टुकड़े कर डालूंगा, उनके टुकड़े-टुकड़े!!!'"

इसके बाद येर्माक, जो अपनी जुलेईका की मौत का दुख सहन नहीं कर पाया, इरतिश नदी में कूदकर अपनी जान दे देता है और कहानी ख़त्म हो जाती है।

और यह रहा छोटा-सा अंश जो मज़ाक़िया अन्दाज में लिखा गया है और जिसका उद्देश्य केवल हंसाना ही है–

"आप इवान प्रोकोफ़्येविच जोल्तोपूज़ को जानते हैं? यह वही है जिसने दांतों से प्रोकोफ़ी इवानोविच का पांव काट लिया था। इवान प्रोकोफ़्येविच बहुत टेढे मिज़ाज का आदमी है, लेकिन

उसमें दुर्लभ गुण हैं! इसके विपरीत प्रोकोफ़ी इवानोविच को मूली के साथ शहद बेहद पसन्द है। जब पेलागेया अन्तोनोव्ना की उससे जानपहचान थी... आप पेलागेया अन्तोनोव्ना को जानते हैं? अरे, यह वही है जो हमेशा अपना स्कर्ट उलटा पहनती है।"

यह तो बहुत हास्यपूर्ण है, वारेन्का, बहुत हास्यपूर्ण। जब उसने हमें यह क़िस्सा पढ़कर सुनाया तो हम हंसी के मारे लोट-पोट हो गये! ऐसा है वह, भगवान उसका भला करे! वैसे, मेरी रानी, वह बेशक कुछ कल्पना से काम लेता है और चुटकियां लेना भी ख़ूब जानता है, लेकिन दूसरी ओर बड़ी सरलता और सादगी है उसमें, अश्लीलता और विचारों की अत्यधिक छूट नहीं है उसमें। यहां इस बात का उल्लेख भी बहुत ज़रूरी है, मेरी रानी, कि राताज़्यायेव सदाचारी व्यक्ति है, दूसरे लेखकों जैसा नहीं और इसीलिये बहुत बढ़िया लेखक है।

हां, और अगर सचमुच ही दिमाग़ में कभी कोई विचार आ जाये... मेरा मतलब यह कि अगर मैं सचमुच ही कभी कुछ लिख डालूं, तब क्या होगा? उदाहरण के लिये 'मकार देवुश्किन की कवितायें' शीर्षक से कोई पुस्तक छप जाये! तब आप क्या कहेंगी, मेरे नन्हे फ़रिश्ते? क्या सोचेंगी आप, कैसे विचार आपके मन में आयेंगे? अपने बारे में तो यह कह सकता हूं कि ज्योंही ऐसी पुस्तक निकलेगी, मैं तो भूलकर भी नेव्स्की सड़क पर अपनी सूरत दिखाने की हिम्मत नहीं करूंगा। सोचिये तो, उस समय कैसा लगेगा जब हर कोई यह कहेगा कि साहित्यकार और कवि देवुश्किन जा रहा है, कि यही है देवुश्किन! तब, उदाहरण के लिये, मैं अपने जूतों का क्या करूंगा? वैसे मैं आपको, मेरी रानी, लगे हाथों यह भी बता दूं कि मेरे जूतों पर हमेशा चिप्पियां लगी रहती हैं और सच कहूं तो उनके तले भी कभी-कभी अच्छी हालत में नहीं होते। तब क्या होगा, जब सब यह जान जायेंगे कि साहित्यकार देवुश्किन के जूतों पर चिप्पियां लगी हुई हैं! किसी बड़ी काउंटेस या प्रिंसेस को इसका पता चलेगा तो वह क्या कहेगी? उसका तो शायद ध्यान नहीं जायेगा, क्योंकि जैसा कि मैं सोचता हूं, काउंटेसें जूतों में दिलचस्पी नहीं लेतीं, ख़ास तौर पर मामूली

कर्मचारियों के जूतों में (क्योंकि जूतों जूतों में भी फ़र्क़ होता है), फिर भी उसे सब कुछ बता दिया जायेगा, मेरे अपने ही दोस्त मेरा भंडाफोड़ कर देंगे। राताज़्यायेव ने ही सबसे पहले ऐसा किया होता। वह काउंटेस व० के यहां जाता रहता है, कहता है कि किसी प्रकार की अनुमति और औपचारिकता के बिना वह उसके यहां चला जाता है। उसका कहना है कि वह बहुत अच्छी, साहित्य में बड़ी रुचि रखनेवाली महिला है। बड़ा तेज़ है यह राता-ज़्यायेव!

वैसे अब इस बात की काफ़ी चर्चा हो चुकी। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैंने तो यह सब मनोरंजन के लिये, आपका दिल बहलाने को लिख दिया है। विदा, मेरी रानी! मैंने यहां आपको बहुत कुछ लिख डाला है, लेकिन यह इसलिये कि आज मैं बहुत ही अच्छे मूड में हूं। आज हम सबने राताज़्यायेव के यहां ही खाना खाया। (बड़े शैतान हैं ये, मेरी रानी!) बड़ी ही रंगीनी में थे आज ये... अब इसके बारे में आपको क्या लिखूं! देखिये, आप मेरे बारे में कोई उलटी-सीधी बात नहीं सोच लीजियेगा, वारेन्का। मैंने तो योंही यह चर्चा कर दी है। किताबें भेजूंगा, जरूर भेजूंगा... यहां लोग आजकल पोल-दे-कोक की एक रचना पढ़ रहे हैं, लेकिन यह किताब मैं आपको, मेरी रानी, नहीं भेजूंगा... नहीं, नहीं, वह आपके लायक़ नहीं है। मेरी रानी, सुना है कि पीटर्सबर्ग के सभी आलोचक इस लेखक के कारण बौखला उठे हैं। आपको एक पौंड मिठाई भेज रहा हूं जो ख़ास तौर पर आप ही के लिये ख़रीदी है। मेरी प्यारी, इसे खाइये और खाते समय हर बार मुझे याद कीजिये। लेकिन टॉफ़ियों को चबाइये नहीं, केवल चूसिये, वरना आपके दांतों में दर्द होने लगेगा। शायद आपको चीनी चढ़े फल पसन्द हैं? आप लिखिये। तो विदा, विदा। प्रभु ईसा की आप पर सदा कृपादृष्टि बनी रहे, मेरी रानी। मैं सदा ही रहूंगा

आपका सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

२७ जून

प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

फ़ेदोरा कहती है कि अगर मैं चाहूं तो कुछ लोग ख़ुशी से मेरी मदद कर सकते हैं और मुझे एक घर में शिक्षिका की अच्छी नौकरी दिलवा सकते हैं। आपका क्या ख़्याल है, मेरे मित्र, मैं जाऊं या न जाऊं? बेशक तब मैं आप पर बोझ नहीं बनी रहूंगी और लगता है कि नौकरी भी अच्छी है। किन्तु दूसरी ओर, किसी अपरिचित घर में जाते हुए दिल डरता है। वे कोई ज़मींदार लोग हैं। मेरे बारे में जानकारी पाना चाहेंगे, पूछ-ताछ शुरू कर देंगे और तब मैं क्या जवाब दूंगी? इसके अलावा मैं लोगों से दूर भागती हूं, उनसे कतराती-घबराती हूं, अभ्यस्त स्थान पर ही देर तक रहना मुझे अच्छा लगता है। जहां की आदत बन जाये, वहीं मन ख़ुश रहता है। बेशक दुख-मुसीबत की ज़िन्दगी है, फिर भी वहीं अच्छा है। इसके अतिरिक्त, कहीं दूर जाने की बात है; और यह भी भगवान जाने कि क्या काम करना पड़ेगा, कहीं बच्चों की आया-गिरी ही न करनी पड़े। फिर वे तो लोग भी कुछ टेढ़े हैं, दो साल में तीसरी शिक्षिका रख रहे हैं। भगवान के लिये मुझे सलाह दीजिये, मकार अलेक्सेयेविच, मैं वहां जाऊं या नहीं? आप स्वयं मेरे यहां कभी क्यों नहीं आते? बहुत कम ही सूरत दिखाते हैं। बस, इतवार को प्रार्थना के समय गिरजाघर में ही भेंट होती है। आप भी लोगों से कैसे दूर भागते हैं! बिल्कुल मेरे जैसे ही हैं! मैं तो लगभग आपकी अपनी ही हूं। आप मुझे प्यार नहीं करते हैं, मकार अलेक्सेयेविच, और मुझ अकेली का कभी-कभी मन बहुत उदास हो जाता है। कभी-कभी, ख़ास तौर पर शामों को बिल्कुल अकेली बैठी रहती हूं। फ़ेदोरा कहीं चली जाती है। बैठी रहती हूं, सोचती रहती हूं, सोचती जाती हूं – सारी पुरानी बातें याद आने लगती हैं, दुखद और सुखद भी। सब कुछ आंखों के सामने उभरने लगता है, मानो कुहासे में से झलक दिखाने लगता है। परिचित चेहरे नज़र आते हैं (मैं उन्हें बिल्कुल साफ़ तौर पर देखती हूं), मां सबसे ज्यादा दिखाई देती है... और कैसे-कैसे अजीब सपने आते हैं मुझे! मैं अनुभव करती हूं कि मेरी

सेहत बहुत ख़राब हो गयी है। मैं इतनी कमज़ोर हूं कि आज सुबह जब मैं बिस्तर से उठी तो मुझे मूर्च्छा आ गयी। इसके अलावा मुझे इतनी बुरी खांसी है! मैं महसूस करती हूं, मैं जानती हूं कि जल्द ही मर जाऊंगी। कौन मुझे दफ़नायेगा? कौन मेरे जनाज़े के पीछे जायेगा? कौन मेरे लिये दुखी होगा, आंसू बहायेगा? शायद मुझे अजनबी जगह पर, अजनबी घर और अजनबी लोगों के बीच मरना होगा! हे भगवान, कैसी मुसीबत है यह ज़िन्दगी भी! मेरे दोस्त, आप लगातार मुझे ये मिठाइयां क्यों भेजते रहते हैं? सचमुच मैं नहीं जानती कि आपके पास इतने पैसे कहां से आते हैं? ओह, मेरे दोस्त, भगवान के लिये अपने पैसों को सहेजा करें, उन्हें ऐसे नहीं उड़ाया करें। फ़ेदोरा वह क़ालीन बेच रही है जिस पर मैंने कढ़ाई की है। उसके पचास रूबल मिल रहे हैं। यह तो अच्छी क़ीमत है, मुझे तो इससे कम की उम्मीद थी। मैं फ़ेदोरा को तीन रूबल दे दूंगी और अपने लिये मामूली-सा, किन्तु गर्म फ़्रॉक सी लूंगी। आपके लिये वास्कट बनाऊंगी, खुद अपने हाथों से और कपड़ा भी अच्छा ख़रीदूंगी।

फ़ेदोरा मेरे लिये 'इवान बेल्किन की कहानियां' पुस्तक लायी है जो मैं आपके पास भेज रही हूं। शायद आप पढ़ना चाहें। लेकिन इसे गन्दा नहीं कीजिये और दबाकर नहीं बैठे रहिये। परायी किताब है; इसके लेखक हैं पुश्किन। दो साल पहले हमने मां के साथ मिलकर ये कहानियां पढ़ी थीं और अब अकेले उन्हें फिर से पढ़ते समय मेरा दिल बहुत उदास हुआ। अगर आपके पास कुछ किताबें हों तो मेरे यहां भेज दीजिये, लेकिन तभी ऐसा कीजिये अगर वे राताज़्यायेव से न मिली हों। यदि उसकी अपनी कोई रचना छप गयी हो तो शायद वह वही दे। आपको उसकी रचनायें कैसे पसन्द आती हैं, मकार अलेक्सेयेविच? बिल्कुल बेकार हैं वे ... तो विदा! कितनी बातें की हैं मैंने! जब मैं उदास होती हूं तो किसी बारे में भी बात करना मुझे अच्छा लगता है। यह तो ऐसी दवाई है जिससे फ़ौरन राहत मिलती है, ख़ास तौर पर जब मन का बोझ हल्का करना हो। विदा, विदा, मेरे दोस्त!

आपकी
व० द०

२८ जून

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

यह रोना-धोना अच्छा नहीं! शर्म नहीं आती आपको? बस, काफ़ी है, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! कैसे आपके दिमाग़ में इस तरह के ख़याल आते हैं? आप बीमार नहीं हैं, मेरी रानी, बिल्कुल बीमार नहीं हैं। आप तो खिल रही हैं, सचमुच खिल रही हैं। आपके चेहरे पर कुछ-कुछ पीलापन ज़रूर है, फिर भी आप खिल रही हैं। और आप के ये अजीब-अजीब से सपने, ये बुरे-बुरे दृश्य! शर्म आनी चाहिये, मेरी प्यारी, शर्म आनी चाहिये। इन सपनों को गोली मारिये, उन पर थूक दीजिये। भला मैं क्यों चैन से सोता हूं? क्यों मुझे कुछ भी नहीं होता? आप मेरी ओर ध्यान दें, मेरी गुड़िया। आराम से रहता हूं, चैन से सोता हूं, हृष्ट-पुष्ट हूं, खूब अच्छा लगता हूं, देखकर जी खुश होता है। बस, काफ़ी है, काफ़ी है, मेरी रानी, शर्म आनी चाहिये। अपने को ज़रा ठीक कीजिये। आपके दिमाग़ को तो मैं जानता हूं, मेरी गुड़िया। उसमें कोई ज़रा-सी बात आ जाती है तो आप उसे तूल देना और उसके ग़म में घुलना शुरू कर देती हैं। मेरी ख़ातिर ऐसा नहीं कीजिये! रही नौकरी करने की बात – तो हरगिज़ नहीं! नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं! आप ऐसी बातें सोचती ही क्यों हैं, यह आपको हो ही क्या जाता है? और वह भी कहीं दूर जाकर! नहीं, मेरी प्यारी, मैं इसकी इजाज़त नहीं दूंगा, अपना पूरा ज़ोर लगाकर ऐसे इरादे का विरोध करूंगा। अपना पुराना फ़्रॉक कोट बेच दूंगा, कमीज़ ही पहने हुए सड़कों पर जाऊंगा, मगर आपको किसी तरह की कोई कमी नहीं होने दूंगा। नहीं, वारेन्का, नहीं, मैं आपको अच्छी तरह से जानता हूं! यह बेतुकी, बिल्कुल बेतुकी बात है! लेकिन हक़ीक़त तो यह है कि इस सब के लिये फ़ेदोरा ही ज़िम्मेदार है। लगता है कि उसी ने आपके दिमाग़ में ये सब उलटी-सीधी बातें भर दी हैं। आप उसकी बातों पर कान नहीं दें, मेरी रानी। मेरी गुड़िया, आप शायद उसके बारे में सब कुछ तो जानती भी नहीं हैं? वह मूर्ख, झगड़ालू और झक्की औरत है। उसने तो अपने पति को भी दूसरी दुनिया में पहुंचा दिया। या शायद उसने किसी बात

के लिये आपको नाराज़ कर दिया है? नहीं, नहीं, मेरी रानी, आप किसी हालत में भी नौकरी नहीं करेंगी। तब मेरा क्या होगा, मेरे करने को क्या रह जायेगा? नहीं, वारेन्का, मेरी जान, इस बात को तो आप दिमाग़ से निकाल दें। किस चीज़ की कमी महसूस करती हैं आप यहां? हम आपको देख-देखकर निहाल होते रहते हैं, आप हमें प्यार करती हैं – तो यहीं चैन से रहती जाइये। सिलाई कीजिये या किताबें पढ़िये। हां, सिलाई भी नहीं कीजिये, केवल हमारे निकट रहिये। आप ही सोचें कि यह क्या बात बनेगी? मैं आपके लिये किताबें हासिल कर दूंगा और फिर हम कहीं घूमने-फिरने को भी जायेंगे। लेकिन आप, मेरी रानी, अक्ल से काम लें और व्यर्थ की बातों के फेर में न पड़ें! मैं आपके पास आऊंगा, बहुत जल्द ही आऊंगा, लेकिन आप बदले में मेरी साफ़-साफ़ और निश्छल बात पर कान दीजिये–आपका राताज़्यायेव की आलोचना करना अच्छा नहीं, मेरी जान, बहुत बुरा है! मैं बेशक कोई विद्वान नहीं हूं। खुद यह जानता हूं कि विद्वान नहीं हूं, कि मैंने कौड़ियों के मोल पढ़ाई की है। लेकिन मैं यह बात नहीं कहना चाहता, अपनी चर्चा नहीं करना चाहता। मगर आप चाहें या न चाहें, राताज़्यायेव की हिमायत मैं जरूर करूंगा। वह मेरा मित्र है और इसलिये मैं उसका पक्ष लिये बिना नहीं रह सकता। वह अच्छा लिखता है, बहुत अच्छा, बेहद अच्छा लिखता है। मैं आप से सहमत नहीं हूं, किसी तरह भी सहमत नहीं हो सकता। वह बड़ी रंगीन भाषा में, अलंकारिक और लाक्षणिक शैली में लिखता है, उसके पास तरह-तरह के विचार भी हैं। बहुत खूब लिखता है! वारेन्का, आपने शायद भाव-विभोर होकर उसे नहीं पढ़ा, या फिर आपका मूड अच्छा नहीं रहा होगा, किसी कारण फ़ेदोरा पर नाराज़ होंगी या फिर ज़रूर कोई न कोई दूसरी बुरी परिस्थिति रही होगी। नहीं, आप गहराई में पैठकर पढ़ें, ज़्यादा अच्छी तरह पढ़ें, तब पढ़ें जब आप खुश हों, रंग में हों, जब मूड बहुत अच्छा हो। मिसाल के तौर पर जब आपके मुंह में टॉफ़ी हो – उस समय पढ़िये। मैं यह नहीं कहूंगा (भला ऐसा कहता ही कौन है?) कि राताज़्यायेव से बेहतर लेखक नहीं हैं। हैं, उससे कहीं ज़्यादा अच्छे लेखक हैं, लेकिन वे अच्छे हैं और राताज़्यायेव भी अच्छा

है। वे भी अच्छा लिखते हैं, राताज़्यायेव भी अच्छा लिखता है। उसमें कुछ अपनी खास बात है, वह अपने ढंग से बढ़िया लिखता है और अच्छा करता है कि लिखता है। तो विदा, मेरी रानी, अब और नहीं लिख सकता, कुछ काम है, जल्दी करनी चाहिये। मेरी प्यारी, मेरी गुड़िया, देखिये, शान्त हो जाइये। भगवान आप की रक्षा करे। मैं हूं आपका सच्चा दोस्त

मकार देवुश्किन।

पुनश्च – किताब के लिये धन्यवाद, मेरी रानी, पुश्किन को भी पढ़ूंगा। आज शाम को मैं ज़रूर आपके पास आऊंगा।

१ जुलाई

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

नहीं, मेरे प्यारे दोस्त, आप लोगों के बीच मेरा रहना सम्भव नहीं। बहुत सोच-विचार करके मैं इस नतीजे पर पहुंची हूं कि ऐसी अच्छी नौकरी से इन्कार करके बड़ी भूल कर रही हूं। वहां कम से कम मुझे रोटी के लाले तो नहीं रहेंगे। मैं कोशिश करूंगी, पराये लोगों का स्नेह पाने का प्रयास करूंगी और, अगर ज़रूरत हुई, तो अपना स्वभाव भी बदल लूंगी। ज़ाहिर है कि पराये लोगों के बीच जीना कुछ आसान नहीं, दूसरों की दया, कृपा की आशा करना, अपनी भावनाएं छिपाना, अपने दिल को मजबूर करना काफ़ी कठिन होता है लेकिन भगवान मेरी मदद करेगा। ज़िन्दगी भर लोगों से कतराते रहने से भी तो काम नहीं चल सकता। मेरे साथ पहले भी ऐसा हो चुका है। मुझे याद है, यह तब की बात है जब मैं छोटी थी और स्कूल जाती थी। ऐसा होता कि इतवार को सारा दिन घर पर खूब मौज करती, उछलती-कूदती, कभी-कभी मां से डांट भी पड़ जाती, लेकिन कोई बात नहीं – मन खिला-खिला रहता, खुशी छलछलाती रहती। शाम होने लगती तो मन को गहरी उदासी घेर लेती। सुबह नौ बजे स्कूल पहुंचना होता था और वहां सब कुछ पराया-पराया, नीरस और कठोर-कठोर होता। सोमवार के दिन शिक्षिकायें ऐसी झुंझलायी-सी होतीं कि मन टीसने-कचोटने लगता, रोने को मन हो

आता। कहीं अलग जाकर आंसू बहा लेती, उन्हें दूसरों से छिपाती ताकि वे यह न कहें कि आलसी है, पढ़ाई से मन चुराती है, लेकिन मैं इस कारण तो बिल्कुल नहीं रोती थी। और बाद में क्या हुआ? बाद में मैं वहां घुल-मिल गयी और जब स्कूल की पढ़ाई ख़त्म हुई तो सहेलियों से विदा लेते हुए रोयी। मैं आप दोनों पर बोझ बनकर जी रही हूं, यह अच्छी बात नहीं है। यह विचार मुझे यातना देता है। मैं आपको यह सब कुछ इसलिये साफ़-साफ़ लिख रही हूं कि आप से कुछ भी छिपाने की आदी नहीं हूं। क्या मैं यह नहीं देखती हूं कि कैसे फ़ेदोरा तड़के-तड़के ही उठकर धुलाई का काम करने लगती है और देर गये रात तक काम में जुटी रहती है? जबकि बुढ़ापा आराम चाहता है। क्या मैं यह नहीं देखती हूं कि आप अपना आखिरी कोपेक तक मुझ पर ख़र्च कर देते हैं? आपकी अपनी माली हालत भी तो कुछ अच्छी नहीं है, मेरे मित्र। आपने लिखा है कि अपना कोट तक बेच डालेंगे, मगर मुझे किसी चीज़ की कमी नहीं होने देंगे। मैं विश्वास करती हूं, मेरे दोस्त, आपके दयालु हृदय पर यक़ीन करती हूं। लेकिन यह तो आप इस वक़्त कह रहे हैं, जब आपके पास अप्रत्याशित पैसे आ गये हैं, आपको बोनस मिल गया है। लेकिन बाद में क्या होगा? आप तो जानते हैं कि मैं हमेशा बीमार रहती हूं। मैं आपकी तरह काम नहीं कर सकती, यद्यपि ऐसा करने से मुझे हार्दिक ख़ुशी होती। फिर काम भी तो हमेशा नहीं मिलता। तो मेरे लिये क्या रह जाता है? आप दोनों सहृदय लोगों को देखते हुए ग़म में घुलती रहूं। बताइये, क्या मैं किसी तरह से भी आपकी कुछ भलाई कर सकती हूं? किसलिये आपको मेरी ज़रूरत है, मेरे दोस्त? मैंने आपके लिये कौनसा अच्छा काम किया है? मैं जी-जान से आपको चाहती हूं, पूरे मन से और बेहद प्यार करती हूं, लेकिन – बहुत कटु है मेरा भाग्य! – मैं प्यार करना जानती हूं, प्यार कर सकती हूं, लेकिन इससे ज़्यादा कुछ नहीं। कोई भलाई नहीं कर सकती, आपकी नेकी का कोई बदला नहीं चुका सकती। मुझे अब और अधिक नहीं रोकिये, सोचिये और अपनी अन्तिम राय लिख भेजिये। प्रतीक्षा में

आपको प्यार करनेवाली

व० द०

१ जुलाई

सब बकवास, बिल्कुल बकवास, एकदम बकवास है, वारेन्का! अकेली रह जाने पर आपके दिमाग़ में न जाने कैसे-कैसे ख़याल आने लगते हैं। यह ठीक नहीं है, वह ठीक नहीं है! अब मैं देख रहा हूं कि यह सब बेकार की बातें हैं! किसी बात की कमी है आपको हमारे यहां, मेरी गुड़िया, आप हमें यह बतायें। हम आपको प्यार करते हैं, आप हमें चाहती हैं, हम सभी सुखी और सौभाग्यशाली हैं – और क्या चाहिये? पराये लोगों के बीच जाकर आप क्या करेंगी? आप अभी यह नहीं जानतीं कि पराया आदमी क्या होता है?.. नहीं, आप मुझ से यह पूछें और मैं आपको बताऊंगा कि पराया आदमी क्या होता है। मैं उसे जानता हूं, बहुत अच्छी तरह से जानता हूं, मेरी रानी। ऐसा हुआ है मेरे साथ, पराई रोटी खाने का नतीजा। ऐसा बुरा, इतना बुरा है वह, इतना दुष्ट होता है वह पराया आदमी कि दिल को छलनी कर देता है। उसकी भर्त्सना, जली-कटी बातों और बुरी नज़र से मन घायल हो जाता है। हमारे यहां आपको चैन है, आराम है मानो छोटे-से घोंसले में सुख से रह रही हैं। फिर आप हमें भी बिल्कुल बेसहारा कर देंगी। आपके बिना हम क्या करेंगे? मुझ बूढ़े का तब क्या होगा? हमें आपकी ज़रूरत नहीं है? आप हमारे लिये उपयोगी नहीं? कैसे उपयोगी नहीं हैं? नहीं, मेरी रानी, आप स्वयं ही यह तय करें कि कैसे उपयोगी नहीं। बहुत उपयोगी हैं आप मेरे लिये, वारेन्का। इतना अच्छा प्रभाव डालती हैं आप मुझ पर... इस समय मैं आपके बारे में सोच रहा हूं और मेरा दिल ख़ुश है... कभी-कभी मैं आपको पत्र लिखता हूं और उसमें अपनी सारी भावनायें व्यक्त कर देता हूं और उसका मुझे सविस्तार जवाब मिलता है। मैंने आपके लिये फ़्रॉक आदि ख़रीदा है, टोपी ख़रीदी है, आप कोई अन्य काम मुझे सौंप देती है और मैं वह काम भी पूरा कर देता हूं... नहीं, आप भला कैसे उपयोगी नहीं हैं? बुढ़ापे में मैं अकेला क्या करूंगा, किस काम आऊंगा? शायद आपने इसके बारे में नहीं सोचा, वारेन्का। नहीं, आप इसके बारे में सोचें कि आपके बिना मैं किस काम का रह जाऊंगा? मैं आपका आदी हो गया हूं, मेरी गुड़िया। वरना

नतीजा क्या निकलेगा ? मैं नेवा नदी पर चला जाऊंगा और बस, मामला खत्म। सच कहता हूं, वारेन्का, ऐसा ही होगा। आपके बिना मैं क्या करूंगा ! ओह, मेरी प्यारी, वारेन्का ! आप शायद यह चाहती हैं कि घोड़ा-गाड़ी में मेरी लाश वोल्कोवो क़ब्रिस्तान में पहुंचे, कि कोई भिखारिन बुढ़िया मेरे जनाज़े के साथ जाये, कि पराये लोग मुझ पर कुछ मिट्टी डालकर अपनी राह चलते बनें, मुझे अकेला छोड़ दें। यह बहुत बड़ा पाप होगा, मेरी रानी ! भगवान की क़सम, पाप होगा, पाप ! मेरी मित्र, प्यारी वारेन्का, आपकी पुस्तक वापस भेज रहा हूं। अगर आप इस पुस्तक के बारे में मेरी राय जानना चाहती हैं तो बताता हूं कि ऐसी बढ़िया पुस्तकें पढ़ने का मुझे जीवन में कभी अवसर नहीं मिला। मैं अब अपने आप से यह पूछता हूं कि, भगवान मुझे क्षमा करे, अब तक मैं ऐसा उल्लू बनकर क्यों जीता रहा ? अब तक क्या झक मारता रहा ? किस अन्धेरी दुनिया में खोया रहा ? मैं कुछ भी तो नहीं जानता, मेरी रानी, कुछ भी तो नहीं ! एकदम कुछ नहीं जानता ! वारेन्का, मैं सीधे-सादे ढंग से कहना चाहता हूं कि मैं बहुत कम पढ़ा-लिखा आदमी हूं। मैंने अब तक कम, बहुत कम किताबें पढ़ी हैं, लगभग कुछ नहीं पढ़ा। 'मानव का चित्र' बुद्धिमत्तापूर्ण पुस्तक है, 'घंटि-यां बजानेवाला लड़का' और 'ईविक के सारस' – बस, यही किताबें पढ़ी हैं और इनके अतिरिक्त कभी कुछ नहीं पढ़ा। अब आपकी इस पुस्तक में मैंने 'डाक चौकी का मुंशी' कहानी पढ़ी। मेरी रानी, मैं आप से कहना चाहता हूं, कभी-कभी ऐसा होता है कि आदमी जीता जाता है और उसे यह पता नहीं चलता कि उसके निकट ऐसी किताब भी है जिस में उसका अपना सारा जीवन ऐसे स्पष्ट है जैसे हाथ की पांचों उंगलियां। इसके अलावा पहले खुद को जो कुछ मालूम नहीं था, जैसे ही हम एसी किताब पढ़ने लगते हैं, धीरे-धीरे वह सब कुछ याद आने लगता है, स्पष्ट होने और समझ में आने लगता है। हां, इस कारण भी मुझे आपकी यह पुस्तक अच्छी लगी कि जब हम कोई दूसरी पुस्तक पढ़ते हैं तो चाहे कितना ही सिर क्यों न खपायें, कितना ही ज़ोर क्यों न लगायें, वह ऐसी उलझी-उलझायी होती है कि खाक भी हाथ-पल्ले नहीं पड़ता। उदाहरण के रूप में मैं मन्दबुद्धि हूं, जन्म से ही मन्दबुद्धि हूं, इसलिये

बहुत धीर-गम्भीर रचनायें नहीं पढ़ सकता। किन्तु इसे पढ़ते हुए तो ऐसे लगता है मानो मैंने खुद ही लिखी हो, मानो, उदाहरणत:, मैंने अपने हृदय को अपने असली रूप में खोलकर लोगों के सामने रख दिया और सब कुछ सविस्तार लिख डाला। तो यह मामला है ! फिर, है भगवान ! यह है भी तो कितना सीधा-सादा काम ! मैं खुद भी ऐसे लिख सकता था। भला लिख क्यों नहीं सकता था ? कारण कि मैं खुद भी तो वैसे ही अनुभव करता हूं, जैसे कि इस किताब में है। और मैं खुद भी बेचारे समसोन वीरिन जैसी परिस्थि-तियों में से कभी गुज़र चुका हूं। और कितने अधिक समसोन वीरिन हैं हम लोगों के बीच, उसी की तरह दुख-मुसीबत के मारे ! कितना सुन्दर वर्णन और चित्रण है ! जब मैंने यह पढ़ा, मेरी रानी, कि वह नशे में बुरी तरह डूब गया, उसने अपनी सुध-बुध खो दी, उसकी ज़िन्दगी में ज़हर घुल गया, वह दिन भर भेड़ की खाल का कोट ओढ़े सोया रहता, ग़म ग़लत करने को ढालता जाता और अपनी भोली-भाली बिटिया, अपनी भटकी दुन्याशा को याद करके ज़ार-ज़ार रोता तथा गन्दे पल्लू से आंखें पोंछता, तो मैं बड़ी मुश्किल से अपने आंसू रोक पाया। नहीं, यह सब कुछ बहुत वास्तविक है ! आप पढ़िये तो – खुद ज़िन्दगी है ! सचाई और हक़ीक़त है ! मैंने यह सब देखा-जाना है – मेरे आस-पास इसका अस्तित्व है। दूर जाने की क्या ज़रूरत है, तेरेज़ा को ही ले लीजिये, हमारे बेचारे कर्मचारी को ही लिया जा सकता है। शायद वह भी वैसा ही समसोन वीरिन है, सिर्फ़ उसका कुलनाम दूसरा है – गोर्श्कोव। लेकिन बात तो एक जैसी है, मेरी रानी, और हम सबके साथ ऐसा कुछ ही घट सकता है। नेव्स्की सड़क पर रहनेवाले काउंट के साथ भी कुछ ऐसी ही बीत सकती है। यों यह प्रतीत हो सकता है कि उसका रंग-ढंग कुछ दूसरा होगा, क्योंकि उसके यहां सब कुछ दूसरे अन्दाज़ में, ऊंचे स्तर पर है, लेकिन वह भी वही कुछ होगा। मेरे साथ भी ऐसा ही हो सकता है। यह मामला है, और मेरी रानी, आप हमें छोड़कर जाने की बात सोच रही हैं। वारेन्का, मैं भी किसी ग़लत रास्ते पर चल सकता हूं। मेरी रानी, आप अपने को और मुझे बरबाद कर सकती हैं। ओह, मेरी रोशनी, भगवान के लिये ऐसी उलटी-सीधी बातें अपने दिमाग़ से निकाल

दीजिये और व्यर्थ ही मुझे व्यथित नहीं कीजिये। मेरी पंखहीन नन्ही चिड़िया, कैसे आप अपना पेट पालेंगी, कैसे अपनी रक्षा करेंगी, बुरे लोगों से कैसे अपने को बचा पायेंगी! बस, काफ़ी है, वारेन्का, बुरी सलाहों और ग़लत बातों पर कान नहीं दीजिये। हां, अपनी किताब को एक बार फिर से पढ़िये, बहुत ध्यान से पढ़िये, आपका इस से बहुत भला होगा!

मैंने राताज़्यायेव से 'डाक चौकी का मुंशी' कहानी की चर्चा की। उसने कहा कि यह तो पुराने ढंग की रचना है और अब सचित्र तथा तरह-तरह के सुन्दर वर्णनवाली पुस्तकों का अधिक चलन है। सच तो यह है कि उसने जो कुछ कहा, वह सब मैं पूरी तरह से समझ नहीं पाया। उसने निष्कर्ष यह निकाला कि पुश्किन अच्छे लेखक थे, उन्होंने रूस की ख्याति को चार चांद लगाये और उनके बारे में बहुत-सी अन्य बातें भी कहीं। हां, वारेन्का, बहुत अच्छी, बहुत ही अच्छी किताब है यह! इसे एक बार फिर बहुत ध्यान से पढ़िये, मेरी सलाहों पर कान दीजिये, मेरी बातें मानिये और मुझ बूढ़े को प्रसन्नता प्रदान कीजिये। तब स्वयं भगवान आपको इसका सुफल देगा, अवश्य देगा, मेरी रानी।

आपका सच्चा मित्र
मकार देवुश्किन।

६ जुलाई

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

फ़ेदोरा आज चांदी के पन्द्रह रूबल लेकर आयी। जब मैंने उसे तीन रूबल दिये तो वह बेचारी कितनी खुश हुई! मैं आपको जल्दी में यह पत्र लिख रही हूं। आपके लिये अब मैं वास्कट काट रही हूं। कितना बढ़िया कपड़ा है – पीले रंग का और उस पर फूल बने हुए हैं। आपको एक किताब भेज रही हूं। उसमें कई कहानियां हैं। मैंने कुछ पढ़ी हैं। इनमें से 'गर्म कोट' नाम की एक कहानी अवश्य पढ़िये। आप अनुरोध कर रहे हैं कि मैं आपके साथ थियेटर चलूं। क्या यह बहुत महंगा नहीं होगा? अगर ऐसा करना ही है

तो कहीं गैलरी के टिकट लीजिये। कब मैं आखिरी बार थियेटर गयी थी, मुझे याद तक नहीं। लेकिन फिर से यही डर रही हूं कि कहीं बहुत महंगा तो नहीं पड़ेगा? फ़ेदोरा तो संशय से सिर हिलाती रहती है। उसका कहना है कि आप अपनी हैसियत से कहीं बढ़कर ख़र्च करने लगे हैं। मैं खुद भी यह देख रही हूं। सिर्फ़ मुझ पर ही आपने कितना अधिक ख़र्च किया है! ज़रा सम्भलकर, मेरे मित्र, कहीं आप पर कोई मुसीबत ही न आ जाये। फ़ेदोरा ने मुझ से उन अफ़वाहों का ज़िक्र किया है जो मकान-मालकिन को किराया न देने के कारण आप दोनों के बीच हुए झगड़े के बारे में फैली हैं। मैं बहुत घबराती रहती हूं आपके बारे में। तो विदा, मैं जल्दी में हूं। मुझे छोटा-सा काम करना है – टोपी का फ़ीता बदल रही हूं।

व० द०

पुनश्च – सुनिये, अगर हम थियेटर जायेंगे तो मैं अपनी नई टोपी ओढ़ लूंगी और काला फ़्रॉक पहनूंगी। यह जंचेगा न?

७ जुलाई

प्यारी, प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

...मैं कल की बात की ही चर्चा जारी रख रहा हूं। हां, मेरी प्यारी, मेरी जिन्दगी में भी ऐसी सनक का समय आया था। बहुत बुरी तरह दीवाना हो गया था मैं एक अभिनेत्री का, बिल्कुल पागल हो गया था। बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं थी। सबसे ज़्यादा दिलचस्प चीज़ तो यह थी कि मैंने उसे लगभग नहीं देखा था और थियेटर में भी सिर्फ़ एक बार गया था। इस सबके बावजूद मैं उस पर मर मिटा। तब मेरी बग़ल में पांच नौजवान रहते थे, बड़े ज़िन्दादिल लोग। मैं उनके साथ घुल-मिल गया, अपनी इच्छा के विरुद्ध घुल-मिल गया, यद्यपि बड़े सौजन्य से अपने को उनकी हरकतों से दूर रखता था। इस ख़याल से कि कहीं उनसे पीछे न रह जाऊं, मैं उनकी सभी बातों की हां में हां मिला देता था। कितनी बातें कीं उन्होंने मुझ से इस अभिनेत्री के बारे में। जब थियेटर खुला होता तो हर शाम को वे पांचों ही – उनके पास ज़रूरत

की चीजों के लिए फूटी कौड़ी नहीं होती थी – गैलरी में जा बैठते, लगातार तालियां बजाते और अभिनेत्री को बार-बार मंच पर बुलाने के लिये शोर मचाते, बिल्कुल पागलों का सा व्यवहार करते! इसके बाद रात को सोने न देते, पूरी रात उसी की चर्चा करते रहते, हर कोई उसे अपनी ग्लाशा कहता, हर कोई उसी का प्रेम-परवाना था, वही हर किसी के दिल की कोकिल थी। मुझ भोले-भाले को भी उन्होंने अपने इसी रंग में रंग दिया। तब मेरी जवानी के दिन थे। कह नहीं सकता कि कैसे मैंने अपने को भी थियेटर की गैलरी की चौथी क़तार में बैठे पाया। देखने को तो मैं परदे का थोड़ा-सा कोना ही देख पाया, लेकिन सुनाई मुझे सब कुछ देता था। अभिनेत्री की आवाज़ सचमुच बहुत अच्छी थी, गूंजती हुई, बुलबुल के तराने जैसी, बड़ी मधुर-मधुर! तालियां बजा-बजाकर हमारे हाथ दुखने लगे और प्रशंसा करते हुए हम ख़ूब चिल्लाये। थोड़े में यह कि दर्शक हम पर बिगड़ उठे और हम में से एक को तो बाहर भी निकाल दिया गया। मैं घर लौटा तो अपनी सुध-बुध खोये हुए! जेब में सिर्फ़ एक रूबल था और वेतन मिलने में दस दिन की देर थी। और इसके बाद क्या हुआ, आप भला सोच भी सकती हैं, मेरी रानी? अगले दिन काम पर जाने से पहले मैं फ़्रांसीसी इत्र-फुलेल की दुकान पर गया और अपनी सारी पूंजी इत्र और बढ़िया साबुन पर ख़र्च कर दी। ख़ुद भी नहीं जानता कि किसलिये मैंने यह सब ख़रीदा था! घर पर खाना भी नहीं खाया; उसकी खिड़की के नीचे ही चक्कर काटता रहा। वह नेव्स्की सड़क पर, चौथी मंज़िल पर रहती थी। घर लौटा, कोई एक घण्टा आराम किया और फिर से नेव्स्की सड़क पर चला गया ताकि उसकी खिड़की के नीचे से गुज़र सकूं। डेढ़ महीने तक मेरा यही हाल रहा, मैं उसी के जादू में बंधा रहा। बग्घी किराये पर लेता और उसकी खिड़की के नीचे मंडराता रहता। बिल्कुल थक-हार गया, क़र्ज़ से लद गया और आख़िर मुहब्बत का यह नशा उतर गया, मन ऊब गया! तो मेरी रानी, ऐसी हालत कर सकती है अभिनेत्री एक भले आदमी की! लेकिन तब मैं अक़्ल का कच्चा था, नौजवान था!..

मः दः

८ जुलाई

मेरी प्यारी वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

इस महीने की ६ तारीख़ को मिली आपकी पुस्तक जल्दी से लौटा रहा हूं और इसके साथ ही अपने पत्र में कुछ बातें भी स्पष्ट करना चाहता हूं। मेरी रानी, बुरी बात है, बहुत बुरी बात है कि आपने मुझे बिल्कुल ही गया-बीता मान लिया है। कहना होगा कि हर आदमी की क़िस्मत का भगवान ख़ुद ही फ़ैसला करता है, मेरी रानी। किसी को जनरल बनना होता है तो किसी को दफ़्तर का छोटा-मोटा बाबू, किसी को बड़े रोब से हुक्म चलाना होता है तो किसी को चुपचाप और डरे-सहमे हुए हुक्म बजाना होता है। यह सब आदमी की योग्यता के अनुसार होता है। किसी में एक चीज़ की योग्यता होती है, दूसरे में दूसरी चीज़ की और हर किसी की योग्यता भी भगवान ही निश्चित करता है। लगभग तीस साल से मैं नौकरी कर रहा हूं; मेरे काम की कभी बुराई नहीं की गयी, मेरा चाल-चलन हमेशा अच्छा माना गया है और किसी तरह की गड़बड़ में मैंने कभी कोई हिस्सा नहीं लिया। अपनी चेतना के अनुसार एक नागरिक के नाते यह मानता हूं कि मुझ में दोष-त्रुटियां हैं, किन्तु साथ ही कुछ अच्छाइयां-गुण भी हैं। मेरे संचालकगण मेरा आदर करते हैं और बड़े हुज़ूर भी मुझ पर प्रसन्न हैं। यह सही है कि महामहिम ने अपनी कृपादृष्टि को अभी तक किसी तरह प्रकट नहीं किया है, तथापि मैं यह जानता हूं कि वह प्रसन्न हैं। बाल सफ़ेद होने लगे हैं और कोई ख़ास बड़ा पाप किया हो, ऐसा नहीं है। छोटी-मोटी भूलें-ग़लतियां किससे नहीं होतीं? सभी से होती हैं, आप से भी हुई होंगी, मेरी प्यारी। किन्तु कोई बड़ा अपराध, कोई बुरा कारनामा मैंने कभी नहीं किया, क़ानून-क़ायदे को कभी नहीं तोड़ा। कभी तो मुझे पदक देने की भी बात चली थी – लेकिन अब इसकी क्या चर्चा की जाये! यह सब कुछ आपको मालूम होना चाहिये था, मेरी प्यारी। और उसे भी, उस लेखक को भी, अगर वह लिखने ही बैठा था, यह सब जानकारी होनी चाहिये थी। नहीं, आपसे मुझे यह आशा नहीं थी, मेरी रानी; नहीं, वारेन्का! सच, आपसे तो ऐसी आशा बिल्कुल नहीं थी।

तो नतीजा यह निकलता है कि इसके बाद तो अपने घोंसले में – वह कैसा भी क्यों न हो – चैन से रहना असम्भव हो जाता है। जैसा कि कहा जाता है कीचड़ से दामन बचाते हुए, किसी के मामले में टांग अड़ाये बिना, भगवान का डर और खुद अपने को जानते हुए ताकि कोई तुम्हारे मामलों में दखल न दे, ताकि कोई तुम्हारे घोंसले में घुसकर यह ताक-झांक न करे कि तुम वहां कैसे रहते हो, क्या तुम्हारे पास अच्छी वास्कट और दूसरे कपड़े हैं या नहीं, जूते हैं या नहीं और अगर हैं तो उनके तले कैसे हैं, तुम क्या खाते, क्या पीते और क्या करते हो? फिर इसमें ऐसी कौनसी बुरी बात है, मेरी रानी, कि सड़क खराब होने पर, कभी-कभी मैं अपने जूतों को बचाने के लिये पंजों के बल चलता हूं? किसी दूसरे के बारे में भला यह लिखने की भी क्या ज़रूरत है कि वह तंगदस्ती की वजह से चाय नहीं पीता है? मानो सब के लिये चाय पीना लाज़िमी ही हो! क्या मैं दूसरों के मुंह में झांकता रहता हूं कि वह क्या खा रहे हैं? ऐसी हरकत करके क्या मैंने किसी के दिल को ठेस पहुंचाई है? नहीं, मेरी प्यारी, जब कोई तुम पर छींटाकशी नहीं करता तो किसलिये तुम किसी दूसरे का दिल दुखाओ? लीजिये, अब आपके सामने यह उदाहरण है, वरवारा अलेक्सेयेव्ना। उम्र भर आदमी काम करता रहता है, बड़ी लगन और बड़े उत्साह से तथा ऊंचे अधिकारी भी उसका आदर करते हैं (कुछ भी क्यों न हो, वे आदर तो करते ही हैं) और कोई किसी कारण के बिना अचानक ही उस पर कीचड़ उछालने लगता है। बेशक यह सही है कि कभी-कभी हम कोई नया कपड़ा सिलवा लेते हैं, इतने खुश होते हैं कि नींद भी नहीं आती। उदाहरण के लिये आदमी नये जूते बनवा लेता है, उन्हें पहनता है तो दिल बाग़-बाग़ हो जाता है। यह बिल्कुल सच है, मैं खुद यह अनुभव कर चुका हूं, क्योंकि पतले चमड़े के चमचम करते जूतों में अपने को देखना बहुत अच्छा लगता है – यह तो सोलह आने सही तस्वीर पेश की गयी है! लेकिन इस बात की मुझे सचमुच बड़ी हैरानी हो रही है कि फ़्योदोर फ़्योदोरोविच ने इस किताब की तरफ़ क्यों ध्यान नहीं दिया और क्यों अपनी सफ़ाई पेश नहीं की। यह सही है कि वह अभी नौजवान अफ़सर है और कभी-कभी अपने मातहतों

पर चीखना-चिल्लाना पसन्द करता है। लेकिन वह ऐसा क्यों न करे? अगर हमारे इन मातहत भाइयों को डांटना-डपटना जरूरी है तो वह ऐसा क्यों न करे? मिसाल के तौर पर काम के मामले में उन्हें ज़रा होशियार, सचेत करने के लिये ही चेतावनी देनी चाहिये। कारण कि – यह हमारी आपसी बात ही है, वारेन्का – हमारे ये कर्मचारी भाई चेतावनी के बिना कुछ करते ही नहीं। हर कोई कहीं न कहीं अपने पांव जमाने की कोशिश करता है, यह दिखाता है कि मैं फलां फलां दफ़्तर में काम करता हूं, लेकिन काम जहां का तहां खटाई में पड़ा रहता है। चूंकि पद अलग-अलग हैं और डांटने-डपटने की सम्भावना भी पद के अनुसार ही होती है, इसलिये डांट-डपट का अन्दाज़ भी भिन्न-भिन्न होता है – यह तो स्वाभाविक बात है! मेरी रानी, इसी चीज़ पर तो दुनिया क़ायम है, दुनिया चलती जा रही है कि हम एक दूसरे को सचेत करते हैं, एक दूसरे को डांटते-घुड़कते हैं। ऐसी सावधानी के बिना दुनिया का काम न चलता और कहीं कोई व्यवस्था न होती। सचमुच बहुत हैरान हो रहा हूं कि फ़्योदोर फ़्योदोरोविच की नज़र से ऐसी किताब चूक कैसे गयी!

फिर ऐसी किताब लिखने में तुक ही क्या है? क्या ज़रूरत है इसकी? क्या कोई पाठक मुझे कोट बनवा देगा या नये जूते ख़रीद देगा? नहीं, वारेन्का, वह इसे पढ़ेगा और यह मांग करेगा कि इसे और आगे लिखा जाये। आदमी अपने को छिपाता रहता है, छिपाता रहता है, अपने अभाव की हर चीज़ पर परदा डालता है, अपने को दूसरों की नज़र से बचाता है; क्योंकि बात का बतंगड़ बन सकता है, सभी तरह का कीचड़ उछाला जा सकता है और अचानक पता यह चलता है कि व्यक्ति का सामाजिक और पारिवारिक जीवन साहित्य में उतार दिया गया है, सब कुछ छप गया है, सबने उसे पढ़ा है, सब उस पर हंसे हैं और सभी ने उस पर टीका-टिप्पणियां की हैं! उस बेचारे के लिये तो घर से बाहर निकलना मुश्किल हो जायेगा, सब कुछ इतनी अच्छी तरह से बयान कर दिया गया है कि हमारे इस दफ़्तरी बाबू को तो लोग चाल से ही पहचान लेंगे। अच्छा होता कि लेखक अन्त में ही मामले को कुछ सम्भाल लेता, थोड़ी नर्मी, सहृदयता दिखाता, उदाहरण

के लिये, उस स्थल के बाद, जब उसके मुंह पर काग़ज़ फेंके जाते हैं, यह जोड़ देता कि सब कुछ के बावजूद वह भला आदमी था, नेक शहरी था, अपने साथियों के ऐसे बर्ताव के लायक़ नहीं था, अपने से बड़ों का आदर-सत्कार करता था (यहां एकाध उदाहरण भी दिया जा सकता था), किसी का बुरा नहीं चाहता था, भगवान में आस्था रखता था और उसके मरने पर (यदि लेखक उसकी मृत्यु अनिवार्य ही मानता है) लोगों ने आंसू बहाये। यह और भी ज़्यादा अच्छा होता कि उस बेचारे को मरने के लिये मजबूर न किया जाता, बल्कि कहानी को यह मोड़ दिया जाता कि उसका कोट मिल गया, कि उसकी सारी ख़ूबियों की जानकारी पाने के बाद जनरल ने उसे अपने दफ़्तर में काम करने के लिये आमन्त्रित किया, उसका पद ऊंचा कर दिया, उसकी तनख़्वाह बढ़ा दी और इस तरह से मानो बदी पर नेकी की जीत हो गयी और दफ़्तर के उसके साथी कहीं मुंह दिखाने लायक़ न रह गये। मसलन मैंने तो ऐसा ही किया होता। वरना क्या ख़ास बात है, क्या अच्छा है उसकी इस कहानी में? हमारे घटिया दैनिक जीवन की एक बेकार-सी मिसाल से ज़्यादा कुछ नहीं। और मेरी प्यारी, आपने ऐसी किताब मुझे भेजने की कैसे सोची। यह तो दुर्भावनापूर्ण पुस्तक है, वारेन्का। यह तो सचाई से दूर है, क्योंकि ऐसा हो ही नहीं सकता कि कोई ऐसा किरानी वास्तव में रहा हो। ऐसी किताब के बाद तो शिकायत करनी चाहिये, वारेन्का, विधिवत शिकायत करनी चाहिये।

आपका सच्चा सेवक
मकार देवुश्किन।

२७ जुलाई

प्रियवर, मकार अलेक्सेयेविच,

पिछली कुछ घटनाओं और आपके पत्रों ने मुझे डरा दिया, अचम्भे में डाल और चकरा दिया, किन्तु फ़ेदोरा ने जो कुछ बताया, उससे सब कुछ साफ़ हो गया। मगर यह बताइये कि ऐसे हताश

होने की क्या बात थी और आप ऐसे गर्त में क्यों जा गिरे, मकार अलेक्सेयेविच? आपने अपनी सफ़ाई में जो कुछ लिखा है, उससे मुझे बिल्कुल सन्तोष नहीं हुआ। अब कहा जा सकता है कि मैं जो अच्छी नौकरी ले लेना चाहती थी, उसके बारे में मेरा ज़ोर देना ठीक ही था? इसके अलावा पिछले दिनों में जो कुछ घटा है, उससे भी मैं बेहद परेशान हूं। आपका कहना है कि मेरे प्रति प्यार ने ही आपको मुझ से कुछ छिपाने को विवश किया। मैं तो तब भी यह अनुभव करती थी कि आप मेरे लिये बहुत त्याग कर रहे हैं जब यह विश्वास दिलाते थे कि मुझ पर वही पैसा खर्च कर रहे हैं जो आपके पास ज़रूरत के वक़्त के लिये जमा पड़ा है। लेकिन अब, जब मुझे यह पता चल गया है कि आपके पास पैसे थे ही नहीं, कि संयोगवश मेरी बुरी माली हालत के बारे में जानकर और उससे द्रवित होकर आपने अपना वेतन पेशगी ले लेकर सब खर्च किया और मेरी बीमारी के वक़्त अपना कोट तक बेच डाला। अब यह सब कुछ मालूम हो जाने पर मैं अपने को बड़ी यातनापूर्ण स्थिति में पा रही हूं, अभी तक यह नहीं जानती हूं कि इस सब को कैसे स्वीकारूं और इस सम्बन्ध में क्या सोचूं। ओह! मकार अलेक्सेयेविच, सहानुभूति और रिश्तेदारी की भावना से प्रेरित होकर आपने शुरू में जो खर्च किया था, उसी तक अपने को सीमित रखना चाहिये था। बाद में व्यर्थ पैसा नहीं उड़ाना चाहिये था। आपने सच्ची मित्रता का परिचय नहीं दिया, मकार अलेक्से-येविच, क्योंकि मुझ से सचाई को छिपाया। अब, जब मैं यह देख रही हूं कि आपने अपनी आख़िरी कौड़ी तक मेरे लिये कपड़े, मिठाइ-यां, थियेटर के टिकट और किताबें ख़रीदने के लिये तथा सैर-सपाटे पर खर्च कर दिये तो अपनी इस अक्षम्य नादानी के कारण मुझे पश्चात्ताप के बहुत कड़वे घूंट पीने पड़ रहे हैं (क्योंकि मैंने आपकी चिन्ता किये बिना ये सब उपहार स्वीकार किये)। जिन चीज़ों से आपने मुझे ख़ुश करने की कोशिश की, वे सब अब मेरे दिल को दुखी कर रही हैं और केवल पश्चात्ताप की ग्लानि ही शेष रह गयी है। पिछले कुछ समय में आपकी मानसिक व्यथा की ओर मेरा ध्यान गया था और यद्यपि स्वयं भी भारी मन से किसी बुरी बात की आशा कर रही थी, किन्तु वास्तव में ही अब

जो हुआ, उसकी तो मैंने सपने में भी कल्पना नहीं की थी। भला यह कैसे हुआ, मकार अलेक्सेयेविच, कि आप इस सीमा तक हताश हो गये! आपको जाननेवाले अब आपके बारे में अब क्या सोचेंगे, क्या कहेंगे? आपकी उदारता-सहृदयता, विनम्रता और सूझ-बूझ के लिये मैं और अन्य सभी लोग आपका कितना आदर-सम्मान करते थे। किन्तु अब आपने ऐसी बुरी हरकत की है, जैसी कि आप में पहले कभी नहीं देखी गयी थी। फ़ेदोरा ने जब मुझे यह बताया कि आपको नशे में धुत्त सड़क पर पड़े पाया गया और पुलिसवाले आपको घर लाये तो मेरा क्या हाल हुआ! मैं तो स्तम्भित रह गयी, गो किसी अनहोनी घटना की आशंका से चिन्तित थी, क्योंकि चार दिन से आपका कोई अता-पता नहीं था। आपने इस बात पर विचार किया, मकार अलेक्सेयेविच, कि जब आपके अधिकारियों को आपकी अनुपस्थिति का असली कारण मालूम होगा तो वे क्या कहेंगे? आप कहते हैं कि सभी आप पर हंसते हैं, कि सभी को हमारे सम्बन्ध का पता चल गया है और आपके पड़ोसी अपने मज़ाकों में मेरा भी उल्लेख करते हैं। इस चीज़ की ओर ध्यान नहीं दीजिये और भगवान के लिये शान्त हो जाइये, मकार अलेक्सेयेविच। फ़ौजी अफ़सरों के साथ आपका क़िस्सा भी मेरे दिल में डर पैदा कर रहा है। मैंने इसके बारे में थोड़ा-सा सुना है। मुझे विस्तार से बताइये कि यह सब क्या मामला है। आपने लिखा है कि सब कुछ साफ़-साफ़ लिखने की आपकी हिम्मत नहीं हुई, कि सब कुछ स्पष्ट रूप से स्वीकार करने पर आपको मेरी मैत्री खो देने का डर था, कि मेरी बीमारी के दौरान किस तरह मेरी सहायता करें, आप इस कारण हताश थे, कि मेरी मदद करने तथा मुझे अस्पताल जाने से बचाने के लिये आपने सब कुछ बेच डाला, कि बुरी तरह से क़र्ज़ में दब गये और मकान-मालकिन से हर दिन आपका झगड़ा होता है – किन्तु यह सब छिपाकर तो आपने और भी बुरा किया। अब तो मुझे सब कुछ मालूम हो ही गया। मुझे यह बताते हुए आपने संकोच किया कि मैं ही आपकी सारी मुसीबतों की जड़ हूं और अपने व्यवहार से अब आपने मुझे दुगुना दुख दिया है। इस सबसे मैं चकित रह गयी हूं, मकार अलेक्सेयेविच। ओह, मेरे दोस्त, दुर्भाग्य तो छूत की बीमारी के समान है। बदक़िस्मत

और ग़रीब को एक दूसरे से दूर रहना चाहिये, ताकि और बुरा पारस्परिक प्रभाव न डालें। मैंने आपको ऐसे दुख दिये हैं जैसे अपने विनम्र और एकान्त जीवन में आपने पहले कभी नहीं जाने थे। यह सब मुझे बड़ी यातना देता है और मेरे कलेजे को छलनी करता है।

अब सब कुछ मुझे साफ़-साफ़ लिखिये कि आपके साथ क्या हुआ था और आपने क्यों ऐसी बुरी हरकत की। यदि सम्भव हो तो मुझे शान्त कीजिये। अपने स्वार्थ के कारण नहीं, बल्कि मैत्री और प्यार के कारण, जिन्हें मेरे हृदय से कोई नहीं निकाल सकता, मैं आपसे ऐसा करने का अनुरोध कर रही हूं। विदा। बड़ी बेसब्री से आपके ख़त का इन्तज़ार रहेगा। मेरे बारे में आप ठीक नहीं सोचते रहे हैं, मकार अलेक्सेयेविच।

आपको मन से चाहनेवाली
वरवारा दोब्रोस्योलोवा।

२८ जुलाई

मेरी अनमोल गुड़िया, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

अब, जब वह सारा क़िस्सा ख़त्म हो चुका है और धीरे-धीरे सब कुछ पहले जैसा ही होता जा रहा है, तो मैं आपको यह बताना चाहता हूं, मेरी रानी, कि आपको इस बारे में चिन्तित नहीं होना चाहिये कि मेरे सम्बन्ध में लोग क्या सोचेंगे। आपको यह जानना चाहिये, वरवारा अलेक्सेयेव्ना, कि मेरे लिये मेरी प्रतिष्ठा से बढ़कर कुछ भी नहीं। इसीलिये आपको अपनी सभी मुसीबतों और उलटी-सीधी घटनाओं के बावजूद यह सूचित करता हूं कि मेरे अधिकारियों में से कोई कुछ भी नहीं जानता और जान भी नहीं पायेगा। इसलिये मेरे प्रति उनका पहले जैसा आदर भाव बना रहेगा। सिर्फ़ एक बात से डरता हूं – अफ़वाहों-चुग़लियों से। यहां हमारी मकान-मालकिन शोर मचाती रहती है। अब, जबकि आपके भेजे हुए दस रूबलों से मैंने उसके क़र्ज़ का एक हिस्सा अदा कर दिया है, तो वह केवल बुड़बुड़ करती रहती है, इससे

ज़्यादा कुछ नहीं। जहां तक दूसरे लोगों का सम्बन्ध है तो उनकी तरफ़ से मुझे कोई परेशानी नहीं। उनसे तो सिर्फ़ क़र्ज़ नहीं मांगना चाहिये, बाक़ी सब ठीक है। अपनी सफ़ाई के अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं, मेरी रानी, कि अगर आप मेरी इज़्ज़त करती हैं तो मुझे इससे ज़्यादा और कुछ नहीं चाहिये और अपने मुसीबत के इस वक़्त में इसी चीज़ से मुझे चैन मिलता है। शुक्र है भगवान का कि तूफ़ान का पहला झोंका और संकट के पहले झटके गुज़र गये हैं और आपने इसे इस रूप में नहीं लिया कि मुझे इस कारण झूठा मित्र और स्वार्थी मानें कि आपको, अपने नन्हे फ़रिश्ते को प्यार करने और आपकी जुदाई को सहन न कर पाने के भय से मैंने आपको अपने से दूर नहीं जाने दिया और आप से छल किया। बड़े जोश से मैं अपने काम में जुट गया हूं और बहुत अच्छी तरह से अपनी ड्यूटी बजाने लगा हूं। कल मैं येवस्ताफ़ी इवानोविच के पास से गुज़रा तो उन्होंने मुझे कुछ भी तो भला-बुरा नहीं कहा। मेरी प्यारी, मैं आप से यह नहीं छिपाऊंगा कि क़र्ज़ के मारे मेरा दम निकला जा रहा है और कपड़ों के मामले में भी मेरी हालत ख़स्ता है। लेकिन यह भी कोई ख़ास बात नहीं और आपसे अनुनय करता हूं कि इसके बारे में परेशान होने की ज़रूरत नहीं, मेरी रानी। आपने पचास कोपेक भी भेजे हैं, वारेन्का, और इनसे मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े हो गया। देखिये कैसा वक़्त, कैसा ज़माना आया है! मैं बूढ़ा उल्लू आपकी, अपने नन्हे फ़रिश्ते की मदद नहीं करता हूं, बल्कि आप, बेचारी यतीम, मेरी सहायता करती हैं! फ़ेदोरा ने बहुत अच्छा किया कि कहीं से पैसे ले आई। मेरी रानी, फ़िलहाल मुझे तो कहीं से पैसे मिलने की कोई उम्मीद नहीं है। यदि ऐसी कोई सम्भावना पैदा हो गयी तो आपको सविस्तार सब कुछ लिख भेजूंगा। लेकिन अफ़वाहों, झूठी बातों से ही मैं सबसे ज़्यादा डरता हूं। विदा, मेरे नन्हे फ़रिश्ते। आपका प्यारा-सा हाथ चूमता हूं और आपके स्वास्थ्य की कामना करता हूं। विस्तार से इसलिये सब कुछ नहीं लिख रहा हूं कि दफ़्तर जाने की जल्दी में हूं। अपनी लगन और कड़े श्रम से नौकरी के मामले में की गयी लापरवाही का बुरा प्रभाव दूर करना चाहता हूं। शेष सभी घटनाओं

और फ़ौजी अफ़सरों के साथ हुए झंझट के बारे में शाम को लिखूंगा।

सादर और हार्दिक स्नेह सहित

मकार देवुश्किन।

२८ जुलाई

ओह वारेन्का, वारेन्का! अब तो दोष आपके सिर ही है, आपके सिर ही और आपकी आत्मा में इसकी चेतना बनी रहेगी। अपने पत्र से आपने मुझे बड़ी परेशानी में डाल दिया, मैं चिन्तित हो उठा। केवल अभी, जब कुछ फ़ुरसत मिली और मैंने अपने अन्तर में झांककर देखा तो यह पाया कि मैं सही था, बिल्कुल सही था। मैं अपनी बुरी हरकत की चर्चा नहीं कर रहा हूं (उसके बारे में बहुत हो चुका, बहुत हो चुका!) बल्कि यह कहना चाहता हूं कि आपको प्यार करता हूं और आपको प्यार करना नासमझदारी की बात नहीं थी, बिल्कुल नासमझदारी की बात नहीं थी। मेरी रानी, आप तो कुछ भी नहीं जानतीं, लेकिन अगर यह जानती होतीं कि ऐसा क्यों है, किस कारण मैं आपको ऐसे प्यार करने को विवश हूं तो आप बिल्कुल दूसरी ही बात कहतीं। यह सब तो आपके दिमाग़ से निकलनेवाली बातें हैं, लेकिन मुझे यक़ीन है कि आपका दिल कुछ और ही कहता है।

मेरी प्यारी, अफ़सरों के मामले में क्या हुआ था, यह तो मैं ख़ुद भी नहीं जानता और मुझे अच्छी तरह से याद भी नहीं। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, आपको यह बताना ज़रूरी है कि उस वक़्त बहुत ही दुखद स्थिति थी मेरी। आप यही समझिये कि महीना भर मैं मानो एक धागे के सहारे लटकता रहा था। हालत बहुत ही ज़्यादा ख़राब थी। आप से तो मैंने अपना भेद छिपाया, अड़ोसियों-पड़ोसियों को भी कुछ मालूम नहीं था, लेकिन मेरी मकान-मालकिन ने बड़ा हंगामा किया, ख़ूब शोर मचाया। मेरी बला से। चिल्लाती है तो चिल्लाती रहे, बूढ़ी चुड़ैल। लेकिन एक तो शर्म-बदनामी और दूसरे, भगवान जाने कहां से उसे हमारे सम्बन्धों के बारे में पता चल गया और उसने ऐसा गुल-गपाड़ा किया कि मैं स्तम्भित

रह गया और मैंने अपने कान बन्द कर लिये। लेकिन दूसरों ने तो अपने कान बन्द नहीं किये, इसके विपरीत, उनके कान तो खड़े हो गये। मेरी रानी, अब भी मेरी समझ में यह नहीं आता कि अपना मुंह कहां छिपाऊं...

तो, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, इन सब बातों, इस पूरे हंगामे, सभी तरह की मुसीबतों ने मुझे बेहद परेशान कर डाला। तभी अचानक मुझे फ़ेदोरा से यह पता चला कि कोई बदमाश आपके घर में आया और बेहूदा प्रस्तावों से उसने आपका अपमान किया, घोर अपमान किया। मैं तो अपने मन की स्थिति से यह कह सकता हूं, क्योंकि स्वयं मुझे घोर अपमान की अनुभूति हुई। बस, अब क्या था, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं पूरी तरह अपना सन्तुलन खो बैठा, अपने बस में नहीं रहा, बुराई की आखिरी हद तक जा पहुंचा। मेरी प्यारी मित्र, वारेन्का, मैं पागल की तरह, एक जनूनी की तरह भाग चला, मैं उस नीच के घर पहुंचना चाहता था, मैं नहीं जानता था कि मेरा क्या करने का इरादा था, क्योंकि यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई आपका, मेरे नन्हे फ़रिश्ते का अपमान करे! बड़ा उदासी का आलम था! उस वक़्त बारिश हो रही थी, कीचड़ था, मन बिल्कुल बुझा-बुझा-सा था! मैंने लौटना चाहा... इसी वक़्त तो मेरा पतन हो गया, मेरी रानी। येमेल्या, यानी येमेल्यान इल्यीच से मेरी भेंट हो गयी। वह बाबू है, मेरा मतलब यह कि हमारे दफ़्तर से अलग कर दिये जाने तक बाबू था। अब वह क्या करता है, मुझे मालूम नहीं। किसी तरह गुज़र-बसर करता है। मैं उसके साथ हो लिया। और वारेन्का, अब अपने मित्र के दुर्भाग्य, उसकी मुसीबतों और प्रलोभनों की कहानी पढ़कर आपको क्या ख़ुशी हासिल होगी? तीसरे दिन की शाम को इस येमेल्या ने मुझे भड़का दिया और मैं उस अफ़सर के घर की तरफ़ चल दिया। अपने अहाते की सफ़ाई करनेवाले से मैंने उसका पता मालूम किया। अब चूंकि बात से बात निकल आई है तो मैं आपको यह बताना चाहता हूं, मेरी प्यारी, कि इस अफ़सर की तरफ़ मैं बहुत पहले से ध्यान देता रहा हूं, उस वक़्त से, जब वह हमारे इसी घर में रहता था, मुझे उसमें कुछ गड़बड़ नज़र आती थी। लेकिन अब तो मैं यह अनुभव करता हूं कि मैंने शिष्टता से काम नहीं लिया, जब मेरे बारे में

उसे सूचित किया गया तो मेरे होश-हवास ठीक नहीं थे। सच यह है, वारेन्का, कि मुझे कुछ भी याद नहीं। सिर्फ़ इतना याद है कि उसके कमरे में बहुत-से फ़ौजी अफ़सर थे या फिर मुझे एक की जगह दो-दो नज़र आ रहे थे – भगवान ही जानता है। इसी तरह मुझे यह भी याद नहीं कि मैंने क्या कुछ कहा, लेकिन इतना जानता हूं कि अपने गुस्से में मैंने बहुत कुछ कह डाला था। इसके बाद ही उन्होंने मुझे कमरे से बाहर निकाल दिया, जीने से नीचे फेंक दिया, मेरा मतलब यह नहीं है कि नीचे ही फेंक दिया था, बल्कि यह कि ज़रा धकेल दिया। यह तो आपको मालूम ही है, वारेन्का, कि मैं कैसे घर लौटा। बस, इतना ही क़िस्सा है। बेशक यह मेरा पतन था, मेरी प्रतिष्ठा को भी धक्का लगा, लेकिन यह तो कोई नहीं जानता, पराये लोगों में से तो कोई नहीं जानता। केवल आप ही जानती हैं, इसलिये एक तरह से यह कहा जा सकता है कि मानो ऐसा कुछ हुआ ही नहीं। शायद यह ठीक ही है, वारेन्का, क्या ख़्याल है आपका? एक बात जो मेरी आंखों देखी है, वह यह है कि पिछले साल अक्सेन्ती ओसिपोविच ने प्योत्र पेत्रोविच की इज़्ज़त पर हमला किया था। लेकिन छिपे-छिपे, एकदम गुप्त रूप से। अक्सेन्ती ओसिपोविच ने उसे चौकीदार के कमरे में बुलाया – मैंने यह सब दरार में से देखा – वहां उसके ख़ूब खोटी-खरी सुनाई, लेकिन बड़े शिष्ट ढंग से, क्योंकि मेरे सिवा और किसी ने यह नहीं देखा। मेरा क्या था, यानी मैं कहना चाहता हूं कि मैंने तो किसी से इसकी चर्चा नहीं की। इसके बाद प्योत्र पेत्रोविच और अक्सेन्ती ओसिपोविच भी ऐसे ज़ाहिर करने लगे मानो कुछ हुआ ही न हो। प्योत्र पेत्रोविच अपनी प्रतिष्ठा को इतना प्यार करता है कि उसने इस बारे में किसी से एक शब्द भी नहीं कहा। वे एक दूसरे का अभिवादन भी करते हैं और हाथ भी मिलाते हैं। वारेन्का, मैं आपकी बात का खण्डन नहीं करता, ऐसा करने का साहस भी नहीं कर सकता। मेरा बहुत पतन हो गया है और सबसे बुरी बात तो यह है कि मैं ख़ुद अपनी नज़र में गिर गया हूं। निश्चय ही यह मेरी क़िस्मत में लिखा था और, आप जानती हैं, कि क़िस्मत का लिखा तो होकर रहता है। वारेन्का, यही है मेरे दुर्भाग्य और मुसीबतों का सविस्तार वर्णन। यह पढ़ने योग्य बिल्कुल नहीं है।

मेरी तबीयत कुछ अच्छी नहीं है, मेरी रानी, और इसलिये आज मुझ में हंसी-मज़ाक़ का भी रंग नहीं है। मेरी प्यारी रानी, मैं आपको अपने स्नेह, प्यार और आदर का विश्वास दिलाता हूं।

आपका विनीत दास
मकार देवुश्किन।

२६ जुलाई

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

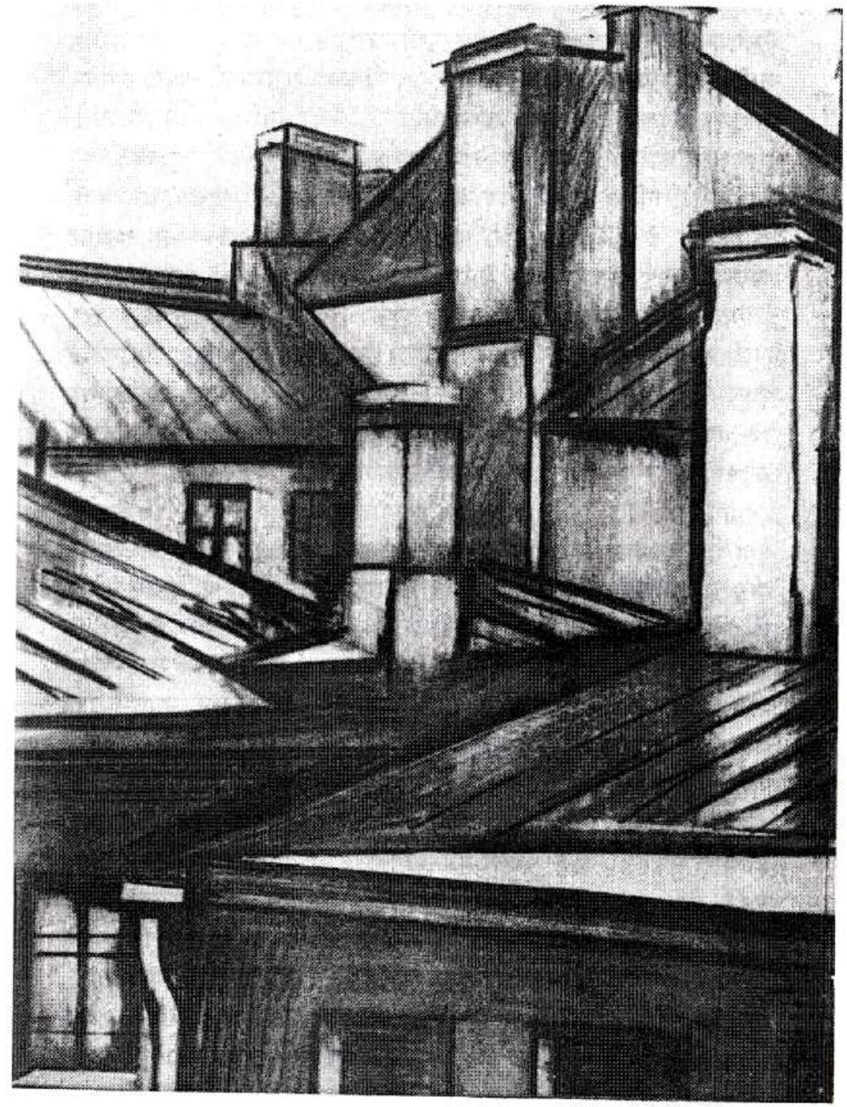
मैंने आपके दोनों पत्र पढ़ लिये हैं और स्तम्भित रह गयी हूं! सुनिये, मेरे मित्र, या तो आप मुझ से कुछ छिपा रहे हैं या फिर आपने मुझ से अपनी पूरी मुसीबतों की चर्चा नहीं की या... सच, मकार अलेक्सेयेविच, आपके पत्र कुछ घबराहट से ओतप्रोत हैं... आज आप मेरे यहां आयें, भगवान के लिये ज़रूर आयें, शाम का भोजन करने के लिये आ जायें। मुझे मालूम नहीं कि आपका क्या हाल-चाल है और मकान-मालकिन के साथ आपकी कैसी निभ रही है। आपने इस सब के बारे में कुछ भी नहीं लिखा और मानो जान-बूझकर चुप्पी साधे हुए हैं। तो विदा, मेरे मित्र। आज अवश्य ही हमारे यहां आइये। वैसे तो यही ज़्यादा अच्छा होगा कि आप हर दिन ही शाम का भोजन यहां किया करें। फ़ेदोरा बहुत अच्छा खाना पकाती है। विदा।

आपकी
वरवारा दोब्रोस्योलोवा।

१ अगस्त

मेरी रानी वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

आप इस बात से खुश हैं, मेरी प्यारी, कि भगवान ने नेकी के बदले में नेकी और मेरे प्रति आभार प्रकट करने का सुअवसर दिया है। मैं जानता हूं कि आप ऐसा करना चाहती हैं, वारेन्का, और आपके फ़रिश्ते जैसे दिल की नेकी पर भी विश्वास करता हूं।



मैं आपके दिल को चोट पहुंचाने के लिये यह नहीं लिख रहा हूं, किन्तु अनुरोध करता हूं कि आप मेरी यह भर्त्सना नहीं करें कि मैंने बुढ़ापे में एक उलटी-सीधी हरकत कर डाली। हां, हो गयी थी ऐसी भूल मुझसे! अगर आप यही चाहती हैं कि उसे पाप माना जाये, तो ऐसा ही सही। किन्तु आप से, मेरी मित्र, अपनी भर्त्सना सुनकर ही तो मुझे बहुत दुख होता है! मैं आप से यह कह रहा हूं, आप इसका बुरा नहीं मानियेगा। मेरा दिल घायल हुआ पड़ा है, मेरी रानी। ग़रीब लोग झक्की-शक्की होते हैं – ऐसा तो प्रकृति ही करती है। मैं पहले भी ऐसा अनुभव करता था। वह, ग़रीब आदमी बहुत चौकस होता है, वह दुनिया को दूसरे ही ढंग से देखता है, हर राहगीर को सन्देह की दृष्टि से आंकता है, अपने इर्द-गिर्द झेंपती हुई नज़र डालता है, हर शब्द को बहुत ध्यान से सुनता है – कहीं उसी की तो कोई चर्चा नहीं हो रही? कोई यह तो नहीं कह रहा कि वह कैसा गया-बीता है? वह क्या अनुभव करता रहता है? इस पहलू या उस पहलू से देखने पर वह कैसा लगता है? और यह तो हर कोई जानता है, वारेन्का, कि ग़रीब आदमी चिथड़े से भी बुरा होता है, उसकी कोई इज़्ज़त नहीं करता, चाहे लिखने को कुछ भी क्यों न लिखा जाता रहे! ये क़लम-घसीट लिखने को चाहे कुछ भी क्यों न लिखते रहें! – ग़रीब आदमी का तो वैसा ही हाल रहेगा, जैसा था। क्यों उसका पहले जैसा ही हाल रहेगा? इसलिये कि उनके मतानुसार ग़रीब आदमी का तो सब कुछ सबके सामने, बिल्कुल खुला होना चाहिये, उसका कोई परदा नहीं होना चाहिये। रही आत्म-सम्मान की बात, तो उसका तो सवाल ही नहीं पैदा होता, बिल्कुल सवाल पैदा नहीं होता। कुछ ही दिन पहले येमेल्या ने मुझे बताया कि उसके लिये कहीं चन्दा जमा किया गया और उसे दिये गये हर दस कोपेक के लिये एक तरह की सरकारी जांच-पड़ताल की गयी। उन्होंने सोचा होगा कि वे योंही अपने दस-दस कोपेक उसे दे रहे हैं। अजी नहीं, उन्होंने इसलिये पैसे दिये थे कि उन्हें एक ग़रीब आदमी दिखाया गया था। मेरी प्यारी, अब तो दान-पुण्य भी बड़े अजीब तरीक़े से किया जाता है... शायद हमेशा ही ऐसे किया जाता रहा है, कौन जाने! या तो वे इसका ढंग ही नहीं जानते या फिर इस

फ़न के बड़े माहिर हैं – दोनों में से एक बात है। आप शायद यह नहीं जानती थीं और लीजिये, अब जान जाइये! कोई दूसरी बात हम समझते हों या न समझते हों, लेकिन यह तो समझते हैं। भला ग़रीब आदमी यह सब क्यों जानता है और किसलिये ऐसा सोचता है? किसलिये? अपने अनुभव के आधार पर! उदाहरणतः इसलिये कि वह जानता है कि उसकी बग़ल में एक ऐसा महानुभाव रहता है जो आज रेस्तरां जाते समय अपने आप से यह कह रहा है – यह भूखा-ग़रीब आदमी आज क्या खायेगा? मैं तो बढ़िया-बढ़िया व्यंजनों पर हाथ साफ़ करूंगा और वह शायद मक्खन के बिना दलिया खायेगा। उसे भला इससे क्या मतलब कि मैं मक्खन के बिना दलिया खाऊंगा? ऐसे लोग हैं, वारेन्का, ऐसे लोग हैं जो ऐसी ही बातें सोचते हैं। और कीचड़ उछालनेवाले ये बेशर्म क़लम-घसीट राह चलते हुए यही देखते रहते हैं कि लोग सड़क पर जमाकर पांव रखते हैं या पंजों के बल चलते हैं, कि फलां दफ़्तर के फलां बाबू या किरानी की उंगलियां जूते से बाहर निकली हुई हैं, कि उसके कोट की कोहनियां फटी हुई हैं – और फिर वे यही सब कुछ लिखकर, इस बेहूदा, बकवास को छपवा देते हैं... तुम्हें इससे क्या लेना-देना है कि कोहनियों से मेरा कोट फटा हुआ है? अगर आप मुझे भद्दी-सी बात कहने के लिये क्षमा कर दें, वारेन्का, तो मैं कहूंगा कि ग़रीब आदमी को इस मामले में वैसी ही शर्म महसूस होती है, जैसे किसी मामले में नारी को। अशिष्ट शब्दों के लिये क्षमा चाहता हूं, जैसे आप किसी पराये आदमी के सामने कपड़े उतारने को तैयार नहीं होंगी, वैसे ही ग़रीब आदमी यह नहीं चाहता कि उसके घोंसले में दूसरे लोग ताक-झांक करें, यह जानना चाहें कि उसके पारिवारिक सम्बन्ध कैसे हैं – ठीक है न। मेरे दुश्मनों के साथ-साथ वे भी क्यों मेरी इज़्ज़त, मेरे आत्म-सम्मान पर चोट करते हैं।

अपने दफ़्तर में भी मैं आज ऐसा फूहड़-सा, नुची हुई चिड़िया-सा लग रहा था कि ख़ुद शर्म से गड़ नहीं गया। बहुत ही शर्म आ रही थी मुझे, वारेन्का! इस तरह से झेंपना तो स्वाभाविक है, जब कपड़ों में से कोहनियां बाहर निकली हों और बटन धागे के सहारे लटक रहे हों। मेरे साथ तो मानो जान-बूझकर ही आज

ऐसी गड़बड़ थी! इसलिये कोई अचरज नहीं कि आदमी का दिल बैठ जाता है। और तो और... खुद स्तेपान कार्लोविच ने आज काम के सिलसिले में मुझ से बातचीत शुरू की। वह बात करता रहा, करता रहा और फिर अचानक ही कह उठा – "ओह, प्यारे मकार अलेक्सेयेविच!" इसके बाद उसने अपने बात पूरी नहीं की। उसके दिमाग में क्या था, इसका तो मैंने खुद अनुमान लगाया और मुझे इतनी शर्म आयी कि मेरी चांद तक गर्म हो उठी। यों तो कोई बात नहीं, लेकिन फिर भी मन में चिन्ता पैदा हो रही है, सभी तरह के विचार दिमाग में आते हैं। उन्हें कहीं कुछ पता तो नहीं चल गया! भगवान न करे, कहीं कोई सुन-गुन न मिल गयी हो उन्हें! एक आदमी पर मेरा शक है, बेहद शक है। बुरे लोगों की बला से! किसी का भी भंडाफोड़ कर सकते हैं! कौड़ियों के मोल किसी के पूरे वैयक्तिक जीवन का भंडाफोड़ कर सकते हैं, उनके लिये तो कुछ भी पावन नहीं है।

मैं अब जानता हूं कि यह किसकी हरकत है – यह राताज्यायेव की कारगुज़ारी है। हमारे दफ़्तर में उसकी किसी से जान-पहचान है। निश्चय ही उसने बातों-बातों में उससे सब कुछ कह दिया होगा और वह भी बढ़ा-चढ़ाकर; या फिर उसने अपने दफ़्तर में इसकी चर्चा की होगी और वह हमारे दफ़्तर तक पहुंच गयी। हमारे मकान में सब लोग सभी कुछ जानते हैं और उंगली से आपकी खिड़की की तरफ़ इशारा करते हैं। यह तो मैं निश्चित रूप से जानता हूं कि इशारे किये जाते हैं। कल शाम को जब मैं भोजन करने के लिये आपके यहां गया तो सभी पड़ोसी खिड़कियों से झांक रहे थे और मकान-मालकिन ने कहा कि बूढ़ा शैतान छोकरी के फेर में पड़ गया है। बाद में उसने आपके बारे में भी अपशब्द कहे। लेकिन राताज़्यायेव के इस बुरे इरादे की तुलना में तो यह कुछ भी नहीं। वह तो हम दोनों के बारे में तीखा व्यंग्य लिखना चाहता है। उसने खुद यह कहा था और हमारे कुछ अच्छे पड़ोसियों ने भी यह बताया है। मेरी अक़्ल बिल्कुल काम नहीं कर रही है, मेरी रानी, और मैं कुछ भी तय नहीं कर पा रहा हूं। सच्ची बात तो यह है, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, कि हमने भगवान को नाराज़ कर दिया है! आप, मेरी प्यारी, ऊब मिटाने के लिये कोई किताब

भेजना चाह रही थीं। हटाइये, किताब को, मेरी रानी! किताब में होगा ही क्या? झूठी बातों का रोना-धोना! और उपन्यास, वह भी बकवास होता है, काहिल लोगों के पढ़ने के लिये। मेरी रानी, अनेक सालों के मेरे इस अनुभव पर विश्वास करें। और अगर वे आपसे शेक्सपियर की चर्चा करें और कहें कि साहित्य में शेक्सपियर बहुत महत्त्व रखता है, तो यह भी बकवास है, यह सब कीचड़ उछालने के लिये है!

आपका

मकार देवुश्किन।

२ अगस्त

मेरे प्यारे, मकार अलेक्सेयेविच,

आप किसी भी बात की चिन्ता नहीं करें। भगवान ने चाहा तो सब ठीक-ठाक हो जायेगा। फ़ेदोरा अपने लिये और मेरे लिये बहुत-सा काम ले आई है और हम बड़े उत्साह से उसे करने में जुट गयी हैं। शायद हम सब कुछ ठीक कर लेंगी। फ़ेदोरा का ऐसा ख़्याल है कि पिछले दिनों की मेरी सारी मुसीबतों का आन्ना फ़्योदोरोव्ना से भी ज़रूर कुछ सम्बन्ध है। लेकिन मुझे अब इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। आज मेरा मन बहुत खुश है। आप क़र्ज़ लेना चाहते हैं – भगवान के लिये ऐसा नहीं कीजिये! जब उसे लौटाने का वक़्त आयेगा तो आप परेशानी से नहीं बच पायेंगे। यही ज़्यादा अच्छा होगा कि आप हमारे साथ घुल-मिलकर रहें, हमारे यहां अक्सर आया करें और अपनी मकान-मालकिन की तरफ़ ध्यान नहीं दें। जहां तक आपके दूसरे दुश्मनों और अहित-चिन्तकों का सम्बन्ध है तो मुझे यक़ीन है कि आप व्यर्थ ही मन को व्यथित कर रहे हैं। देखिये, पिछली बार मैंने आप से कहा था कि आपकी शैली, आपका लिखने का ढंग बड़ा अटपटा है। तो विदा। अवश्य ही हमारे यहां आइयेगा।

आपकी

व० द०

३ अगस्त

मेरे नन्हे फ़रिश्ते, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

आपको जल्दी से जल्दी यह सूचित करना चाहता हूं, मेरी प्राण, कि मेरे मन में कुछ आशायें जन्म ले रही हैं। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मेरी गुड़िया, आप लिखती हैं कि मैं क़र्ज़ न लूं। मेरी मैना, इसके बिना काम नहीं चल सकता। मेरी हालत तो पतली है ही और आपकी स्थिति भी कुछ अच्छी नहीं। भगवान न करे कि कोई ऐसी-वैसी बात हो जाये! आप इतनी कमज़ोर जो हैं। मैं इसीलिये आपको यह लिख रहा हूं कि क़र्ज़ तो लेना ही होगा। तो मैं लिखने का सिलसिला जारी रखता हूं।

आपको यह बताना चाहता हूं, वरवारा अलेक्सेयेव्ना, कि दफ़्तर में मैं येमेल्यान इवानोविच के साथ बैठता हूं। यह वही येमेल्यान नहीं है जिसके बारे में आप जानती हैं। वह मेरी तरह ही मुंशी है और हमारे दफ़्तर में शायद हम दोनों ही सबसे पुराने कर्मचारी हैं। वह भला और निस्स्वार्थ आदमी है, बहुत कम बोलता-चालता है और देखने में गंवार-सा लगता है। लेकिन अपना काम खूब अच्छी तरह से जानता है, लिखावट ऐसी सुन्दर है कि जैसे मोती पिरोये हों। सच कहा जाये तो मुझ से उन्नीस नहीं है उसकी लिखावट। योग्य व्यक्ति है! हमारे बीच कभी कोई विशेष घनिष्ठता नहीं रही। बस, दफ़्तर में आने और जाने के वक़्त अभिवादन हो जाता है। कभी मुझे क़लम बनाने के लिये चाक़ू की ज़रूरत पड़ जाती है तो मैं उससे मांग लेता हूं – ज़रा दीजिये, येमेल्यान इवानोविच, अपना चाक़ू, – थोड़े में यह कि साथ-साथ बैठने पर जितने ज़रूरी हो सकते हैं, उतने ही सम्बन्ध हैं। हां, तो आज उसने मुझ से कहा – मकार अलेक्सेयेविच, किस गहरी सोच में डूबे रहते हैं आप? मैंने अनुभव किया कि यह आदमी मेरा हित-चिन्तक है और इसलिये मैंने उससे अपने दिल की बात कह दी। मेरा मतलब यह कि सब कुछ तो नहीं कहा मैंने, और भगवान बचाये कभी ऐसा नहीं करूंगा, क्योंकि इतनी हिम्मत नहीं कर पाऊंगा। हां, यह बता दिया कि हाथ बड़ा तंग है, इत्यादि। "भैया मेरे," येमेल्यान इवानोविच ने कहा, "आप क़र्ज़ ले लें। प्योत्र पेत्रोविच से ले

सकते हैं। वह सूद पर क़र्ज़ देता है, मैंने भी लिया था। वह सूद भी ज़्यादा नहीं लेता।" ओह, वारेन्का, मेरा दिल ख़ुशी से उछल पड़ा। सोचने लगा कि शायद भगवान प्योत्र पेत्रोविच के दिल में दया का भाव जमा दे और वह मुझे क़र्ज़ दे दे। साथ ही मन में यह हिसाब-किताब जोड़ने लगा कि अगर मकान-मालकिन का किराया चुका दूं तो कितना अच्छा हो, कुछ आपकी मदद करूं और ख़ुद मैं भी तो कितना ख़स्ताहाल हूं, अपने पर शर्म आती है। अपनी सीट पर बैठते हुए भी घबराहट होती है और फिर फब्तियां कसनेवाले भी तो चुप नहीं रहते। ख़ैर, करते रहें वे ऐसी हरकतें! और हां, कभी-कभी बड़े हुज़ूर भी तो हमारी मेज़ के पास से गुज़रते हैं। भगवान न करे कि कहीं मेरी तरफ़ उनका ध्यान चला जाये और वह यह देख लें कि मैं ढंग के कपड़े नहीं पहने हूं! उनके लिये सब से बड़ी चीज़ है स्वच्छता, साफ़-सुथरापन। वह तो शायद कुछ न कहें, लेकिन मैं शर्म से पानी-पानी हो जाऊंगा, हां, ऐसा ही होगा। इसलिये मैंने अपना दिल कड़ा किया, शर्म को ताक पर रखा और प्योत्र पेत्रोविच की तरफ़ चल दिया दिल में आशायें संजोये और क्या नतीजा होगा, इस चिन्ता में डूबता-उतराता दिल लिये हुए। और वारेन्का, कुछ भी तो अच्छा नतीजा नहीं निकला इसका! वह व्यस्त था, फ़ेदोसेई इवानोविच से बातें कर रहा था। मैं बग़ल से उसके पास गया, उसकी आस्तीन खींचकर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। उसने मेरी ओर देखा। मैंने उससे कहा कि ऐसी-ऐसी बात है, कोई तीस रूबलों की ज़रूरत है, आदि आदि। उसने शुरू में तो जैसी मेरी बात ही नहीं समझी। बाद में जब मैंने उसे सब कुछ स्पष्ट किया तो वह हंस दिया और उसके बाद चुप हो गया। मैंने फिर से अपनी बात दोहरायी। उसने मुझ से पूछा – आपके पास गिरवी रखने को कुछ है? और ख़ुद अपने काग़ज़ में व्यस्त हो गया, लिखता रहा और मुझे तो जैसे भूल ही गया। मुझे इससे कुछ हैरानी हुई। मैंने जवाब दिया कि प्योत्र पेत्रोविच, गिरवी रखने को तो कुछ नहीं और यह स्पष्ट किया कि जैसे ही वेतन मिलेगा, मैं अवश्य अपना ऋण चुका दूंगा, हर हालत में ऐसा करूंगा। इसी वक़्त किसी ने उसे बुला लिया, मैं उसका इन्तज़ार करता रहा, वह लौटा, अपनी क़लम बनाने लगा और मैं

तो जैसे वहां था ही नहीं। मैंने फिर से अपनी बात दोहरायी – प्योत्र पेत्रोविच, क्या किसी तरह से ऐसा कर सकते हैं? वह चुप रहा, मानो मेरी बात ही न सुन रहा हो। मैं खड़ा रहा, खड़ा रहा, सोचा कि आखिरी कोशिश कर देखूं और फिर से उसकी आस्तीन खींची। उसने तो एक भी शब्द मुंह से नहीं निकाला, क़लम बनायी और लिखने लगा। मैं अपनी सीट पर वापस आ गया। मेरी रानी, ये लोग बेशक योग्य और प्रतिष्ठित हैं, मगर घमण्डी हैं, बेहद घमण्डी! मैं क्या हूं! हम लोग उनके मुक़ाबले में कुछ भी तो नहीं! मैंने इसीलिये आपको यह सब लिखा है। येमेल्यान इवानोविच भी हंस दिया और उसने सिर हिलाया। लेकिन उस स्नेहशील व्यक्ति ने मुझे उम्मीद दिलायी। येमेल्यान इवानोविच भला आदमी है। उसने वादा किया है कि एक व्यक्ति से ऋण देने के लिये मेरी सिफ़ारिश करेगा। यह व्यक्ति विबोर्गस्काया में रहता है और सूद पर क़र्ज़ देता है, कोई मामूली कर्मचारी है। येमेल्यान इवानोविच का कहना है कि यह व्यक्ति तो अवश्य ऋण दे देगा। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, कल मैं उसके पास जाऊंगा। क्यों, क्या ख़्याल है आपका? क़र्ज़ न लेने पर तो बड़ी मुसीबत है! मकान-मालकिन मुझे घर से निकाले दे रही है, खाना देने से इन्कार करती है। मेरे जूतों की भी बहुत बुरी हालत है, मेरी रानी, और बटन भी नदारद हैं... कुछ अन्य चीज़ें भी नहीं हैं! अगर मेरे ऐसे बुरे हुलिये पर किसी बड़े अधिकारी की नज़र पड़ गयी तो क्या होगा? मुसीबत है, वारेन्का, एकदम मुसीबत है!

मकार देवुश्किन।

४ अगस्त

प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

भगवान के लिये जितनी भी जल्दी हो सके, कुछ रकम उधार ले लीजिये। आपकी इस समय की परिस्थितियों में मैंने किसी भी हालत में आपसे मदद न मांगी होती, लेकिन काश आपको यह मालूम होता कि मुझ पर क्या बीत रही है! इस मकान में अब हम हरगिज़ नहीं रह सकतीं। मेरे साथ बहुत ही बुरी बात हो गयी है और मैं

कितनी परेशान तथा व्यथित हूं, बता नहीं सकती। मेरे मित्र, ज़रा कल्पना कीजिये कि आज सुबह हमारे यहां एक अपरिचित व्यक्ति आया, अधेड़ उम्र का, लगभग बूढ़ा और तमग़े लगाये हुए। यह न समझते हुए कि उसे हमारे यहां क्या लेना-देना है, मैं बड़ी हैरान हुई। फ़ेदोरा इस वक़्त बाज़ार गयी हुई थी। उसने मुझ से पूछा कि मेरा कैसा हाल-चाल है, मैं क्या करती हूं और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना उसने मुझे बताया कि वह उस फ़ौजी अफ़सर का चाचा है, भतीजे के बुरे व्यवहार और इस बात के लिये बहुत नाराज़ है कि उसने सारे घर में हमारी नाक कटवा दी है, कि उसका भतीजा नासमझ छोकरा और चंचल मिज़ाज का नादान नौजवान है और वह ख़ुद मुझे अपनी छत्र-छाया में लेने को तैयार है। उसने मुझे सलाह दी कि मैं युवाजन की बातों पर कान न दूं, कि वह मेरे प्रति पिता के समान सहानुभूति रखता है, पिता-तुल्य भावनायें अनुभव करता है और हर तरह से मेरी मदद करने को तैयार है। मैं लज्जारुण हो गयी, समझ नहीं पाई कि इस सबके बारे में क्या नतीजा निकालूं, लेकिन आभार प्रकट करने की जल्दी नहीं की। उसने ज़बर्दस्ती मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया, मेरे गाल को थपथपाया, कहा कि मैं बहुत सुन्दर हूं और मेरे गालों पर पड़नेवाले गुल उसे बहुत अच्छे लगते हैं (भगवान जाने, उसने और क्या-क्या कहा) तथा यह कहते हुए कि वह एक बुढ़ा आदमी है, मेरा चुम्बन लेने की कोशिश की (ऐसा नीच था वह!)। इसी समय फ़ेदोरा आ गयी। वह कुछ झेंप गया और फिर से कहने लगा कि मेरे विनम्र स्वभाव तथा बहुत अच्छे चाल-चलन के लिये मेरी बड़ी इज़्ज़त करता है और बेहद चाहता है कि मैं उसे पराया आदमी न समझूं। इसके बाद वह फ़ेदोरा को एक तरफ़ को ले गया और किसी बहाने से उसे कुछ पैसे देने की कोशिश की। ज़ाहिर है कि फ़ेदोरा ने पैसे लेने से इन्कार कर दिया। आख़िर वह घर जाने को तैयार हुआ, उसने फिर से अपने आश्वासन दिये, यह कहा कि पुनः मेरे यहां आयेगा, मेरे लिये झुमकों की जोड़ी लायेगा (लगता है कि वह ख़ुद कुछ घबराया हुआ था)। उसने मुझ से घर बदलने को कहा, उस बढ़िया घर में जाकर रहने को कहा जो उसकी नज़र में था और जिसके लिये मुझे एक कौड़ी भी नहीं देनी पड़ेगी। उसने

यह भी कहा कि एक ईमानदार और समझदार लड़की के नाते उसे मुझ से बहुत प्यार हो गया है, यह सलाह दी कि मैं बदचलन नौजवानों से बचकर रहूं और आखिर यह बता दिया कि वह आन्ना फ़्योदोरोव्ना को जानता है, उसने कहलवाया है कि वह खुद मुझ से मिलने आयेगी। यह सुनकर तो सारी बात मेरी समझ में आ गयी। कह नहीं सकती कि इस वक़्त मेरे साथ क्या हुआ। जीवन में पहली बार मैंने अपने को ऐसी स्थिति में पाया। मैं आपे से बाहर हो गयी, मैंने उसकी खूब लानत-मलामत की। फ़ेदोरा ने मेरा साथ दिया और हमने उसे घर से बाहर निकाल दिया। हम इस नतीजे पर पहुंची कि यह सब आन्ना फ़्योदोरोव्ना की कारस्तानी है, वरना उसे हमारे बारे में पता ही कैसे चल सकता था?

अब मैं आपको सम्बोधित करती हूं, मकार अलेक्सेयेविच, और आप से सहायता का अनुरोध करती हूं। भगवान के लिये ऐसी परिस्थिति में मुझे मेरे हाल पर नहीं छोड़िये। जितनी भी रक़म उधार लेना सम्भव हो, कृपया ले लीजिये। हमें यह घर छोड़ना ही होगा, अब किसी तरह भी यहां और अधिक रहना उचित नहीं। फ़ेदोरा भी यही सलाह देती हैं। हमें कम से कम पच्चीस रूबल की ज़रूरत होगी। मैं आपको यह रक़म लौटा दूंगी, कमा लूंगी। फ़ेदोरा अगले कुछ दिनों में मेरे लिये और काम ले आयेगी। इसलिये अगर कोई ज़्यादा ब्याज मांगे तो इसकी परवाह न करते हुए क़र्ज़ ले लीजिये। मैं आपको सब लौटा दूंगी, सिर्फ़ मुझे मुसीबत में अकेले नहीं छोड़ियेगा। जब आप खुद ऐसी तंगी की हालत में हैं तो आपको तकलीफ़ देते हुए मुझे बहुत दुख हो रहा है, लेकिन आपके सिवा मैं किसी से कोई आशा भी तो नहीं कर सकती! विदा, मकार अलेक्सेयेविच, मेरा ध्यान रखिये। भगवान आपको सफलता प्रदान करे।

व० द०

४ अगस्त

मेरी गुड़िया, वरवारा अलेक्सेयेव्ना!

इस तरह के अप्रत्याशित आघात, ऐसी चोटें ही तो मुझे

स्तम्भित कर देती हैं! इसी तरह की भयानक मुसीबतें ही तो मेरी हिम्मत पस्त कर डालती हैं! ये सभी तरह के निन्दकों-चुग़लख़ोरों और बेहया बुड्ढों की भीड़ न केवल आपको, मेरे नन्हे फ़रिश्ते को बिस्तर थामने के लिये विवश करना चाहती है, ये कमीने लोग तो मेरी भी जान के पीछे पड़े हैं। मैं कसम खाकर कहता हूं कि वे मेरी जान लेकर रहेंगे। आपकी मदद न करने के बजाय मैं मर जाना कहीं बेहतर समझता हूं। अगर मैं आपकी मदद नहीं करूंगा, तो यह मेरी मौत होगी, निश्चित मौत होगी, वारेन्का, और अगर मदद करता हूं तो आप उस चिड़िया की भांति अपना घोंसला छोड़कर, जिसके इर्द-गिर्द बाज़ मंडराने लगे हैं, कहीं दूर उड़ जायेंगी। यही चीज़ तो मुझे परेशान कर रही है, मेरी रानी। और आप, वारेन्का, आप भी तो कितनी कठोर हैं! कैसे आप ऐसी बातें लिख सकती हैं? सभी आपको व्यथित करते हैं, आपके दिल को ठेस लगाते हैं, मेरी बुलबुल, आप दुख-मुसीबतें झेल रही हैं और फिर भी इस चिन्ता में घुलती हैं कि मुझे तकलीफ़ दे रही हैं, यह वादा करती हैं कि काम करके अपना ऋण चुका देंगी। दूसरे शब्दों में यह कि मैं वक़्त पर ऋण चुका दूं, इसके लिये आप अपनी कमज़ोर सेहत का सत्यानाश करेंगी। आप ज़रा सोचिये तो वारेन्का, कि किस तरह की बातें आप अपने दिमाग़ में लाती हैं! क्या ज़रूरत है आपको सिलाई करने की, काम करने की, अपने बेचारे दिमाग़ को चिन्ता में डालने की, प्यारी-प्यारी आंखों को बिगाड़ने और सेहत को ख़राब करने की! ओह, वारेन्का, वारेन्का, मेरी प्यारी गुड़िया, मैं किसी काम का आदमी नहीं हूं, खुद जानता हूं कि मेरी दो कौड़ी भी क़ीमत नहीं। लेकिन मैं किसी लायक़ बनने की कोशिश करूंगा! मैं सब कुछ कर सकता हूं, मैं खुद कोई अतिरिक्त काम हासिल करूंगा, लेखकों की रचनाओं की नक़लें तैयार करने का काम करूंगा, उनके पास जाऊंगा, खुद जाऊंगा, उनसे काम देने का अनुरोध करूंगा। बात यह है, मेरी रानी, कि वे अच्छे नक़लनवीसों की खोज में रहते हैं। मैं यह जानता हूं कि उन्हें उनकी ज़रूरत रहती है। मैं आपको ऐसे थकने नहीं दूंगा, अपने को मिटा डालने के आपके ऐसे इरादे को पूरा नहीं होने दूंगा। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं ज़रूर ही क़र्ज़ ले लूंगा,

ऐसा न करने के बजाय तो मर जाना कहीं बेहतर समझूंगा। आपने यह भी लिखा है, मेरी गुड़िया, कि मैं ज्यादा ब्याज देने की बात से न घबराऊं। नहीं घबराऊंगा, मेरी रानी, बिल्कुल नहीं घबराऊंगा, किसी भी चीज़ से अब नहीं घबराऊंगा। मेरी प्यारी, मैं नोटों के रूप में चालीस रूबल उधार लेना चाहूंगा। यह रक़म तो कुछ ज़्यादा नहीं है, वारेन्का। क्या ख़्याल है आपका? चालीस रूबल के क़र्ज़ के लिये तो अनुरोध करते ही मुझ पर विश्वास किया जा सकता है न? मेरा मतलब यह कि पहली नज़र में ही क्या आप मुझे ऐसा प्रभाव पैदा करने के लायक़ समझती हैं कि मुझ पर भरोसा, मुझ पर एतबार किया जा सके? शक्ल-सूरत से तो पहली नज़र में मेरा अच्छा असर पड़ सकता है या नहीं? मेरे फ़रिश्ते, मुझे यह बताइये कि मैं किसी में विश्वास पैदा कर सकता हूं या नहीं? आपकी क्या राय है? सच कहूं तो मैं भय अनुभव करता हूं, कष्टप्रद – वास्तव में ही दुखदायी है यह! चालीस रूबलों में से पचीस आपको देना चाहता हूं, वारेन्का। दो रूबल मकान-मालकिन को और बाक़ी अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिये ख़र्च करूंगा। मकान-मालकिन को यों तो कुछ अधिक देना चाहिये, ऐसा करना ज़रूरी भी है, लेकिन आप सारी स्थिति, मेरी सारी ज़रूरतों को ध्यान में रखें, मेरी रानी, तो और अधिक देना सम्भव नहीं। इसलिये इसकी चर्चा ही बेकार है, इसके ज़िक्र से कोई लाभ नहीं। चांदी के एक रूबल से मैं अपने लिये जूते ख़रीद लूंगा। मैं तो यह भी नहीं जानता कि पुराने जूते पहनकर कल दफ़्तर भी जा सकूंगा या नहीं। गुलूबन्द भी ज़रूरी है, क्योंकि पुराने को ख़रीदे हुए एक साल हो चुका है। लेकिन चूंकि आपने अपने पुराने पेशबन्द से न केवल गुलूबन्द, बल्कि वास्कट भी सी देने का वादा किया है, इसलिये मैं गुलूबन्द के बारे में तो सोचूंगा ही नहीं। तो जूते और रूमाल का मामला तय हो गया। अब सवाल आता है बटनों का, मेरी प्यारी मित्र! यह तो आपको मानना ही होगा, मेरी गुड़िया, कि बटनों के बिना मेरा काम नहीं चल सकता। मेरे लगभग आधे बटन ग़ायब हैं! यह सोचकर मैं कांप उठता हूं कि बड़े हुज़ूर ने अगर ऐसी गड़बड़ी देख ली, तो क्या कहेंगे! मेरी रानी, वह क्या कहेंगे मैं तो वह सुन भी नहीं पाऊंगा,

क्योंकि मेरी तो जान निकल जायेगी, वहीं जान निकल जायेगी, शर्म के मारे, इस बात के ख़्याल से ही मेरा दम निकल जायेगा! ओह मेरी प्यारी! इन सबके बाद तीन रूबल और बच जायेंगे। वे मेरे निर्वाह और आध पौण्ड तम्बाकू ख़रीदने के लिये होंगे। कारण, मेरी रानी, तम्बाकू के बिना मेरा जीना दुशवार है और मैंने पिछले नौ दिन से पाइप मुंह में नहीं लिया। सच तो यह है कि मैंने तम्बाकू ख़रीद लिया होता और आप से कुछ भी न कहा होता, लेकिन ऐसा करते हुए शर्म आती है। आप मुसीबत में हैं कौड़ी-कौड़ी को मोहताज हैं और मैं यहां मौज करता हूं। मैं इसीलिये आप से यह सब कह रहा हूं ताकि मेरी आत्मा मुझे न धिक्कारे। वारेन्का, मैं आप से बिल्कुल यह नहीं छिपाना चाहता कि बहुत ही बुरी हालत है मेरी। मेरा मतलब यह है कि ऐसी बुरी हालत तो मेरी पहले कभी नहीं हुई थी। मकान-मालकिन मुझे हिक़ारत की नज़र से देखती है, कोई मेरी इज़्ज़त नहीं करता, सभी तरह की बेहद कमियां हैं, क़र्ज़ हैं। दफ़्तर में तो सहयोगी पहले ही मुझ पर दया नहीं करते थे और अब तो कोई कसर ही बाक़ी नहीं रही। मैं बड़ी कोशिश से सब कुछ छिपाता हूं, अपने को भी छिपाता हूं, दूसरों से बच-बचकर, कन्नी काटता हुआ दफ़्तर में जाता हूं। केवल आपके सामने खुलकर अपने दिल का हाल पेश करने की हिम्मत कर पाता हूं... और अगर ऋण न मिला? नहीं, वारेन्का, ऐसा सोचना ही नहीं चाहिये और इस तरह के ख़्याल दिल में लाकर अपने को परेशान नहीं करना चाहिये। इसीलिये तो आपको यह लिख रहा हूं कि आप इसके बारे में न सोचें, बुरे विचार से अपने को चिन्तित न करें। ओह, मेरे भगवान, तब आपका क्या होगा! यह सच है कि तब आप इस घर से नहीं जायेंगी, आप मेरे निकट ही रहेंगी – लेकिन नहीं, तब मैं यहां नहीं लौटूंगा, कहीं रास्ते में ही लुप्त हो जाऊंगा, मिट जाऊंगा। मैं तो इतना कुछ लिखता ही जा रहा हूं, जबकि मुझे दाढ़ी बनानी चाहिये। दाढ़ी बनाकर अच्छा लगना चाहिये, अच्छी शक्ल-सूरत का हमेशा अच्छा प्रभाव पड़ता है। भगवान मेरी मदद करे! भगवान का नाम लेकर जाता हूं अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये!

म० देवुश्किन।

५ अगस्त

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

कम से कम आप तो हताश नहीं होइये। योंही दुख-मुसीबतों की कुछ कमी नहीं। चांदी के सिक्कों में आपको तीस कोपेक भेज रही हूं। इससे अधिक किसी तरह भी नहीं भेज सकती। आपके लिये जो कुछ बहुत जरूरी है, वह खरीद लीजिये, ताकि किसी तरह कल तक आपका काम चल जाये। खुद हमारे पास लगभग कुछ नहीं रह गया और नहीं जानती कि कल क्या होगा। मन बहुत भारी है, मकार अलेक्सेयेविच! वैसे आप दुखी न हों – सफलता नहीं मिली तो न सही। फ़ेदोरा का कहना है कि ऐसी कोई मुसीबत नहीं है, कुछ समय तक अभी इस मकान में रहा जा सकता है। अगर हम किसी दूसरी जगह भी चली जायें तो इससे कोई विशेष लाभ नहीं होगा। वे लोग अगर चाहेंगे तो हमें कहीं भी ढूंढ़ लेंगे। फिर भी अब यहां और रहना अच्छा नहीं। अगर मन भारी न होता तो मैं आपको कुछ और भी लिखती।

कैसा अजीब स्वभाव है आपका, मकार अलेक्सेयेविच! आप तो हर चीज़ को दिल से लगा लेते हैं। इस कारण आप कभी सुखी नहीं रह सकेंगे। मैं आपके सभी पत्रों को बहुत ध्यान से पढ़ती हूं और यह अनुभव करती हूं कि अपने हर पत्र में आप मेरे बारे में इतनी अधिक चिन्ता और परेशानी जाहिर करते हैं जितनी आपने अपने लिये कभी महसूस नहीं की होगी। यह तो सभी कहेंगे कि आपका बड़ा दयालु हृदय है, लेकिन मैं कहूंगी कि वह बहुत ही ज़्यादा दयालु है। मित्रता के नाते मैं आपको यह सलाह दे रही हूं, मकार अलेक्सेयेविच। मैं आपकी आभारी हूं, उस सबके लिये बहुत ही आभारी हूं जो आपने मेरे लिये किया। मैं यह सब कुछ बहुत ज़्यादा अनुभव करती हूं। आप स्वयं ही तय करें कि मुझे यह कैसा लगता होगा कि अपनी सारी मुसीबतों के बावजूद, जिनकी जड़ में अनजाने ही मैं हूं, आप अभी भी मेरी खुशियों, मेरे दुखों और मेरे हृदय को ध्यान में रखते हुए ही सांस ले रहे हैं! अगर पराये दुख-दर्द को इसी तरह से दिल को लगायेंगे और यदि सभी के प्रति ऐसी संवेदना रखेंगे तो सच, आप हमेशा ही दुखी रहेंगे। आज जब आप दफ़्तर से लौटने पर हमारे यहां आये तो आपको देखकर मैं डर ही गयी। आपका चेहरा बहुत पीला, सहमा-सहमा और निराशा का भाव लिये था। आपकी सूरत पहचानना कठिन था। यह इसलिये कि मुझ से अपनी असफलता के बारे में कहने से झिझकते थे, मेरे दिल को ठेस लगाने और घबरा देने से डरते थे। लेकिन जैसे ही आपने यह देखा कि मैं लगभग खिलखिलाकर हंस पड़ी हूं, तो आपके दिल का बोझ भी हल्का हो गया। मकार अलेक्सेयेविच! आप दुखी और निराश नहीं हों, विवेक से काम लें – मैं आप से अनुरोध और आपकी मिन्नत करती हूं। देख लीजियेगा कि सब ठीक हो जायेगा, सब कुछ बेहतर शक्ल ले लेगा। नहीं तो हमेशा दूसरे के दुख में घुलते और व्यथित होते रहने से आपका जीना कठिन हो जायेगा। तो विदा, मेरे प्यारे मित्र, प्रार्थना करती हूं कि मेरी बहुत अधिक चिन्ता नहीं करें।

व० द०

५ अगस्त

मेरी गुड़िया, वारेन्का,

अच्छी बात है, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, अच्छी बात है! आपका कहना है कि अगर मुझे क़र्ज नहीं मिला, तो यह कोई मुसीबत नहीं। अच्छी बात है, मैं शान्त हो गया हूं और इतना ही नहीं, प्रसन्न हूं। मुझे तो इस बात की भी खुशी है कि आप मुझ बूढ़े को छोड़कर नहीं जा रही हैं और इसी घर में रहेंगी। सच्ची बात तो यह है कि मेरा हृदय इस कारण खुशी से फूला नहीं समा रहा कि आपने अपने पत्र में मेरे बारे में बहुत अच्छी बातें लिखी हैं और मेरी भावनाओं की प्रशंसा की है। मैं घमण्ड से नहीं, बल्कि इसलिये यह लिख रहा हूं कि जब आप मेरे दिल की चिन्ता करती हैं तो इसका अर्थ है – मुझे प्यार करती हैं। पर खैर, मेरे दिल की क्या चर्चा की जाये! दिल तो दिल है, लेकिन आपने यह कहा है, मेरी रानी, कि मुझे दिल का कमजोर नहीं होना चाहिये। हां, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, यह तो मैं खुद भी कह सकता हूं कि आदमी को दिल का कमज़ोर नहीं होना चाहिये। लेकिन

इसके बावजूद, मेरी रानी, आप स्वयं ही यह तय करें कि कौनसे जूते पहनकर मैं कल दफ़्तर जाऊंगा! तो यह मामला है, मेरी प्यारी, ऐसी चिन्ता आदमी की जान ले सकती है, पूरी तरह से उसे मिटा सकती है। और सबसे बड़ी बात तो यह है, मेरी गुड़िया, कि मैं अपने लिये दुखी नहीं होता हूं, अपने लिये व्यथित नहीं हूं। मुझे इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि मैं भयानक ठण्ड-पाले में भी गर्म कोट और जूतों के बिना बाहर जा सकता हूं, सब कुछ सह सकता हूं, बर्दाश्त कर सकता हूं। मेरे लिये कोई बात नहीं, मैं मामूली-सा, छोटा-सा आदमी हूं, लेकिन सवाल यह है कि लोग क्या कहेंगे? जब मैं गर्म कोट के बिना बाहर जाऊंगा, तो मेरे दुश्मन, ज़हर बुझी ज़बानोंवाले लोग क्या कहेंगे? हम लोगों के लिये ही गर्म कोट और शायद उन्हीं को दिखाने की खातिर जूते भी पहनते हैं। मेरी प्यारी, मेरी रानी, ऐसी हालत में अपनी प्रतिष्ठा और नेकनामी बनाये रखने के लिये जूते जरूरी हैं। फटे जूते होने पर दोनों में से एक भी बची नहीं रहती। मेरी गुड़िया, मेरे अनेक साल के अनुभव, इस दुनिया के रंग-ढंग और लोगों को जानने-समझनेवाले मुझ बूढ़े की बात पर विश्वास कीजिये, कीचड़ उछालने और कलम घसीटनेवालों पर नहीं।

मेरी रानी, मैंने विस्तार से यह तो आपको बताया ही नहीं कि आज यह सब कुछ कैसे हुआ, कितना कुछ मुझे आज सहना पड़ा। जो कुछ मैंने सहन किया, एक सुबह को ही मुझे जितनी अधिक मानसिक व्यथा सहनी पड़ी, उतनी किसी दूसरे व्यक्ति को साल भर में भी सहन नहीं करनी पड़ेगी। तो यह सब ऐसे हुआ – मैं सुबह ही घर से चल पड़ा ताकि उससे मुलाक़ात हो जाये और मैं दफ़्तर भी वक़्त पर पहुंच जाऊं। ओह, कैसी मूसलधार बारिश थी आज और कितना कीचड़ था! मेरी प्यारी, मैं अपने कोट में सिमटा-सिमटाया चलता जा रहा था और मन ही मन सोचता जाता था – हे भगवान, मेरे पापों को क्षमा करो और मेरी यह इच्छा पूरी कर दो। गिरजाघर के पास से गुज़रते हुए मैंने अपने ऊपर सलीब का निशान बनाया, अपने सभी पापों के लिये प्रायश्चित्त किया और यह भी नहीं भूला कि भगवान से सौदेबाज़ी करना अच्छी बात नहीं। मैं पूरी तरह से अपने ही विचारों में खो गया,

किसी तरफ़ भी ध्यान नहीं देना चाहा और यह भी ख्याल नहीं किया कि किस सड़क पर चला जा रहा हूं। सड़कें सुनसान थीं और अगर कोई इक्का-दुक्का राहगीर मिलता भी था तो विचारों और चिन्ता में डूबा-खोया हुआ। इसमें हैरानी की बात भी कुछ नहीं – भला कौन इतने सवेरे और ऐसे मौसम में सैर को जायेगा! गन्दे-मन्दे मज़दूरों की पूरी भीड़ मेरे सामने आ गयी और इन गंवारों ने रेल-पेल की! मैं घबरा गया, बहुत ही परेशान हो उठा और सच तो यह है कि पैसों के बारे में तो मैं सोचना ही नहीं चाहता था। इतना ही ख्याल आता – शायद बात बन जाये! वोस्क्रेसेन्स्की पुल के निकट मेरे जूते का तला फटफटाने लगा, इसलिये खुद यह नहीं जानता कि मैं कैसे आगे चलता गया। यहीं हमारे मुंशी येर्मोलायेव से मेरी भेंट हो गयी। वह तनकर खड़ा हो गया, खड़ा-खड़ा ऐसे देखने लगा मानो वोद्का पीने को पैसे मांग रहा हो। अरे भाई, मैंने मन ही मन सोचा, ऐसी परिस्थिति में वोद्का का ख्याल ही किसे आ सकता है! बेहद थक गया था मैं, कुछ देर रुककर मैंने दम लिया और फिर आगे चल दिया। जान-बूझकर इधर-उधर नज़र दौड़ाई कि किसी चीज़ में अपने विचारों को उलझा सकूं, किसी तरह मन को बहला सकूं, अपने भीतर कुछ खुशी और उत्साह पैदा कर सकूं – लेकिन किसी भी चीज़ में मेरा ध्यान नहीं लग सका। इतना ही नहीं, कीचड़ में भी ऐसे लथपथ हो गया कि खुद अपने पर शर्म आने लगी। आखिर दूर से मुझे एक पीला-सा मकान दिखाई दिया जिसकी दुछत्ती मानो दूसरी मंज़िल के समान थी। सो मैंने सोचा कि येमेल्यान इवानोविच ने जो बताया था, वही है यह मार्कोव का मकान (यह मार्कोव वही है मेरी रानी, जो सूद पर क़र्ज़ देता है)। घबराहट से मुझे अपनी कुछ सुध-बुध नहीं रही थी और बेशक यह जानता था कि यह मार्कोव का मकान है, फिर भी मैंने पुलिसमैन से यह पूछा – कहो भाई, यह किसका मकान है? पुलिसमैन बड़ा ही बदतमीज़ था, ऐसे मन मारकर बात करता था मानो किसी पर झल्ला रहा हो और बड़ी मुश्किल से एक-एक शब्द मुंह से निकालते हुए बोला – हां, यह मार्कोव का ही घर है। ये पुलिसमैन तो सभी इसी तरह के भावनाहीन लोग होते हैं। मेरी बला से होते रहें वे ऐसे! लेकिन

मन पर कुछ बहुत बुरी और अप्रिय छाप ज़रूर पड़ी। थोड़े में यह कि एक कड़ी दूसरी के साथ जुड़ती जाती है, हर चीज़ में कुछ न कुछ अपनी स्थिति के साथ मेल खाता हुआ निकलता चला आता है और हमेशा ऐसा ही होता है। तीन बार घर के सामने सड़क पर चक्कर लगाया और जितना अधिक मैं आता-जाता था, मेरा उतना ही अधिक बुरा हाल होता जाता था – यही सोचता था – नहीं देगा, किसी हालत में भी क़र्ज़ नहीं देगा! मैं अनजाना-अजनबी आदमी हूं, मेरा मामला भी नाजुक-सा है, शाक्ल-सूरत भी असर डालनेवाली नहीं। फिर दिल को तसल्ली दी – जो होगा, सो होगा; बाद में यह अरमान, यह पछतावा तो नहीं रह जायेगा कि कोशिश नहीं की, वह मुझे खा तो नहीं जायेगा। यह सब सोचकर मैंने धीरे से दरवाज़ा खोला। वहां एक और मुसीबत सामने आ गयी – एक छोटा-सा, बुद्धू, घटिया नस्ल का आवारा कुत्ता मुझ पर भूंकने लगा, आपे से बाहर होकर लपकने-झपटने लगा! ऐसी कमीनी और छोटी-छोटी बातें ही तो हमेशा आदमी को पागल कर डालती हैं, मेरी रानी, उसमें डर पैदा कर देती हैं, उसके संकल्प को डगमगा देती हैं और जो कुछ पहले से मन में सोचा होता है, वह सब हवा हो जाता है। तो मैं ऐसे जीता-मरता-सा घर में दाख़िल हुआ और सो भी एक और मुसीबत का शिकार होने के लिये। मैंने ध्यान से देखा नहीं, दहलीज के पास बहुत अंधेरा था, मैंने क़दम बढ़ाया तो किसी बुढ़िया से टकरा गया। बुढ़िया बालटी से घड़ों में दूध डाल रही थी और सारा दूध बह गया। बुद्धू बुढ़िया चीख़ी और चिल्लाकर बोली – किधर मुंह उठाये चले आ रहे हो, क्या चाहिये तुम्हें? और उसने मुझे ख़ूब भला-बुरा कहा। मेरी रानी, मैं यह सब इसलिये लिख रहा हूं कि इस तरह के मामलों में मेरे साथ हमेशा ही ऐसा कुछ होता रहा है। मतलब यह कि मेरी किस्मत ही ऐसी है, हमेशा किसी न किसी चीज़ से उलझता-टकराता रहता हूं। शोर-शराबा सुनकर डायन जैसी बूढ़ी मकान-मालकिन बाहर निकल आयी। मैंने सीधे उसकी तरफ़ बढ़कर पूछा – क्या मार्कोव यहीं रहते हैं? नहीं, उसने जवाब दिया, कुछ देर खड़ी रहकर मुझे बहुत ग़ौर से देखती रही और फिर बोली – "आपको उनसे क्या काम है?" मैंने उसे बताया,

येमेल्यान इवानोविच का उल्लेख किया, और सब बताकर कहा कि कुछ काम है। बुढ़िया ने अपनी बेटी को आवाज़ दी – बेटी आई, काफ़ी उम्र की, नंगे पांव। "अपने पिता को बुला लाओ, वह ऊपर किरायेदारों के यहां हैं।" मैं भीतर दाख़िल हुआ। कमरा ख़ासा अच्छा था, दीवारों पर तस्वीरें टंगी थीं, मुख्यतः जनरलों के छविचित्र, सोफ़ा था, गोल मेज़ थी और खिड़कियों के दासों पर गुलमेंहदी के गमले रखे थे। मैं सोचने लगा कि क्या मुझे अपने आप ही भलमनसाहत से लौट नहीं जाना चाहिये? सच कहता हूं, मेरी रानी, मैंने तो भाग जाना चाहा! मैंने सोचा – अगले दिन आना ही बेहतर होगा, मौसम भी ज्यादा अच्छा होगा, मैं इन्तज़ार कर लूंगा – आज तो दूध भी बह गया है और जनरल भी बहुत नाराज़गी से मेरी ओर देखते प्रतीत हो रहे हैं... मैं दरवाज़े की तरफ़ बढ़ भी चला कि वह आ गया – बड़ा मामूली-सा आदमी, पके बाल, धूर्त्ततापूर्ण आंखें, मैला-कुचैला ड्रेसिंग गाउन पहने जिस पर पेटी की जगह रस्सी बंधी हुई थी। उसने जानना चाहा कि क्या मामला है। मैंने उसे बताया कि मामला यह है, येमेल्यान इवानोविच ने मुझे भेजा है, चालीस रूबलों की ज़रूरत है, ऐसी परिस्थिति है, किन्तु मैं अपनी बात पूरी तरह से नहीं कह पाया। उसकी नज़र से बिल्कुल साफ़ था कि मामला चौपट है। "परिस्थिति की क्या बात हो सकती है, मेरे पास पैसे नहीं हैं। आपके पास गिरवी रखने को कुछ है?" मैंने उसे स्पष्ट करना शुरू किया कि गिरवी रखने को कुछ नहीं, लेकिन येमेल्यान इवानोविच ने भेजा है, कि मुझे पैसों की बड़ी ज़रूरत है। सब कुछ सुनने के बाद उसने जवाब दिया कि येमेल्यान इवानोविच को इससे क्या लेना-देना है – मेरे पास पैसे नहीं हैं। मैंने सोचा कि शायद ऐसा ही है, मैं इसके बारे में जानता था, पहले से ही यह महसूस कर रहा था। सच कहता हूं, वारेन्का, मन यही चाहता था कि धरती फट जाये और मैं उसमें समा जाऊं। मुझे ठण्डे पसीने आ गये, पांव मन-मन के भारी हो गये और बदन में झुरझुरी महसूस हुई। मैं उसकी ओर देख रहा था, वह मेरी ओर और उसकी आंखें मानो कह रही थीं – भले आदमी, जाओ यहां से, खड़े-खड़े मुंह क्या ताक रहे हो। अगर पैसों की इतनी सख़्त ज़रूरत न होती तो मैं तो शर्म से बिल्कुल

गड़ गया होता। "किसलिये ज़रूरत है आपको पैसों की?" (ऐसा सवाल किया उसने, मेरी रानी!) मैंने कुछ कहने को मुंह खोलना चाहा ताकि योंही व्यर्थ न खड़ा रहूं। लेकिन उसने तो मेरी बात ही नहीं सुनी। बोला – रक़म नहीं है, मैं ख़ुशी से दे देता, लेकिन रक़म ही नहीं है। मैं उसके सामने गिड़गिड़ाता रहा, मिन्नत-समाजत करता रहा, कहता रहा कि मुझे तो बड़ी रक़म नहीं चाहिये, मैं उसे ठीक वक़्त पर, वक़्त से पहले ही लौटा दूंगा, ब्याज भी चाहे कितना ही क्यों न हो, मैं ब्याज समेत सारी रक़म लौटा दूंगा, भगवान की क़सम, वापस कर दूंगा। मेरी रानी, इस वक़्त मुझे आपकी याद आ रही थी, आपकी सारी मुसीबतों और ज़रूरतों की याद आ रही थी, उन पचास कोपेक का ध्यान आ रहा था जो आपने मुझे दिये थे। लेकिन उसने कहा कि सवाल सूद का नहीं, बल्कि यह है कि मेरे पास गिरवी रखने को कुछ नहीं है। उसके बिना मेरे पास पैसे नहीं हैं। भगवान की क़सम, मैं ख़ुशी से दे देता। उचक्का, भगवान का नाम भी लेता जा रहा था!

मेरी प्यारी, मुझे याद नहीं कि वहां से मैं कैसे बाहर आया, विबोर्गस्काया से होकर वोस्क्रेसेन्स्की पुल तक कैसे पहुंचा। मैं बेहद थक गया था, बुरी तरह ठिठुर गया था, ठण्ड से कांप रहा था और केवल दस बजे ही दफ़्तर में पहुंचा। मैंने चाहा कि धूल-मिट्टी झाड़ लूं, लेकिन चौकीदार स्नेगिर्योव बोला कि ऐसा करके आप ब्रश ख़राब कर देंगे जो सरकारी है। तो मेरी रानी, ये लोग मेरे साथ ऐसा बर्ताव करते हैं, मुझे उस चिथड़े से भी गया-बीता मानते हैं जिससे पांव साफ़ किये जाते हैं। जो चीज़ मुझे मारे डाल रही है, वारेन्का, वह पैसे नहीं, हर दिन की ज़िन्दगी की ये चिन्तायें, ये कानाफूसियां, ये व्यंग्यपूर्ण मुस्कानें, ये मज़ाक़ हैं। बड़े हुज़ूर, महामहिम को भी मेरे बारे में ऐसी बातों का पता चल सकता है। तब क्या होगा? ओह, मेरी प्यारी, बहुत बुरे दिन आ गये हैं अब मेरे! आज मैंने आपके सभी पत्र फिर से पढ़े। मन बहुत उदास हो गया उन्हें पढ़कर, मेरी रानी! विदा, मेरी प्यारी! भगवान आपकी रक्षा करे!

म० देवुश्किन।

पुनश्च – वारेन्का, मैं यह सब मज़ाक़िया अन्दाज़ में लिखना चाहता था, लेकिन ऐसा अन्दाज़ मेरे बस की बात नहीं। मैं तो आपका मन ख़ुश करना चाहता था। मैं आपके यहां आऊंगा, अवश्य आऊंगा, मेरी रानी, कल आऊंगा।

११ अगस्त

वरवारा अलेक्सेयेव्ना! मेरी गुड़िया, मेरी रानी! मैं कहीं का नहीं रहा, हम दोनों कहीं के नहीं रहे, दोनों बिल्कुल तबाह हो गये। मेरी ख्याति, मेरी प्रतिष्ठा – सब कुछ ख़त्म हो गया। मैं तबाह हो गया, आप तबाह हो गयीं, मेरे साथ आप भी पूरी तरह से बरबाद हो गयीं! मैं ही, मैं ही ज़िम्मेदार हूं आपकी बरबादी का! मेरी रानी, मेरा अपमान किया जाता है, तिरस्कार किया जाता है, मेरा मज़ाक़ उड़ाया जाता है। मकान-मालकिन तो मुझे खरी-खोटी सुनाने लगी है। आज वह मुझ पर चीख़ती-चिल्लाती रही, ख़ूब झिड़कती रही, मेरे साथ कूड़े-करकट से भी बुरा व्यवहार करती रही। शाम को राताज़्यायेव आपके नाम लिखा हुआ पत्र, जो मेरी जेब से अचानक गिर गया था, सबको ऊंचे-ऊंचे पढ़कर सुनाता रहा। ओह, मेरी रानी, कितना मज़ाक़ उड़ाया उन लोगों ने! ये विश्वासघाती, हमारा नाम ले-लेकर ठहाके लगाते रहे, ख़ूब हंसते रहे! मैंने राताज़्यायेव के कमरे में जाकर विश्वासघात करने के लिये उसे भला-बुरा कहा! लेकिन राताज़्यायेव ने जवाब दिया कि मैं ख़ुद विश्वासघाती हूं, कि मैं सभी तरह की रहस्यमयी बातें, छल-कपट करता रहता हूं। उसने कहा कि आपने हम से यह सब छिपाया, इसलिये आप लवलेस हैं। अब सभी मुझे लवलेस कहकर पुकारते हैं, मेरा कोई दूसरा नाम ही नहीं! सुनिये, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मेरी बात सुनिये कि अब उन्हें सब कुछ मालूम है, वे सब कुछ जानते हैं, आपके बारे में सब कुछ, सभी कुछ मालूम है उनको! और तो और, फ़ाल्दोनी भी उनके साथ हो गया है, उनका साथ देता है। मैंने आज उसे कुछ ख़रीद कर लाने के लिये बाज़ार जाने को कहा। लेकिन वह ऐसा करने को तैयार नहीं हुआ। बोला – फ़ुरसत नहीं है! "लेकिन यह तो तुम्हारा काम है,"

मैंने कहा। "नहीं, यह मेरा काम नहीं है, क्योंकि आप मेरी मालकिन को किराया नहीं देते हैं, इसलिये कोई ज़िम्मेदारी नहीं है मेरी।" ऐसा गंवार, ऐसा मूढ़ इस तरह मेरा अपमान करे, यह मुझ से बर्दाश्त नहीं हुआ और मैंने उसे मूर्ख कह दिया। उसने जवाब दिया – "मुझे मूर्ख कहनेवाला खुद मूर्ख है"। मैंने सोचा कि वह नशे में धुत्त है और इसीलिये उसने ऐसी गुस्ताख़ी की है। चुनांचे मैंने उससे कहा – "तुम, गंवार कहीं के, तुम नशे में हो!" उसने मुझे जवाब दिया – "क्या आपने पिलाई है? खुद आपके पास तो पीने के लिये फूटी कौड़ी नहीं है। दस कोपेक के लिये तो किसी के सामने हाथ फैलाते हैं।" इसके बाद इतना और जोड़ दिया – "इस पर इज़्ज़त-आबरूवाला होने का दम भरते हैं!" तो मामला यहां तक जा पहुंचा है, मेरी रानी! अब तो ज़िन्दा रहते हुए शर्म आती है, मेरी प्यारी! जैसे कि मैं समाज-बहिष्कृत होऊं, पासपोर्ट से वंचित कोई आवारा होऊं। मुसीबत ही मुसीबत है! मैं कहीं का नहीं रहा, बिल्कुल कहीं का नहीं रहा, पूरी तरह बरबाद हो गया।

म० द०

१३ अगस्त

प्यारे मकार अलेक्सेयेविच! हम पर मुसीबतें ही मुसीबतें आती चली जा रही हैं। मैं खुद यह नहीं जानती कि क्या करूं! अब आपका क्या होगा। आप मुझसे तो कोई ख़ास आशा नहीं कर सकते। आज इस्तरी से मेरा बायां हाथ जल गया। वह अचानक फिसल गयी, मेरे हाथ पर चोट भी लग गयी, वह जल भी गया। अब मैं काम करने में असमर्थ हूं और फ़ेदोरा पिछले तीन दिन से बीमार है। परेशानी की कोई हद नहीं। चांदी के सिक्कों में तीस कोपेक भेज रही हूं। हमारी बस, यही आखिरी पूंजी है। भगवान जानता है कि मैं आपकी ज़रूरत की इन घड़ियों में आपकी कितनी अधिक मदद करना चाहती हूं। रोने को मन होता है! विदा, मेरे दोस्त! अगर आप आज हमारे यहां आयेंगे तो मुझे सचमुच बड़ी खुशी होगी।

व० द०

१४ अगस्त

मकार अलेक्सेयेविच, यह आपको हो क्या गया है? निश्चय ही अब आपको भगवान का कोई डर-भय नहीं रहा! आप मुझे पागल कर डालेंगे। आपको शर्म नहीं आती? आप अपने को बरबाद कर रहे हैं। आप ज़रा अपनी नेकनामी का ही ख़याल करें! आप ईमानदार, नेक और इज़्ज़त-आबरूवाले आदमी हैं। अगर सभी को आपकी ऐसी हरकतों के बारे में पता चल गया तो आपको शर्म से डूब मरना होगा! या फिर आपको अपने पके बालों पर भी रहम नहीं आता? भगवान से तो डरिये! फ़ेदोरा का कहना है कि वह अब आपकी मदद नहीं करेगी। मैं भी आपको पैसे नहीं दिया करूंगी। किस हद तक आपने मुझे पहुंचा दिया है, मकार अलेक्सेयेविच! आप शायद ऐसा ही सोचते हैं कि आपकी ऐसी करतूतों से मुझे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। आप तो अभी यह तक नहीं जानते कि आपके कारण मुझे क्या कुछ सहना पड़ता है! मेरे लिये तो अपने ज़ीने से आना-जाना मुश्किल हो जाता है – सबकी नज़रें मुझ पर जम जाती हैं, उंगलियों से इशारे करते हैं और बड़ी भद्दी-भद्दी बातें कहते हैं। मुंह पर ही कह देते हैं कि मैं एक पियक्कड़ के फेर में पड़ी हुई हूं। ऐसी बातें सुनकर क्या दशा होती होगी मेरी! जब आपको नशे की हालत में उठाकर लाया जाता है तो सभी किरायेदार हिक़ारत से आपकी तरफ़ इशारा करते हुए कहते हैं – उसी कर्मचारी को उठाकर लाये हैं। मैं तो शर्म से पानी-पानी हो जाती हूं। क़सम खाकर कहती हूं कि मैं यहां से किसी दूसरी जगह चली जाऊंगी। कहीं जाकर नौकरानी या धोबिन का काम कर लूंगी, मगर यहां नहीं रहूंगी। मैंने आपको लिखा था कि हमारे यहां आइयेगा, लेकिन आप नहीं आये। इसका मतलब यह है कि मेरे आंसू और मेरे अनुरोध आपके लिये कोई मानी नहीं रखते, मकार अलेक्सेयेविच! आपको पैसे कहां से मिले? भगवान के लिये अपने को सम्भालिये! वरना बरबाद हो जायेंगे, व्यर्थ ही बरबाद हो जायेंगे! कितनी शर्म की बात है! मकान-मालकिन ने कल आपको घर में नहीं घुसने दिया और आपने ड्योढ़ी में ही रात बितायी, मुझे सब मालूम है। काश, आप यह जान सकते कि मुझे जब इस

बात की जानकारी मिली तो मेरे दिल पर क्या गुज़री! हमारे यहां आइयेगा, यहां आपका मन बहलेगा, हम मिलकर कुछ पढ़ेंगे, पुरानी बातों को याद करेंगे। फ़ेदोरा अपनी तीर्थ-यात्राओं के बारे में सुनायेगी। मेरे प्यारे, मेरी ख़ातिर ही ख़ुद को और मुझे भी तबाह नहीं कीजियेगा। मैं तो केवल आपके लिये ही जी रही हूं, आपके कारण ही यहां रह रही हूं। और अब आपका यह हाल है! आप भले आदमी बने रहिये, मुसीबतों में हिम्मत नहीं हारिये। याद रखिये कि ग़रीब होना कोई पाप नहीं। फिर हताशा की बात भी क्या है – यह सब तो वक़्ती चीज़ है! भगवान ने चाहा तो सब ठीक हो जायेगा, सिर्फ़ आपको धीरज से काम लेना चाहिये। आपको बीस कोपेक भेज रही हूं, अपने लिये तम्बाकू या कुछ और, जो मन चाहे, ख़रीद लीजियेगा। किन्तु भगवान के लिये इन्हें बुरी चीज़ पर ख़र्च नहीं कीजियेगा। हमारे यहां आइये, अवश्य ही आइये। आपको शायद पहले की तरह शर्म आयेगी, लेकिन शर्माइयेगा नहीं। ऐसी शर्म का कोई मतलब नहीं। कहीं ज़्यादा अच्छा होगा कि आप दिल से पश्चात्ताप करें! भगवान का भरोसा रखें। वह बिगड़ी को बना देगा।

व० द०

१६ अगस्त

मेरी प्यारी गुड़िया वरवारा अलेक्सेयेविना,

मुझे शर्म आ रही है, मेरी रानी, मैं बहुत ही शर्मिन्दा हूं, वरवारा अलेक्सेयेव्ना। वैसे, मेरी प्रिया, यह तो बताइये कि इसमें ऐसी क्या ख़ास बात है? क्यों न आदमी अपना मन बहलाये? उस वक़्त मैं अपने जूते के तले के बारे में नहीं सोचता हूं, क्योंकि जूते का तला बकवास चीज़ है और हमेशा ऐसा ही मामूली, घटिया और गन्दा तला बना रहेगा। और जूते भी निरी बकवास हैं। यूनानी विद्वान लोग नंगे पांव घूमते थे, तो हम ऐसी घटिया-सी चीज़ को इतना महत्त्व क्यों देते हैं? इन्हीं को लेकर क्यों लोग मेरा दिल दुखाते हैं, मेरा अपमान करते हैं? ओह, मेरी रानी, आपने भी लिखने के लिये क्या बात चुनी है! और फ़ेदोरा से कह

दीजिये कि वह बेहूदा, परेशानी पैदा करनेवाली, प्रचंड और इस सब के अलावा मूर्ख, बेहद मूर्ख औरत है! जहां तक मेरे सफ़ेद बालों का सवाल है, तो इस मामले में भी आप भूल कर रही हैं, मेरी रानी। कारण कि मैं इतना बूढ़ा नहीं हूं जितना आप समझती हैं। येमेल्या आपको प्रणाम कह रहा है। आपने लिखा है कि आपके दिल को बहुत दुख हुआ और आप रोयीं। मैं भी आपको यही लिखता हूं कि मेरे दिल को भी बहुत दुख हुआ और मैं भी रोया। अन्त में मैं यही कामना करता हूं कि आप सदा स्वस्थ और सुखी रहें। जहां तक मेरा प्रश्न है तो मैं स्वस्थ और सुखी हूं और सदा आपका सच्चा मित्र बना रहूंगा, मेरे नन्हे फ़रिश्ते।

मकार देवुश्किन।

२१ अगस्त

मेरी रानी और प्रिय मित्र, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मैं यह अनुभव करता हूं कि अपराधी हूं, कि आपके सम्मुख दोषी हूं, किन्तु मेरा ऐसा अनुभव करने से लाभ तो कुछ भी नहीं, मेरी रानी। आप चाहे कुछ भी कहें, अपनी ऐसी करतूत के बारे में मैं सब कुछ अनुभव तो पहले भी इसी तरह से करता था, लेकिन इसके बावजूद मैं अपना दिल मज़बूत बनाये नहीं रह सका, अपराध की चेतना रखते हुए भी मैंने ऐसी भूल की है। मेरी रानी, मैं न तो क्रूर हूं और न पत्थर दिल। मेरी गुड़िया, आपके कोमल दिल के टुकड़े-टुकड़े करने के लिये यह ज़रूरी है कि कोई ख़ून का प्यासा बाघ हो। लेकिन मेरा दिल मेमने का है और, जैसा कि आप जानती हैं, ख़ून की प्यास जैसी चीज़ मुझ में नहीं है। इसलिये, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, अपनी ऐसी करतूत के लिये मैं पूरी तरह दोषी नहीं हूं, ठीक इसी तरह से मेरे दिल और मेरी भावनाओं का भी कोई दोष नहीं। तो यह कुछ ऐसा ही गड़बड़ मामला है, मेरी रानी! आपने चांदी के सिक्कों के रूप में तीस कोपेक भेजे और बीस कोपेक उसके बाद। आपके, बेचारी अनाथ लड़की के इन पैसों को देखते हुए मेरे दिल की क्या हालत हुई, बता नहीं सकता। आपका हाथ जल गया, जल्द ही भूखों मरने की नौबत आयेगी और मुझे लिखती

हैं कि मैं अपने लिये तम्बाकू खरीद लूं। ऐसी हालत में मैं क्या करूं? आत्मा की धिक्कार पर कान न देते हुए एक लुटेरे की तरह, आप यतीम को ऐसे लूटता जाऊं! बस, इसी ख्याल से मैं बुरी तरह हताश हो उठा, मेरी रानी। शुरू में तो मैंने अनचाहे ही यह अनुभव किया कि मैं बिल्कुल गया-बीता हूं, अपने जूते के तले से बदतर हूं, अपने को इससे कुछ बेहतर समझना मुझे उचित नहीं प्रतीत हुआ। इसके विपरीत मैंने अपने को कुछ हद तक अशिष्ट और नालायक़ अनुभव किया। जैसे ही मैं अपनी नज़र में गिरा, जैसे ही मुझे अपने में अच्छे गुणों और गरिमा के अभाव की चेतना हुई, वैसे ही सब कुछ चौपट हो गया, मेरा पतन हो गया। यह तो क़िस्मत का खेल है और मेरा कोई दोष नहीं। मैं तो तनिक मन बहलाने को बाहर निकला था। लेकिन वहां एक के बाद एक अटपटी बात होती चली गयी – प्रकृति बड़ी उदास-उदास थी, ठण्ड थी, बारिश हो रही थी और इसी वक़्त येमेल्या भी मिल गया। उसके पास जो कुछ भी था, वारेन्का, वह सभी गिरवी रख चुका है और जब मुझ से उसकी भेंट हुई तो दो दिन से अनाज का एक दाना भी उसके मुंह में नहीं गया था। उस वक़्त वह जो कुछ गिरवी रखना चाहता था, उसे किसी भी तरह गिरवी नहीं रखा जा सकता, क्योंकि ऐसा करना सम्भव नहीं। तो, वारेन्का, मैं अपनी इच्छा से कहीं ज़्यादा तो इन्सानियत के लिये, हमदर्दी की वजह से इस फेर में पड़ गया। तो ऐसे यह पाप हुआ, मेरी रानी! ओह, कैसे हम दोनों मिलकर रोये! आपको याद किया। वह बहुत भला, बहुत दयालु और बड़ा संवेदनशील व्यक्ति है। मेरी रानी, मैं खुद यह सब कुछ अनुभव करता हूं। मेरे साथ इसीलिये तो ऐसी घटनायें हो जाती हैं कि मैं यह सब कुछ बहुत अधिक अनुभव करता हूं। मेरी गुड़िया, मैं जानता हूं कि मैं आपका कितना अधिक आभारी हूं! आपको जानने पर, सबसे पहले तो मैं खुद को अधिक अच्छी तरह जानने और आपको प्यार करने लगा। इसके पहले, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं एकाकी था, मानो सोया हुआ था और इस दुनिया में जी ही नहीं रहा था। वे, मेरे दुश्मन, कहते थे कि मेरे शरीर का तो ढांचा भी अटपटा है, वे मुझ से घृणा करते थे और मैं भी अपने से घृणा करने लगा। वे कहते थे कि मैं मूर्ख हूं और मैं

खुद भी अपने को मूर्ख मानने लगा। लेकिन जैसे ही आप मेरे जीवन में आईं, वैसे ही मेरे अन्धेरे जीवन में रोशनी आ गयी, मेरा दिल और मेरी आत्मा जगमगा उठी, मुझे मानसिक चैन मिला और यह जान गया कि मैं भी दूसरों से कुछ बुरा नहीं हूं। यह सही है कि मुझ में कोई चमक-दमक नहीं है, विशेष आकर्षण और अनूठा अन्दाज़ भी नहीं है, फिर भी मैं इन्सान हूं, दिल-दिमाग़ से इन्सान हूं। किन्तु अब मैंने यह अनुभव किया है कि क़िस्मत का मारा हूं, उसके द्वारा उपेक्षित और ठुकराया हुआ हूं, खुद अपनी गरिमा को मैंने नीचे गिरा दिया है और अपने दुर्भाग्यों से हताश होकर हिम्मत हार बैठा हूं। अब, जब आपको सब कुछ मालूम हो गया है, मेरी रानी, तो मैं डबडबाई आंखों से आप से यह अनुरोध करता हूं कि इस मामले में और अधिक जिज्ञासा नहीं दिखायें, क्योंकि मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े हुआ जाता है, मन बहुत दुखी और भारी है।

आपके प्रति अपना आदर भाव प्रकट करता हूं, सदैव आपका सच्चा मित्र बना रहूंगा।

मकार देवुश्किन।

३ सितम्बर

मैं अपना पिछला पत्र पूरा नहीं कर पाई थी, मकार अलेक्सेयेविच, क्योंकि मेरे लिये लिखना कठिन था। मेरे जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते हैं जब मुझे अकेले होना, अकेले ही उदासी में डूबना, व्यथित होना, किसी के साथ भी अपने दुख-दर्द को न बांटना अच्छा लगता है। मेरे जीवन में ऐसे क्षण अधिकाधिक अक्सर आने लगे हैं। मेरी स्मृतियों में मेरे लिये अस्पष्ट कुछ ऐसा है जो इतने ज़ोर से, ऐसी शक्ति से मुझे अपनी तरफ़ खींचता है कि कई-कई घण्टों तक मुझे अपने इर्द-गिर्द की दुनिया की सुध ही नहीं रहती, वर्त्तमान के बारे में सब कुछ, सभी कुछ भूल जाती हूं। मेरे वर्त्तमान जीवन में कोई भी ऐसी मधुर, बोझल या उदासीभरी अनुभूति नहीं है जो मुझे इसी तरह की अतीत की अनुभूति, ख़ास तौर पर मेरे बचपन, मेरे सुनहरे बचपन की याद न दिला दे!

किन्तु ऐसे क्षणों के बाद मेरा मन हमेशा बहुत भारी हो जाता है। मैं मानो क्षीण हो जाती हूं, मेरे सपनों के ताने-बाने मुझे थका देते हैं और मेरा स्वास्थ्य तो इस सबके बिना ही बिगड़ता चला जा रहा है।

किन्तु आज की सुबह ताज़गी लिये हुए बड़ी मधुर और प्यारी है, जैसी कि यहां पतझर में बहुत कम होती हैं। इसने मुझे सजीव बना दिया और मैंने सहर्ष इसका स्वागत किया। तो हमारे यहां पतझर आ गयी है! गांव में मैं कितना प्यार करती थी पतझर को! मैं बच्ची थी, लेकिन बहुत अनुभूतिशील थी। सुबह की तुलना में मुझे पतझर की शाम कहीं अधिक प्यारी लगती थी। मुझे याद है कि हमारे घर से कुछ ही क़दम की दूरी पर पहाड़ी के दामन में एक झील थी। यह झील – जिसे मैं मानो इस वक़्त भी अपनी आंखों के सामने देख रही हूं – बहुत चौड़ी, बिल्लौर की तरह चमकती और निर्मल थी। सन्ध्या अगर शान्त होती तो झील भी शान्त होती। तटवर्ती वृक्षों के पत्ते न सरसराते, पानी दर्पण की तरह निर्मल-निश्चल नज़र आता। हवा में ताज़गी होती, झुरझुरी आती! घास पर शबनम की बूंदें गिरतीं, तट पर बने झोंपड़ों में मद्धिम रोशनियां जल उठतीं और पशु लौटते दिखाई देते। ऐसे में ही मैं चुपके से घर से खिसक जाती, ताकि अपनी इस प्यारी झील को देखूं और बस, देखती ही रह जाती। पानी के बिल्कुल निकट ही मछुओं का अलाव जलता होता और पानी में उसका प्रकाश दूर-दूर तक झलकता। आकाश बड़ा ठण्डा, नीला-नीला होता और उसके छोरों पर लाल-लाल, लपटों जैसी धारियां-सी होतीं जो धीरे-धीरे हल्की-फीकी पड़ती जातीं। नया चांद निकल आता, हवा ऐसे दम साधे होती कि अगर डरकर कोई परिन्दा पंख फड़फड़ाता, हल्का-सा झोंका आने पर अगर कोई सरकंडा हिल उठता या पानी में कोई मछली छपछपाती – तो सभी कुछ सुनाई पड़ता। नीले पानी पर सफ़ेद भाप उठने लगती, हल्की-हल्की, पारदर्शी। दूरी पर अन्धेरा छाने लगता, सब कुछ कुहासे में डूब जाता और निकट की चीज़ें – नाव, तट, द्वीप, तट के निकट पड़ा भूला-बिसरा और पानी पर तनिक हिलता-डुलता कोई पीपा, सरकंडों में उलझी हुई पीले पत्तोंवाली सरपत की कोई टहनी,

देर से नीड़ की ओर लौटनेवाला कोई जल-पक्षी जो कभी ठण्डे पानी में गोता लगाता, कभी बाहर निकलकर पंख फड़फड़ाता और फिर कुहासे में खो जाता – इतनी स्पष्ट नज़र आतीं मानो उन्हें छैनी से तराशकर ऐसी साफ़ शक्ल दी गयी हो। मैं टकटकी बांधकर यह सब देखती और कान लगाकर सब सुनती रहती – मुझ पर जादू-सा हो जाता! मैं तब बच्ची ही थी, बालिका ही थी!..

बहुत प्यार करती थी मैं पतझर को – विदा लेती हुई पतझर को, जब अनाज समेटा जा चुका होता था, खेतीबारी के सभी काम समाप्त हो जाते थे, जब किसानों के झोपड़ों में रास-रंग की महफ़िलें जमने लगती थीं, जब सभी जाड़े का इन्तज़ार करने लगते थे। तब सब कुछ उदास-उदास-सा हो जाता था, आकाश मेघाछन्न हो जाता था, नंगे-बुच्चे जंगल के छोरों पर पीले पत्तों के ढेर लग जाते थे और जंगल नीला-नीला, काला-काला हो जाता था – ख़ास तौर पर शाम को जब नम कुहासा छा जाता था और कुहासे में से भयंकर तथा भयावह दैत्यों की तरह वृक्ष झलक दिखाते थे। कभी-कभी सैर-सपाटा करते देर हो जाती, मैं दूसरों से पिछड़ जाती, जल्दी-जल्दी क़दम उठाती हुई घर को जाती – डर के मारे मेरा बुरा हाल होता! मैं पत्ते की तरह कांपती होती, मन में रह-रहकर यही ख़्याल आता – उस कोटर में से अभी कोई न कोई भयानक प्राणी निकल आयेगा। इसी बीच जंगल में तेज़ हवा चलने लगती, चीख़ती, शोर मचाती, कराहती, बेजान डालों से ढेरों पत्ते उड़ा ले चलती, उन्हें घुमाती, चक्कर दिलाती और उनके पीछे-पीछे पक्षियों का लम्बा, बहुत बड़ा और बेहद शोर मचाता हुआ झुण्ड उड़ता जो सारे आकाश पर छा जाता, उसे काला बना देता। बेहद डर लगता और इसी समय मानो किसी की आवाज़ सुनाई देती, मानो कोई फुसफुसाकर कहता – "भाग, भाग बच्ची, देर नहीं कर, यहां सब कुछ अभी और भी ज़्यादा डरावना हो जायेगा। भाग, बिटिया भाग!" मेरा कलेजा थर-थर कांपने लगता और मैं ऐसे तेज़ी से भागती कि दम उखड़ने लगता। मैं हांफते-हांफते घर पहुंच जाती। घर पर शोर-गुल और हंसी-ख़ुशी का वातावरण होता। हम सभी बच्चों को मटर की फलियां या पोस्ते के डोंड़े छीलने का काम दे दिया जाता। चूल्हे में गीली लकड़ी चटकती।

मां हमारे सुखद काम को खुश होते हुए देखती। हमारी बूढ़ी आया उल्याना पुराने वक़्तों या जादूगरों और भूतों-प्रेतों के भयानक क़िस्से-कहानियां सुनाती। हम बच्चे डर के मारे एक दूसरे के साथ ज़्यादा से ज़्यादा सट जाते, लेकिन हम सभी के होंठों पर मुस्कान होती। अचानक हम सभी एकदम ख़ामोश हो जाते... कोई आवाज़, आहट-सी होती मानो कोई दरवाज़ा खटखटा रहा हो! लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं होता था – यह तो बूढ़ी फ़ेलोव्ना के चरखे की आवाज़ होती थी। हम सभी कैसे ठठाकर हंस पड़ते थे! डर की वजह से रात को नींद नहीं आती थी – बड़े भयानक-भयानक सपने आते थे। आंख खुल जाती तो हिलने-डुलने की भी हिम्मत न होती और पौ फटने तक मैं बिस्तर में ही दुबकी हुई कांपती रहती। सुबह उठती तो फूल की तरह खिली हुई। खिड़की से बाहर झांकती तो पाती कि मैदान को पाले ने जकड़ लिया है, नंगी टहनियों पर पतझर का पतला-पतला पाला जम गया है और झील पर पत्ते की तरह पतली बर्फ़ की परत बिछ गयी है। झील से सफ़ेद भाप उठती होती और पक्षी खुशी से चहकते होते। सूरज की प्रखर किरणें खूब चमकती होतीं और वे शीशे की तरह पतली बर्फ़ की परत को तोड़ डालतीं। उल्लासभरा, सुनहरा और चमकता हुआ वातावरण होता! चूल्हे में फिर से लकड़ी चट-चट करती और हम सब समोवार के गिर्द बैठ जाते। रात भर ठण्ड से ठिठुरा हुआ हमारा काला कुत्ता पोल्कान खिड़की में से झांकता और प्यार से अपनी पूंछ हिलाता। चुस्त घोड़े पर सवार कोई देहाती लकड़ी लाने के लिये जंगल को जाता हुआ हमारी खिड़की के पास से गुज़रता। सभी बेहद खुश, बहुत ही हर्ष-उल्लास में होते थे!.. ओह, कैसा सुखद-सुनहरा बचपन था मेरा!..

और लीजिये, अपनी स्मृतियों में खोकर मैं अब एक बच्ची की तरह रो पड़ी हूं। बहुत अच्छी तरह, बड़ी स्पष्टता से मुझे सब कुछ याद हो आया, मेरा अतीत मेरे सामने बिल्कुल सजीव हो उठा है और वर्त्तमान बहुत उदास-उदास और अन्धकारमय है!.. क्या अन्त होगा, क्या अन्त होगा इस सब का? जानते हैं, मुझे यक़ीन है, मुझे पक्का विश्वास है कि इस पतझर में मैं मर जाऊंगी। मैं बहुत, बेहद बीमार हूं। मैं अक्सर यह सोचती हूं कि मर जाऊंगी,

लेकिन फिर भी मैं ऐसे मरना नहीं चाहती, यहां की धरती में सोना नहीं चाहती। हो सकता है कि मैं वसन्त के दिनों की तरह फिर से चारपाई थाम लूं और मैं तो अभी तक स्वस्थ नहीं हो पायी हूं। अब भी मेरा मन बहुत दुखी है। फ़ेदोरा आज दिन भर के लिये कहीं चली गयी है और मैं अकेली बैठी हूं। पिछले कुछ समय से मुझे अकेली रहते हुए डर लगता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता रहता है कि कोई अन्य व्यक्ति मेरे साथ कमरे में उपस्थित है, कोई मेरे साथ बातचीत करता है। ऐसा ख़ास तौर पर तब होता है जब मैं कुछ सोचने लगती हूं, ख्यालों में डूब जाती हूं और फिर अचानक चौंक उठती हूं। इस वक़्त मुझे बहुत डर लगने लगता है। इसीलिये मैंने आपको इतना लम्बा पत्र लिख डाला। मैं पत्र लिखती रहती हूं तो मुझे डर नहीं लगता। तो विदा, पत्र समाप्त कर रही हूं, क्योंकि न तो काग़ज़ है और न वक़्त ही। पोशाक और टोपी के लिये मुझे जो पैसे मिले थे, उनमें से चांदी का सिर्फ़ एक रूबल बाक़ी रह गया है। आपने मकान-मालकिन को चांदी के दो रूबल दे दिये, यह बहुत अच्छा किया। अब कुछ समय तक तो वह चुप रहेगी।

अपनी पोशाक को किसी तरह कुछ ठीक-ठाक कर लीजिये। विदा। मैं बेहद थक गयी हूं। मालूम नहीं कि मैं ऐसी कमज़ोर क्यों हो गयी हूं। ज़रा-सा काम करने पर भी मैं थक जाती हूं। अगर काम मिल भी गया तो मैं उसे करूंगी कैसे? यही चिन्ता तो मुझे खाये जाती है।

व० द०

५ सितम्बर

मेरी मैना, वारेन्का,

मेरे नन्हे फ़रिश्ते, आज मुझे बहुत-से अनुभव हुए। सबसे पहले तो यह कि दिन भर मेरे सिर में दर्द होता रहा। कुछ ताज़ादम होने के लिये मैं फ़ोन्तान्का की तरफ़ सैर करने चला गया। हवा में नमी थी, अन्धेरा छा गया था। आजकल तो शाम के पांच बजते ही अन्धेरा होने लगता है। बारिश नहीं थी, लेकिन धुंध ज़रूर

थी जो बारिश से भी बुरी थी। आकाश में ख़ूब बादल छाये थे। तटबन्ध पर लोगों का कुछ अन्त नहीं था और सभी मानो जान-बूझकर ग़मगीन और उदास-सी सूरतें बनाये हुए थे। वहां नशे में धुत्त पियक्कड़ थे, घुटनों तक के बूट पहने, नंगे सिर और चपटी नाकोंवाली गंवार औरतें थीं, कारीगर और गाड़ीवान थे, किसी ज़रूरत से बाहर आये हुए किरानी भी थे, छोकरे, धारीदार लबादा पहने किसी मिस्तरी का दुबला-पतला शागिर्द, जिसके मुरझाये हुए चेहरे पर मशीनी तेल के काले धब्बे लगे थे और जो हाथ में ताला लिये हुए था, बहुत लम्बे क़द का सेना-निवृत्त सिपाही – तो इस तरह के लोग थे वहां। शायद ऐसा ही वक़्त था कि दूसरे ढंग के लोग वहां हो ही नहीं सकते थे। जहाज़रानी के लायक़ फ़ोन्तान्का नहर! वहां बजरों की ऐसी भरमार थी कि वे कहां समाये हुए हैं, यह समझ पाना कठिन था। पुलों पर गन्दी-मन्दी और भीगी हुई औरतें पानी से तर मीठी रोटियां और सड़े हुए सेब बेच रही थीं। फ़ोन्तान्का के किनारे सैर करने में कुछ मज़ा नहीं! पैरों के नीचे भीगा हुआ ग्रेनाइट, अग़ल-बग़ल ऊंचे-ऊंचे, धुएं से काले हुए मकान, पैरों के नीचे कुहासा, सिर के ऊपर भी कुहासा। ऐसी उदास, अंधेरे में ऐसी लिपटी-लिपटी सी थी आज की शाम।

जब मैं गोरोख़ोवाया सड़क की ओर मुड़ा तो बिल्कुल अंधेरा हो गया था और गैस-लैम्प जलाये जाने लगे थे। बहुत अरसे से मैं इस सड़क पर नहीं आया था, मौक़ा नहीं बना था। बहुत भीड़-भड़क्का रहता है इस सड़क पर! छोटी-बड़ी कितनी बढ़िया दुकानें हैं यहां; सभी कुछ चमकता-दमकता, लौ देता है – तरह-तरह के कपड़े, शीशों के नीचे फूल, रिबन लगी तरह-तरह की टोपियां। ऐसा ख़्याल आ सकता है कि यह सब यों ही महज़ सजावट के लिये हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। ऐसे लोग भी हैं जो यह सब ख़रीदकर अपनी बीवियों को भेंट करते हैं। अमीरी ठाठवाली सड़क है यह! इस गोरोख़ोवाया सड़क पर नानबाई की दुकानोंवाले बहुत-से जर्मन भी रहते हैं। वे भी ख़ासे अमीर लोग होंगे। कितनी बग्घियां यहां से हर मिनट गुज़रती रहती हैं। कैसे सड़क इन सब का बोझ बर्दाश्त करती है! ऐसी बढ़िया बग्घियां होती हैं कि क्या कहने –

दर्पण की तरह चमकते शीशे, भीतर मख़मल और रेशम की छटा, वर्दियां पहने और तलवारें लिये हुए कुलीनों के ख़िदमतगार। मैं सभी बग्घियों में झांकता था, सभी में सजी-धजी महिलायें बैठी थीं, शायद प्रिंसेस और काउंटेस। निश्चय ही यह ऐसा समय था जब ये लोग बॉल-नृत्य या किसी महफ़िल में पहुंचने की उतावली में होते हैं। किसी प्रिंसेस या बड़े घर की किसी महिला को निकट से देखना बड़ा दिलचस्प, बहुत ही सुखद होता होगा। मुझे कभी ऐसा मौक़ा नहीं मिला। आज की तरह योंही बग्घी में झांक लेने से तो ख़ास बात नहीं बनती। यहां मुझे आपकी भी याद आई। ओह मेरी रानी, मेरी प्यारी, जैसे ही आपकी याद आई, दिल के टुकड़े-टुकड़े होने लगे! प्यारी वारेन्का, आप ऐसी क़िस्मत की मारी क्यों हैं? मेरे नन्हे फ़रिश्ते! आप उन सब से किस बात में उन्नीस हैं? आप इतनी भली हैं, सुन्दर हैं, पढ़ी-लिखी हैं। किस-लिये आपकी क़िस्मत इतनी बुरी है? भला ऐसा क्यों होता है कि अच्छा आदमी तो दुख-मुसीबतें झेलता रहे और दूसरे का भाग्य अपने आप ही मुस्कराता रहे? मैं जानता हूं, जानता हूं, मेरी प्यारी, कि इस तरह के विचार मन में लाना ठीक नहीं, कि मेरा सोचने का यह ढंग सही नहीं है, फिर भी अगर सच्ची बात कही जाये तो यह कहां का न्याय है कि कोई तो मां की कोख से ही तक़दीर का सिकन्दर बनकर इस दुनिया में आये और दूसरा यतीम-ख़ाने के टुकड़ों पर पलकर बड़ा हो? ऐसा भी तो होता है कि क़िस्से-कहानियों के किसी बुद्धू इवान का ही भाग्य-सितारा चमकता होता है। उसे बाप-दादों की कमाई की थैलियां मिल जाती हैं, उससे कहा जाता है कि तुम खाओ-पिओ और मौज करो, जबकि दूसरा होंठ चाटता ही रह जाता है, उसे बताया जाता है कि इससे अधिक तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा, मेरे भाई, तुम्हारे भाग्य में बस, यही कुछ है। ऐसा सोचना पाप है, मेरी रानी, बेशक पाप है, लेकिन यह पाप बरबस आत्मा में आ घुसता है। मेरी प्यारी, मेरी गुड़िया, आप भी ऐसी ही बढ़िया बग्घी में बैठकर जातीं, किसी मामूली आदमी की नहीं, जनरल की दृष्टि आपको प्यार से निहारती, गाढ़े का फटा-पुराना फ़ॉक नहीं पहनतीं, रेशम और सोने से लदी रहतीं। इस समय की भांति दुबली-पतली न होतीं,

बल्कि बड़ी प्यारी, खिली-खिली, गालों पर गुलाब लिये और गदरायी-गदरायी गुड़िया-सी होतीं। मैं तो तब सड़क से जगमगाती हुई आपकी खिड़की में झांककर आपकी परछाईं की झलक पाकर ही निहाल हो जाता। इस ख़्याल से ही, मेरी चिड़िया, कि आप वहां सुखी और ख़ूब मज़े में हैं, मेरा दिल बाग़-बाग़ हो उठता। लेकिन अब क्या हालत है! इतना ही नहीं कि ज़ालिम लोगों ने आपको बरबाद कर डाला, कोई कमीना, कोई गुस्ताख़ पियक्कड़ आपका अपमान कर सकता है। वह इसलिये कि वह बढ़िया फ़्रॉक-कोट पहने है, वह बदतमीज़ सोने की कमानीवाले चश्मे में से आपको देखता है, उसे हर बात की छूट है और उसकी ऊट-पटांग बातों को भी नम्रता से सुनना पड़ता है! ऐसा ही है न! भला ऐसा क्यों है? इसलिये कि आप यतीम हैं, इसलिये कि आपकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं, इसलिये कि आपका कोई ऐसा शक्तिशाली मित्र नहीं जो आपको मज़बूत सहारा दे सकता। भला वह भी कोई आदमी है, क्या हैं वे लोग जो एक यतीम का अपमान कर सकते हैं? ऐसे लोग लोग नहीं, कूड़ा-करकट हैं, एकदम कूड़ा-करकट। वे, बस, नाम मात्र को हैं, इससे ज़्यादा कुछ नहीं, मुझे इसका पूरा यक़ीन है। ऐसे हैं ये लोग! मेरी रानी, गोरोख़ोवाया सड़क पर बाजा बजाकर पैसे मांगनेवाले जिस आदमी से आज मेरी भेंट हुई, इन लोगों की तुलना में वह कहीं अधिक आदर-सम्मान का अधिकारी है। बेशक वह सारा दिन सड़क पर घूमता रहता है, पेट भरने के लिये एक मामूली-से सिक्के की तलाश में रहता है, फिर भी वह ख़ुद अपनी इच्छा का स्वामी है, ख़ुद अपना पेट पालता है। वह भीख मांगना नहीं चाहता, वह लोगों की ख़ुशी के लिये चाबी भरे खिलौने की तरह मेहनत करता है। जैसे भी उसके लिये सम्भव है, लोगों को ख़ुशी प्रदान करता है। वह भिखारी है, बेशक भिखारी है, लेकिन फिर भी सम्मानित भिखारी। वह थक जाता है, ठिठुर जाता है, फिर भी मेहनत करता रहता है, बेशक अपने ढंग से, मगर मेहनत करता है। मेरी गुड़िया, बहुत-से ईमानदार लोग हैं इस दुनिया में जो अपनी शक्ति और श्रम की उपयोगिता की दृष्टि से बहुत पैसा नहीं कमाते, लेकिन किसी के सामने सिर नहीं झुकाते, किसी के सामने हाथ नहीं फैलाते। मैं भी इस बाजा

बजानेवाले के समान ही, मगर हां, कुलीन वर्ग का सदस्य होने पर भी उसकी भांति ही यथाशक्ति मेहनत करता हूं। इससे अधिक मेरे लिये सम्भव ही नहीं, मैं कर ही नहीं सकता।

मैंने इस बाजा बजानेवाले की चर्चा इसलिये की है, मेरी रानी, कि अपनी ग़रीबी को आज मैंने बहुत ही बुरी तरह अनुभव किया। मैं उस बाजा बजानेवाले को देखने के लिये रुक गया। सभी तरह के विचार मेरे मन को परेशान कर रहे थे, इसलिये एक तरह से मन बहलाने को रुक गया। मैं खड़ा था, कुछ गाड़ीवान खड़े थे, एक युवती और गन्दे-मन्दे कपड़े पहने एक बालिका भी थी। बाजा बजानेवाला किसी के घर की खिड़की के सामने खड़ा था। वहीं मुझे दसेक साल का एक छोकरा दिखाई दिया। अगर वह इतना दुबला-पतला और बीमार-सा न होता तो सुन्दर लगता। वह एक क़मीज़ और शायद कुछ और पहने था, शायद नंगे पांव था तथा मुंह बाये संगीत सुन रहा था – बच्चा जो ठहरा! जर्मन की गुड़ियां कैसे नाच रही थीं, वह बहुत ध्यान से देख रहा था, ख़ुद उसके हाथ-पांव ठण्ड से बुरी तरह ठिठुरे हुए थे और वह कांपता हुआ अपनी आस्तीन का सिरा कुतर रहा था। मैंने देखा कि उसके हाथ में एक काग़ज़-सा है। कोई महानुभाव पास से गुज़रा और उसने बाजा बजानेवाले की तरफ़ एक छोटा-सा सिक्का फेंक दिया। यह सिक्का सीधा उस घेराबन्द डिब्बे में गिरा जिसमें एक फ़्रांसीसी को महिलाओं के साथ नाचते दिखाया गया था। सिक्के की खनक होते ही लड़का चौंका, भीरुता से उसने इधर-उधर नज़र दौड़ाई और शायद यह सोचा कि सिक्का मैंने फेंका है। वह भागकर मेरे पास आया, उसके हाथ कांप रहे थे, आवाज़ कांप रही थी, उसने एक काग़ज़ मेरी तरफ़ बढ़ाया और बोला – "इसे पढ़ने की कृपा कीजिये!" मैंने उसे खोला – सब कुछ स्पष्ट था – वही कहानी थी कि अन्नदाता इन बच्चों की मां मर रही है, तीन बच्चे भूखों मर रहे हैं, आप हमारी मदद करें। जैसे ही मरूंगी, वैसे ही, मेरे उपकारी, उस दुनिया में आपके लिये प्रार्थना करूंगी कि आपने मेरे बच्चों की सहायता की है। सारी बात साफ़ थी, जानी-पहचानी थी, लेकिन मैं उसे क्या देता? इसलिये कुछ भी नहीं दिया। लेकिन दिल को कितना अधिक दुख हुआ! बेचारा छोकरा ठण्ड से अकड़ा

हुआ था, शायद भूखा भी था और वह झूठ नहीं बोल रहा था, मैं यह जानता हूं, अच्छी तरह से जानता हूं। लेकिन सबसे बुरी बात तो यह है कि ये दुष्ट माताएं अपने बच्चों को सहेजती क्यों नहीं, अधनंगे बच्चों को इस तरह के काग़ज़ देकर ऐसी ठण्ड में क्यों भेजती हैं। शायद वह बेवकूफ़ औरत है, उसमें चरित्र की दृढ़ता नहीं है, शायद उसकी मदद करनेवाला कोई नहीं और सम्भव है कि वह हाथ पर हाथ धरे निठल्ली बैठी है या सचमुच बीमार हो। ठीक जगह पर जाकर उसे मदद मांगनी चाहिये थी। किन्तु यह भी हो सकता है कि छल-कपट कर रही हो, भूखे और दुबले-पतले बच्चे को लोगों की आंखों में धूल झोंकने को भेजती हो, उसे बीमारी के मुंह में धकेलती हो। इस तरह के काग़ज़-पुरज़े लेकर लड़का क्या सीखेगा? सिर्फ़ यही कि उसका दिल पत्थर का हो जाता है, वह हर किसी के पास जाता है, भागता है, मिन्नत-समाजत करता है। लोग पास से गुज़रते हैं, मगर उन्हें रुकने की फ़ुरसत नहीं। वे संगदिल हैं और कठोर शब्द कहते हैं – "चल, भाग यहां से! शैतान कहीं का!" सभी से उसे ऐसे ही शब्द सुनने को मिलते हैं, उसके दिल की सभी कोमल भावनाएं मर जाती हैं और यह बेचारा, डरा-सहमा हुआ लड़का टूटे घोंसले से बाहर गिर जानेवाले पक्षी के बच्चे की तरह व्यर्थ ही ठण्ड में ठिठुरता रहता है। ठण्ड से उसके हाथ-पांव जम जाते हैं, उसके लिये सांस लेना कठिन होता है। देखते ही देखते उसे खांसी आने लगेगी; जल्द ही बीमारी उसकी छाती को जकड़ लेगी और किसी सड़ांध भरे कोने में दुबकी हुई मौत उसकी राह देख रही होगी। न कोई उसकी देख-भाल करेगा, न कोई सहायता को आगे आयेगा – और बस, ख़त्म हो जायेगी उसकी ज़िंदगी! तो ऐसी भी होती है ज़िन्दगी! ओह, वारेन्का, किसी के ये शब्द सुनना कि ईसा मसीह के नाम पर कुछ दे दो और यह जवाब देना – "भगवान देगा!" बहुत व्यथापूर्ण होता है। किसी किसी का ईसा मसीह के नाम पर मांगना मन को ख़ास नहीं छूता। (मेरी रानी, मांगनेवालों का ढंग भी अलग-अलग होता है।) कोई कोई तो देर तक, एक ही रटे-रटाये, अभ्यस्त अन्दाज़ में भिखारी की तरह मांगता रहता है। ऐसे को कुछ न देने से दिल को ज़्यादा तकलीफ़ नहीं होती। वह

काफ़ी अरसे से भिखारी है, उसका यह धन्धा ही है, उसे इसकी आदत पड़ चुकी है, वह जानता है कि कैसे अपना काम चलायेगा और चला भी लेता है। लेकिन दूसरा ईसा के नाम पर बड़े भद्दे और भयानक ढंग से मांगता है, उसे भीख मांगने की आदत नहीं होती – जैसा कि आज हुआ। जिस वक़्त मैंने लड़के से वह काग़ज़ पढ़ने को लिया तो बाड़ के पास ऐसा ही एक भिखारी खड़ा था जो सबसे भीख नहीं मांगता था। उसने मुझ से कहा – "महानुभाव, ईसा के नाम पर एक पैसा दे दो!" सो भी इतनी रुखाई से कि मैं किसी भयानक भावना से सिहर उठा, पर उसे एक पैसा नहीं दिया – था ही नहीं। इसके अलावा अमीरों को यह भी अच्छा नहीं लगता कि ग़रीब लोग उनके सामने अपनी बदक़िस्मती का रोना रोयें, क्योंकि वे उन्हें परेशान करते हैं, उन्हें तंग करते हैं। ग़रीबी तो हमेशा तंग करनेवाली, उबानेवाली होती है – शायद ग़रीबों की आहें-कराहें उनकी नींद में ख़लल डालती हैं!

सच कहूं, मेरी रानी, मैंने आपको यह सब कुछ इसलिये लिखना शुरू किया कि अपना जी हल्का कर लूं और इससे भी ज़्यादा इस कारण कि आपको अपनी अच्छी शैली का नमूना दिखा सकूं। शायद आप स्वयं यह मानेंगी, मेरी प्यारी, कि पिछले कुछ अरसे में मेरी शैली में कुछ निखार आ गया है। किन्तु अब मेरा मन इतना अधिक दुखी है कि मैं स्वयं अपनी भावनाओं के प्रति हृदय की गहराई से सहानुभूति अनुभव करने लगा हूं। बेशक मैं ख़ुद यह जानता हूं कि ऐसी सहानुभूति से कोई लाभ नहीं होगा, फिर भी अपने प्रति कुछ न्याय तो हो जायेगा। सचमुच, मेरी गुड़िया, कभी-कभी मैं अकारण ही अपने को तुच्छ समझने लगता हूं, अपने को कौड़ी क़ीमत का नहीं मानता, मामूली तिनके से भी गया-बीता समझता हूं। अगर तुलना के रूप में अभिव्यक्ति दी जाये तो ऐसा शायद इसलिये होता है कि मैं ख़ुद भी उसी तरह डरा-सहमा और दुतकारा हुआ हूं जैसे कि वह बेचारा छोकरा जिसने आज मुझ से भीख मांगी थी। अब मैं आपके सामने एक रूपक की तरह बात करूंगा, मेरी रानी। मेरी बात पर ध्यान दीजिये – कभी-कभी ऐसा होता है, मेरी रानी, कि सुबह के वक़्त मैं जल्दी-जल्दी दफ़्तर की तरफ़ क़दम बढ़ाता होता हूं, नगर पर

10–901

नज़र डालता हूं कि कैसे वह जाग रहा है, हरकत में आ रहा है, धुआं उठ रहा है, उसमें रेल-पेल और शोर-शराबा बढ़ रहा है। कभी-कभी ऐसे दृश्य सामने आता है मानो किसी ने मेरी जिज्ञासु नाक पर चुटकी काट ली हो, अपनी तुच्छता का आभास होने लगता है और मैं हाथ झटककर अपनी राह चल देता हूं। अब आइये, इन अंधेरे, धुएं से काले और बड़े-बड़े मकानों में झांककर देखें कि वहां क्या हो रहा है, उनकी थाह लें और फिर स्वयं यह तय करें कि अपने आपको इतना तुच्छ समझना, ऐसी हीनता अनुभव करना उचित था या नहीं। यह ध्यान में रखिये, वारेन्का, कि मैं रूपक में ही बात कर रहा हूं, सीधे अर्थ में नहीं। आइये, देखें कि इन घरों में क्या हो रहा है? वहां किसी धुआंरे कोने, किसी छोटी-सी नम कोठरी में, जिसे परिस्थितिवश क्वार्टर कहा जाता है, कोई कारीगर नींद से जागता है। उसे नींद में रात भर, मिसाल के तौर पर, जूतों की जोड़ी का सपना आता रहा है जिसे पिछले दिन उसने बिगाड़ डाला था। आदमी ऐसा अटपटा सपना देखे, यह भी कोई बात है! लेकिन वह कारीगर है, मोची है, उसका जूतों के बारे में ही सोचना क्षम्य है। उसके बच्चे बिलख रहे हैं और उसकी बीवी भूखी हैं। लेकिन, मेरी रानी, केवल मोची ही कभी-कभी मन पर ऐसा बोझ लिये हुए नहीं जागता है। यह तो कोई ख़ास बात नहीं और इसके बारे में लिखने की भी ज़रूरत न होती। किन्तु, मेरी प्यारी, क़िस्सा यह है कि इसी घर में, एक मंज़िल ऊपर या एक मंज़िल नीचे, सजे-धजे कमरों में रहनेवाले किसी रईस को, किसी अमीर आदमी को भी शायद सपने में जूते ही नज़र आते रहे हों। मेरा मतलब, दूसरे ढंग, दूसरे फ़ैशन के जूते, फिर भी जूते ही। तो, मेरी रानी, मैं कहना यह चाहता हूं कि कुछ हद तक हम सभी मोची हैं। यह भी कोई बात नहीं, लेकिन सबसे ज़्यादा बुरी चीज़ तो यह है कि इस अमीर के पास कोई ऐसा आदमी, कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो फुसफुसाकर उसके कान में यह कह सकता – "कोई ज़रूरत नहीं है जूतों के बारे में, केवल अपने बारे में सोचने की, अपने लिये ही जीने की, क्योंकि तुम तो मोची नहीं हो, तुम्हारे बच्चे स्वस्थ हैं और बीवी भूखी नहीं है। तुम अपने इर्द-गिर्द नज़र दौड़ाओ, क्या तुम्हें अपने जूतों

से बेहतर और कोई ऐसी चीज़ नज़र नहीं आती कि तुम जिसकी चिन्ता करो?" रूपक के माध्यम से मैं आपको यही कहना चाहता था, वारेन्का। सम्भव है कि यह बहुत ढंग का विचार न हो, मेरी प्यारी। किन्तु ऐसा विचार कभी-कभी मन में उठता है, आता है और उस समय अनचाहे ही उत्तेजनापूर्ण शब्द फूट पड़ते हैं। इसलिये शोर-शराबे और हो-हल्ले से डर-घबराकर अपने को तुच्छ समझने की कोई ज़रूरत नहीं! मेरी प्यारी, निष्कर्ष निकालते हुए मैं यह कहना चाहता हूं कि शायद आप यह सब बकवास समझें या यह सोचें कि मुझ पर उदासी हावी हो गयी है या यह कि मैंने किसी किताब से ये सब बातें नक़ल कर डाली हैं? नहीं, मेरी प्यारी, यक़ीन कीजिये कि न तो मैंने बकवास लिखी है, न उदासी ही मुझ पर हावी हुई है और न किसी किताब से ही मैंने ये बातें नक़ल की हैं – समझीं न!

मैं बहुत ही उदास-उदास-सा घर लौटा, मेज़ पर बैठ गया, केतली गर्म की और चाय का एकाध गिलास पीने की तैयारी करने लगा। अचानक हमारा ग़रीब पड़ोसी गोर्श्कोव मेरे कमरे में दाख़िल हुआ। आज सुबह ही इस बात की तरफ़ मेरा ध्यान गया था कि वह दूसरे किरायेदारों के आस-पास मंडराता रहा था, उसने मेरे पास भी आना चाहा था। प्रसंगवश यह भी बता दूं, मेरी रानी, कि उसका रहन-सहन मुझ से कहीं गया-बीता है। सो तो स्वाभाविक है। उसकी बीवी है, बच्चे हैं! अगर मैं गोर्श्कोव होता तो कह नहीं सकता कि उसकी जगह मैं क्या करता! तो गोर्श्कोव आया, उसने सिर झुकाकर अभिवादन किया, सदा की भांति उसकी आंखें भीगी-भीगी थीं, वह पांव को फ़र्श पर रगड़ता रहा और उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकलता था। मैंने उसे कुर्सी पर बिठाया, हां, टूटी कुर्सी पर, क्योंकि दूसरी मेरे पास नहीं थी। उसे चाय पेश की। उसने इन्कार करते हुए क्षमा मांगी, देर तक क्षमा मांगता रहा और आख़िर उसने चाय का गिलास ले लिया। उसने चीनी के बिना ही चाय पीनी चाही। जब मैंने कहा कि चीनी डाल लें तो वह फिर से माफ़ी मांगने लगा, देर तक विरोध और इन्कार करता रहा। आख़िर उसने चीनी की बहुत ही छोटी-सी डली चाय में डाल ली और यह यक़ीन दिलाने लगा कि चाय बहुत

मीठी है। ओह, क्या हालत कर देती है गरीबी आदमी की! "क्या हाल-चाल है?" मैंने उससे पूछा। "बहुत बुरा हाल है, मकार अलेक्सेयेविच, मेरे शुभचिन्तक। भगवान के नाम पर हमारे बदक़िस्मत परिवार की कुछ मदद कर दें। बीवी-बच्चों के लिये खाने को कुछ नहीं; आप समझ सकते हैं कि बाप के नाते मेरे दिल पर क्या बीत रही है!" मैंने कुछ कहना चाहा, लेकिन उसने मुझे बीच में ही टोक दिया – "मकार अलेक्सेयेविच, मैं यहां सभी से डरता हूं। मेरा मतलब है कि डरता नहीं हूं, बल्कि यह कि मुझे शर्म आती है – सभी लोग बड़े घमण्डी और गर्वीले हैं। मैं आपको, मेरे शुभचिन्तक, कष्ट न देता: मुझे मालूम है कि आप खुद तंगहाली में हैं, कि आप स्वयं भी कुछ अधिक नहीं दे सकते, लेकिन फिर भी कुछ तो उधार दे दें।" वह बोला – "आपसे इसलिये उधार मांगने की हिम्मत कर ली क्योंकि जानता हूं कि आप दयालु व्यक्ति हैं, खुद भी अभाव से परिचित हो चुके हैं, कि स्वयं भी अब मुसीबत भोग रहे हैं और इसलिये आपका हृदय दूसरों के प्रति सहानुभूति अनुभव करता है।" अन्त में उसने यह कहा कि मेरी ऐसी जुर्रत और अशिष्टता के लिये मुझे माफ़ कर दें, मकार अलेक्सेयेविच। मैंने उसे जवाब दिया कि खुशी से मदद करता, लेकिन मेरे पास कुछ भी नहीं, बिल्कुल ही कुछ नहीं। "भैया, मकार अलेक्सेयेविच," उसने मुझ से कहा, "मैं बहुत तो मांग ही नहीं रहा हूं, मामला यह है" (इतना कहकर वह लज्जारुण हो गया) "बीवी-बच्चे भूखे हैं। दस कोपेक ही दे दीजिये।" यह सुनकर मेरा अपना हृदय टीस उठा। सोचा, इनकी हालत तो मुझ से भी गयी-बीती है! खुद मेरे पास बीस कोपेक बाक़ी हैं, उन्हीं का सहारा था – अगले दिन बहुत ही ज़्यादा ज़रूरत की चीज़ों पर खर्च करना चाहता था। "नहीं, मेरे प्यारे, नहीं दे सकता। बस, ऐसी मजबूरी है," मैंने जवाब दिया। "प्यारे मकार अलेक्सेयेविच," उसने मिन्नत की, "कुछ ही दे दीजिये, दस कोपेक तो दे दीजिये।" तो मेरी रानी, मैंने दराज़ में से अपने बीस के बीस कोपेक निकालकर उसे दे दिये। यह भी नेकी का काम ही है! ओह, कितनी बुरी चीज़ है यह ग़रीबी! मैंने उससे बातचीत शुरू कर दी। पूछा – "भैया, कैसे आपकी ऐसी पतली

हालत हो गयी। ऐसी तंगी की ज़िन्दगी है और इसके बावजूद कमरे का चांदी के पांच रूबल महीना किराया देते हैं?" उसने मुझे बताया कि छः महीने पहले उसने यह कमरा किराये पर लिया था और तीन महीने का किराया पेशगी दे दिया था। उसके बाद हालात ने ऐसी करवट ली कि किसी तरह से निजात ही नहीं मिली। उसे आशा थी कि इस वक़्त तक उसका झंझट ख़त्म हो जायेगा। वह जिस झंझट में पड़ा हुआ है, बहुत ही बुरा है। मामला यह है, वारेन्का, कि वह किसी मुक़दमे में उलझा हुआ है। किसी सौदागर के साथ उसकी मुक़दमेबाज़ी चल रही है जिसने सरकारी ख़ज़ाने के साथ धोखाधड़ी की थी। धोखा पकड़ा गया, सौदागर पर मुक़दमा चल गया और उसने हेरा-फेरी के अपने इस धन्धे में गोर्श्कोव को भी समेट लिया। उसका भी इस मामले के साथ कहीं कोई तार जुड़ता था। सचाई यह है कि गोर्श्कोव लापरवाही, असावधानी और सरकारी हितों की अक्षम्य अवहेलना के लिये दोषी है। कई सालों से मुक़दमा चल रहा है – गोर्श्कोव के विरुद्ध तरह-तरह की अड़चनें आती जा रही हैं। "मेरे माथे बदनामी का टीका लगा दिया गया है," गोर्श्कोव ने मुझ से कहा, "चोरी और हेरा-फ़ेरी से मेरा कोई सरोकार नहीं।" इस मुक़दमे से उसके माथे पर कुछ कलंक लग गया; उसे नौकरी से हटा दिया गया और यद्यपि उसके विरुद्ध कोई अपराध तो सिद्ध नहीं हो सका तथापि पूरी तरह से बरी भी नहीं हो पाया। अगर वह पूरी तरह मुक्त हो जाता तो उसे सौदागर से खासी बड़ी रक़म हरजाने के रूप में मिल जाती। मैं उस पर विश्वास करता हूं, किन्तु अदालत तो शब्दों को नहीं मानती। यह मामला तो ऐसा पेचीदा, ऐसा उलझा हुआ है, उसमें इतनी गांठें पड़ी हुई हैं कि सौ बरस भी सुलझने का नाम नहीं लेंगी। कहीं ज़रा-सी बात सुधरती है, सौदागर उसमें और गांठ डाल देता है। मेरी प्यारी, मुझे गोर्श्कोव के लिये दिल से दुख होता है, उसके साथ सच्ची हमदर्दी है। बेरोज़गार और बिना भरोसे के आदमी को कहीं काम भी तो नहीं मिलता। जो कुछ पास में था, सब खर्च हो गया, खा-पी लिया गया। मामला खिंचता ही चला जा रहा है। इसी बीच, बिल्कुल बेमौक़े ही बच्चे का जन्म हो गया – यह भी खर्च सिर पर आ पड़ा। बेटा बीमार

हो गया, मर गया – इसके लिये भी पैसे की ज़रूरत पड़ी। बीवी बीमार रहती है; वह खुद भी किसी पुरानी बीमारी का मरीज़ है। थोड़े में यही कि दुखी है, बहुत दुखी है। वैसे उसका कहना है कि निकट भविष्य में मुक़दमे का फ़ैसला उसके हक़ में हो जायेगा, अब इसमें उसे रत्ती भर भी शक नहीं। बहुत, बहुत ही अफ़सोस होता है उसके लिये, मेरी रानी! मैंने उसे तसल्ली दी। वह बिल्कुल लुटा हुआ, मुसीबत का मारा आदमी है; दिलासा चाहता है और मैंने उसे कुछ दिलासा दिया। तो विदा, मेरी प्यारी, भगवान आपको स्वस्थ रखे। मेरी प्यारी मैना! जब आपको याद करता हूं तो ऐसे लगता है मानो कसकते दिल पर किसी ने मरहम रख दिया हो। बेशक आपकी वजह से तड़पता हूं, फिर भी तड़प से राहत मिलती है।

आपका सच्चा मित्र,
मकार देवुश्किन।

९ सितम्बर

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मैं अपनी सुध-बुध खोये हुए यह पत्र लिख रहा हूं। एक भयानक बात के कारण मैं बहुत उत्तेजित हूं। मेरा सिर चकरा रहा है। मुझे अपने इर्द-गिर्द की सभी चीज़ें घूमती-सी प्रतीत हो रही हैं। ओह, मेरी रानी, मैं आपको क्या बतलानेवाला हूं, आप उसका अनुमान भी नहीं लगा सकतीं! हमें इसकी पूर्वानुभूति ही नहीं हुई। नहीं, मैं यह नहीं मानता कि मुझे इसकी पूर्वानुभूति नहीं हुई। मैंने इसे पहले से अनुभव किया था। मेरे हृदय को इसकी पहले से अनुभूति हुई थी। इतना ही नहीं, मैंने तो कुछ दिन पहले सपने में भी ऐसा कुछ देखा था।

तो घटना यह हुई! मैं शैली के निखार की चिन्ता किये बिना उसी तरह से सब कुछ बताऊंगा जैसे वह सहज भाव से मेरे मन में आता जायेगा। मैं आज दफ़्तर गया। बैठकर अपना लिखने का काम करने लगा। मेरी प्यारी, आपके लिये यह जानना उचित होगा कि कल भी मैं यही लिखने का काम करता रहा था। तो

तिमोफ़ेई इवानोविच ने खुद कल मेरे पास आकर व्यक्तिगत रूप से यह अनुरोध किया – यह लीजिये बहुत ज़रूरी और बहुत फ़ौरी दस्तावेज़ है। बोले – मकार अलेक्सेयेविच, इसकी बहुत साफ़-साफ़, जल्दी और बड़े ध्यान से नक़ल तैयार कर दीजिये – इस पर आज ही हस्ताक्षर होंगे। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, यह बताना ज़रूरी है कि कल मैं बहुत उखड़ा-उखड़ा-सा था, किसी भी चीज़ में मन नहीं लग रहा था – ऐसी उदासी, ऐसी बेचैनी ने दिल में घर कर रखा था। मन व्यथित और लुटा-लुटा-सा था। मेरी गुड़िया, आप ही मेरे दिल-दिमाग़ पर छाई हुई थीं। सो मैं नक़ल करने लगा। बहुत साफ़-साफ़ और अच्छी तरह से नक़ल तैयार कर दी। नहीं जानता, कैसे ठीक-ठीक आपको यह बताऊं – शैतान ने मेरी अक़्ल पर पत्थर डाल दिये या क़िस्मत का खेल था या ऐसा होना ही था – पर मैं पूरी एक पंक्ति लिखना भूल गया। नतीजा क्या हुआ? हे भगवान, उसका अर्थ ही बिल्कुल बदल गया, उल्टा-सीधा हो गया। कल वह काग़ज़ पेश करने में देर हो गयी और आज ही हस्ताक्षर के लिये महामहिम के सामने पेश किया गया। मैं हर दिन की तरह नियत समय पर आज दफ़्तर पहुंचा और हमेशा की तरह येमेल्यान इवानोविच के निकट बैठ गया। मेरी रानी, आपको यह बताना ज़रूरी है कि पिछले कुछ समय से मैं पहले की तुलना में कहीं अधिक झेंपने और शर्माने लगा हूं। पिछले अरसे में मैं किसी से आंख ही नहीं मिलाता हूं। किसी की कुर्सी भी अगर ज़रा-सी आवाज़ पैदा कर देती है तो मेरा दम निकल जाता है। तो आज मैं बिल्कुल कछुए की तरह अपने में ही सिमटा-सिकुड़ा बैठा था कि येफ़ीम अकीमोविच ने (उससे ज़्यादा शैतान आदमी तो इस दुनिया में नहीं होगा) सभी को सुनाकर कहा – मकार अलेक्सेयेविच, आप तो ऐसे बैठे हैं कि... और ऐसा मुंह बनाया कि उसके तथा मेरे आसपास बैठे हुए सभी लोग हंसी से लोट-पोट होने लगे, और ज़ाहिर है, मेरी क़ीमत पर। उनका हंसना जारी रहा, जारी रहा! मैंने अपने आंख-कान बन्द कर लिये, बुत बनकर बैठ गया, न हिलता था न डुलता था। मैं हमेशा ऐसे ही करता हूं और इसी तरह उनसे जल्दी पिंड छूट जाता है। अचानक मुझे शोर सुनाई दिया, हलचल और दौड़-धूप दिखाई दी। मैंने अपने कानों पर

ज़ोर डाला कि कहीं मेरे सुनने में कुछ ग़लती तो नहीं हो रही? मुझे बुलाया जा रहा था, मेरी पुकार हो रही थी, देवुश्किन का नाम लिया जा रहा था। मेरा दिल बुरी तरह से धड़क उठा। मैं ख़ुद नहीं जानता कि किस बात से ऐसे डर गया। केवल इतना जानता हूं कि ऐसे डर गया जैसे ज़िंदगी में पहले कभी नहीं डरा था। मैं तो कुर्सी पर ऐसे जड़ हो गया मानो मुझ में जान ही बाक़ी न रही हो। लेकिन फिर से मुझे पुकारा जाने लगा, आवाज़ अधिकाधिक निकट आती जा रही थी। बिल्कुल कानों के ऊपर यह सुनाई देने लगा – देवुश्किन! देवुश्किन कहां है, देवुश्किन? मैंने नज़र ऊपर उठाई तो येवस्ताफ़ी इवानोविच को कहते सुना – "मकार अलेक्सेयेविच, जल्दी से महामहिम के पास जाइये! आपने वह काग़ज़ बिगाड़ डाला!" बस, इतना ही कहा, लेकिन यह बहुत काफ़ी था। मेरी रानी, क्या काफ़ी नहीं कह दिया गया था? मेरा तो दम निकल गया, ठण्डे पसीने आ गये, होश-हवास उड़ गये। तो मैं ऐसे जा रहा था मानो मेरी लाश चली जा रही हो। मैंने एक कमरा, फिर दूसरा, फिर तीसरा कमरा पार किया और फिर महामहिम के कमरे में जाकर रुक गया। उस समय मैं क्या सोच रहा था इसका पूरा ब्योरा मैं आपको नहीं दे सकता। मैंने क्या देखा कि महामहिम खड़े हुए हैं और उनके इर्द-गिर्द दूसरे लोग हैं। मुझे लगता है कि मैंने अभिवादन भी नहीं किया, इसका ध्यान ही नहीं रहा। मैं तो सकते में आ गया था। मेरी टांगें और होंठ बुरी तरह कांप रहे थे। और मेरी प्यारी, इसके लिये कारण भी था। पहली बात तो यह कि शर्म से मरा जा रहा था – मैंने दायीं ओर दर्पण में नज़र डाली तो जो देखा वह पागल कर देने के लिये काफ़ी था। दूसरे, मैंने हमेशा ऐसा व्यवहार किया था मानो इस दुनिया में मेरा अस्तित्व ही नहीं। इसलिये महामहिम को शायद ही मेरे अस्तित्व के बारे में मालूम हो। सम्भव है किसी से सुना हो कि उनके दफ़्तर में कोई देवुश्किन भी काम करता है, किन्तु इससे अधिक कुछ नहीं।

महामहिम ने गुस्से से कहना शुरू किया – "यह क्या कर डाला आपने! ध्यान कहां था आपका? बहुत ज़रूरी और जल्दी से भेजा जानेवाला काग़ज़ था और आपने उसे ख़राब कर दिया।

यह क्या किया आपने।" इतना कहकर वह येवस्ताफ़ी इवानोविच से बात करने लगे। मुझे इन शब्दों की भनक मिली – "लापरवाही! असावधानी! हमारे लिये परेशानी पैदा कर दी!" मैंने कुछ कहने के लिये मुंह खोलना चाहा। मैंने माफ़ी मांगनी चाही, लेकिन ऐसा नहीं कर सका। भागना चाहा – ऐसी हिम्मत नहीं हुई। और इसी समय... इसी समय एक ऐसी बात हो गयी, मेरी रानी, कि उसे लिखते हुए मैं अभी भी शर्म से धरती में गड़ा जा रहा हूं। मेरा बटन, बेड़ा ग़र्क़ हो उसका, जो धागे के साथ लटका हुआ था अचानक टूट गया, लुढ़क चला, उछला (लगता है कि संयोग से वह मेरे पांव तले आ गया था), झनझनाया, लुढ़कता गया और इस पर शैतान की मार, वह सीधा महामहिम के पैरों के पास जा गिरा। और यह उस समय हुआ जब पूर्ण निस्तब्धता छाई थी! तो बस, यही थी मेरी सफ़ाई, मेरी क्षमा-याचना, मेरा जवाब और वह सब कुछ जो मैं महामहिम से कहना चाहता था! इसके बाद जो हुआ, वह बड़ा भयानक था! महामहिम ने तत्काल मेरे हुलिये और मेरे सूट पर नज़र डाली। मैंने दर्पण में अपना जो हुलिया देखा था, मुझे वह याद हो आया। और मैं बटन को पकड़ने के लिये लपका। मेरे सिर पर तो जैसे भूत सवार हो गया था। मैं बटन पकड़ने के लिये झुका, वह लुढ़कता था, चक्कर खाता था और किसी तरह भी पकड़ में नहीं आता था। संक्षेप में यह कि मैंने अपनी चुस्ती-फुर्ती का भी अच्छा प्रदर्शन कर दिया। अब मैंने यह अनुभव किया कि मेरी हिम्मत बिल्कुल जवाब दे रही है, कि सब कुछ सत्यानास हो गया! मेरी इज़्ज़त-आबरू पूरी तरह से धूल में मिल गयी, मैं कहीं का नहीं रहा! अचानक कानों में तेरेज़ा और फ़ाल्दोनी की आवाज़ें और दूसरी बहुत-सी आवाज़ें गूंजने लगीं। आख़िर मैंने बटन पकड़ लिया, उठा, सीधा हुआ और फिर अगर ऐसी हिमाक़त की ही थी तो अब मुझे हाथ दायें-बायें करके शान्ति से खड़े हो जाना चाहिये था! लेकिन नहीं, बटन को टूटे धागे पर दबाने लगा मानो वह इस तरह से उसके साथ चिपक जायेगा और साथ ही मुस्कराता जाता था, मुस्कराता जाता था। महामहिम ने पहले तो मुंह फेर लिया, इसके बाद फिर से मेरी ओर देखा और मैंने उन्हें येवस्ताफ़ी इवानोविच से यह

कहते सुना – "यह सब क्या है ?.. ज़रा इसका हुलिया तो देखिये !.. यह क्या हालत है इसकी !.. क्या हुआ है इसे !.." ओह, मेरी प्यारी, क्या बताऊं मैं आपको – "यह क्या हालत है इसकी ? क्या हुआ है इसे ?" मैंने अपना नाम रोशन कर डाला। मुझे येवस्ताफ़ी इवानोविच के ये शब्द सुनाई दिये – "कभी कोई शिकायत नहीं, इसके खिलाफ़ किसी तरह की कोई शिकायत नहीं, आचरण बहुत अच्छा है, काफ़ी अच्छे पैसे भी पाता है..." – "तो किसी तरह से उसकी मदद कीजिये," महामहिम ने कहा, "इसे कुछ पेशगी दे दीजिये" – "वह पेशगी ले चुका है, कई महीनों की पेशगी ले चुका है। शायद इसकी परिस्थितियां ही कुछ ऐसी हैं, किन्तु आचरण अच्छा है। कभी कोई शिकायत नहीं, इसके खिलाफ़ कोई शिकायत नहीं।" मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं जल रहा था, जहन्नुम की आग में जल रहा था! मैं शर्म से मरा जा रहा था! "तो इस काग़ज़ की जल्दी से दुबारा नक़ल तैयार की जाये," महामहिम ने ऊंची आवाज़ में कहा। "देवुश्किन, इधर आइये, ग़लती के बिना इसे फिर से लिख दीजिये। और सुनिये..." इतना कहकर महामहिम दूसरों की ओर सम्बोधित हुए, कुछ आदेश दिये गये और सभी लोग बाहर चले गये। लोगों के बाहर जाते ही महामहिम ने झटपट बटुआ खोला और उसमें से सौ रूबल का नोट निकाला। "यह लीजिये," वह बोले, "बस, इतनी ही मदद कर सकता हूं, इसे जो भी चाहें, समझें..." और उसे मेरे हाथ में ठूंस दिया। मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं सिहर उठा, स्तम्भित रह गया, कह नहीं सकता कि मेरी क्या हालत थी। मैंने महामहिम का हाथ चूम लेना चाहा, लेकिन, मेरी प्यारी, वह तो शर्म से बिल्कुल लाल हो गये। इसके बाद जो हुआ, उसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है, मेरी रानी! उन्होंने मेरे तुच्छ हाथ से ऐसे तपाक के साथ अपना हाथ मिलाया, सच कहता हूं मेरे हाथ से अपना हाथ मिलाया मानो मैं उनके बराबर हूं, मानो मैं उन्हीं के समान जनरल होऊं। "जाइये," वह बोले, "इससे ज़्यादा कुछ नहीं कर सकता... आगे ग़लतियां नहीं कीजिये और जो हुईं उनके लिये हम दोनों ज़िम्मेदार हैं।"

तो अब, मेरी रानी, मेरा निर्णय सुनिये – आप से और फ़ेदोरा

से मेरा यह अनुरोध है, और अगर मेरे बच्चे होते तो मैं उनसे भी यह कहता कि वे भगवान से प्रार्थना करते रहें, मेरे लिये, अपने पिता के लिये नहीं, किन्तु महामहिम के कल्याण के लिये हर दिन और जीवन भर प्रार्थना करते रहें! इतना ही नहीं, मेरी रानी, और यह भी मैं सच्चे दिल से कह रहा हूं, ध्यान दें मेरी बात पर, मेरी प्यारी, कि हमारे बुरे दिनों में आपको, आपकी मुसीबतों, ख़ुद को, अपने अपमान तथा आपकी सहायता करने की अपनी असमर्थता को देखते हुए मुझे चाहे कितना ही मानसिक कष्ट और दुख क्यों न हुआ, उसके बावजूद मैं क़सम खाकर कहता हूं, मेरे लिये इन सौ रूबलों का उतना महत्त्व नहीं, जितना इस बात का कि महामहिम ने मुझ तुच्छ और शराबी आदमी के साथ अपना हाथ मिलाने की कृपा की! ऐसा करके उन्होंने मुझे फिर से इन्सान बना दिया। अपने ऐसे व्यवहार से उन्होंने मेरी पतित आत्मा को ऊपर उठा दिया, सदा के लिये मेरे जीवन में रस घोल दिया। मुझे इस बात का पक्का यक़ीन है कि भगवान की दृष्टि में मैं चाहे कितना ही पापी क्यों न होऊं, महामहिम के सुख-सौभाग्य और कल्याण के लिये मेरी प्रार्थना अवश्य उन तक पहुंच जायेगी!..

मेरी रानी! इस समय मैं बहुत उत्तेजित हूं, बड़ी विह्वलता अनुभव कर रहा हूं! मेरा दिल ऐसे धड़क रहा है मानो उछलकर बाहर आ गिरना चाहता हो। सिर से पांव तक बड़ी कमज़ोरी अनुभव कर रहा हूं। पैंतालीस रूबल के नोट आपको भेज रहा हूं, बीस मकान-मालकिन को दे दूंगा और पैंतीस मेरे पास रह जायेंगे। बीस रूबल में मेरे कपड़े-लत्ते ठीक हो जायेंगे और बाक़ी ज़रूरतों के लिये पन्द्रह रूबल बच जायेंगे। सुबह की सारी अनुभूतियों ने मेरे व्यक्तित्व को अभी पूरी तरह से झकझोरा है। मैं कुछ देर को लेट जाता हूं। वैसे, मैं शान्त हूं, बिल्कुल शान्त हूं। केवल दिल में कुछ टीस-सी उठ रही है, उसकी गहराई में कुछ कम्पन, धड़कन और स्पन्दन-सा अनुभव हो रहा है। मैं आपके पास आऊंगा, लेकिन इस वक़्त तो इन सभी अनुभूतियों का मुझ पर नशा-सा छाया हुआ है... भगवान की दृष्टि से कुछ भी नहीं छिपा है, मेरी रानी, मेरी प्यारी, मेरी अनमोल गुड़िया!

आपकी मित्रता के योग्य, मकार देवुश्किन।

१० सितम्बर

मेरे प्यारे, मकार अलेक्सेयेविच,

आपके सौभाग्य से मैं इतनी खुश हूं कि बयान से बाहर, आपके महामहिम की उदारता का ऊंचा मूल्यांकन किये बिना भी नहीं रह सकती। तो अब आप मुसीबतों से कुछ राहत पा लें। किन्तु भगवान के लिये पैसे को व्यर्थ बरबाद नहीं कीजियेगा। शान्त, और जहां तक सम्भव हो, सीधा-सादा जीवन बितायें और आज से ही हमेशा कुछ न कुछ बचाने की कोशिश करें, ताकि दुर्भाग्य फिर से अचानक आपको न आ दबोचे। भगवान के लिये हमारी चिन्ता न करें। फ़ेदोरा के साथ हम तो किसी तरह अपना काम चला ही लेंगी। हमारे पास इतने पैसे किसलिये भेज दिये, मकार अलेक्सेयेविच? हमें पैसों की बिल्कुल जरूरत नहीं है। हमारे पास जो कुछ है, हम तो उसी से बहुत सन्तुष्ट हैं। हां, यह सच है कि यहां से किसी दूसरे मकान में जाने के लिये हमें जल्द ही पैसों की ज़रूरत होगी, किन्तु फ़ेदोरा को आशा है कि उसे किसी से अपना पुराना, बहुत पहले का कर्ज़ वापस मिल जायेगा। किसी अप्रत्याशित आवश्यकता के लिये बीस रूबल अपने पास रख लेती हूं और बाक़ी आपको लौटा रही हूं। मकार अलेक्सेयेविच, कृपया पैसों को सहेजकर रखिये। तो विदा! अब चैन और खुशी की ज़िन्दगी बिताइये, स्वस्थ रहिये। मैं आपको और भी लिखती, किन्तु बहुत अधिक थकान अनुभव कर रही हूं। कल दिन भर बिस्तर से उठी ही नहीं। आने का वादा करने के लिये शुक्रिया। कृपया अवश्य आइयेगा, मकार अलेक्सेयेविच।

व० द०

११ सितम्बर

मेरी प्रिया, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मेरी रानी, आपकी मिन्नत करता हूं कि अब, जब मैं हर तरह से सुखी और खुश हूं, आप मुझे छोड़कर मुझ से दूर नहीं जाइये। मेरी गुड़िया! आप फ़ेदोरा की बातों पर कान नहीं दें

और आप जो कुछ भी चाहेंगी, मैं वह सब करूंगा। अपना आचरण बहुत अच्छा रखूंगा। महामहिम के प्रति आदर की भावना के कारण ही मैं किसी तरह की कोई बुरी बात नहीं करूंगा, अपने आचरण पर किसी तरह का धब्बा नहीं लगने दूंगा। हम फिर से एक-दूसरे को सुखद पत्र लिखेंगे, एक-दूसरे के विचारों और सुख-दुख के, अगर दुख आयेंगे, भागीदार बनेंगे। हम दोनों बहुत हेल-मेल से और सुखी जीवन बितायेंगे। साहित्य का अध्ययन किया करेंगे... मेरे नन्हे फ़रिश्ते। मेरे भाग्य ने पूरी तरह पलटा खाया है और सब कुछ बेहतरी के लिये हुआ है। मकान-मालकिन मेरे प्रति अब अधिक दयालु रहने लगी है। तेरेज़ा पहले से ज़्यादा समझदार और फ़ाल्दोनी भी चुस्त-फुर्तीला हो गया है। राताज़्यायेव से मैंने सुलह कर ली है। खुशी के रंग में मैं खुद ही उसके पास चला गया। मेरी प्यारी, वह भला आदमी है और उसके बारे में जो कुछ उलटा-सीधा कहा गया था, वह सब बकवास है। मैंने अब मालूम कर लिया है कि वह सब निन्दा-चुगली थी। हमारा खाका उतारने का उसका कोई इरादा ही नहीं था। उसने मुझ से खुद यह कहा है। उसने मुझे अपनी नयी रचना पढ़कर सुनायी। जहां तक इस चीज़ का सम्बन्ध है कि उसने मुझे लवलेस की संज्ञा दी थी, तो यह न तो कोई गाली है और न कोई भद्दी बात – उसने मुझे यह स्पष्ट किया। उसने विदेशी साहित्य से यह शब्द लिया है और इसका अर्थ है चुस्त या तेज़ आदमी। अगर अधिक सुन्दर या साहित्यिक ढंग से कहा जाये तो चलता पुरज़ा इन्सान! यानी कुछ ऐसा-वैसा नहीं। बड़ा भोला-भाला मज़ाक़ था, मेरे नन्हे फ़रिश्ते! मैं तो कुछ अधिक पढ़ा-लिखा हूं नहीं, यों ही मूर्खतावश नाराज हो गया। अब मैंने उससे माफ़ी मांग ली है... आज मौसम कितना अच्छा, कितना बढ़िया है, वारेन्का! यह सच है कि सुबह हल्का-सा पाला पड़ा मानो छलनी में से हल्की-सी ठण्ड छनी हो। यह तो कोई बात नहीं! इसकी बदौलत हवा में कुछ ताज़गी आ गयी। मैं जूते खरीदने गया और बहुत ही बढ़िया जूते खरीदे लिये मैंने। मैंने नेव्स्की सड़क का चक्कर लगाया। 'मधुमक्खी' समाचार-पत्र पढ़ा। और हां! मुख्य बात तो मैं आपको बताना भूल ही चला था।

मामला यह है कि आज सुबह येमेल्यान इवानोविच और अक्सेन्ती मिखाइलोविच से महामहिम के बारे में मेरी बातचीत हो गयी। वारेन्का, सिर्फ़ मेरे साथ ही उन्होंने ऐसी नेकी नहीं की है। उन्होंने मुझ पर ही ऐसा उपकार नहीं किया, बल्कि उनकी दरियादिली की तो सभी जगह धूम है। अनेक लोग उनका गुण-गान करते हैं, अनेक उनके प्रति कृतिज्ञता के आंसू बहाते हैं। उन्होंने एक यतीम बालिका को पाला-पोसा। उसकी जिन्दगी बना दी – एक भले आदमी से, अपने ही अधीन काम करनेवाले एक कर्मचारी से उसकी शादी कर दी। किसी विधवा के बेटे को कहीं दफ़्तर में नौकरी दिलवा दी और उन्होंने इसी तरह के और भी बहुत-से नेक काम किये हैं। मेरी रानी, मुझे लगा कि उन्होंने मुझ पर जो मेहरबानी की है, उसका बखान करना मेरा कर्त्तव्य है। मैंने महामहिम की उदारता की खुलकर चर्चा की ; उन्हें सब कुछ बता दिया, कुछ भी नहीं छिपाया। मैंने शर्म-हया को उठाकर ताक पर रख दिया। इसमें शर्म की बात ही कौन-सी थी, ऐसी परिस्थिति में आत्म-सम्मान का प्रश्न ही कहां उठता है! तो मैंने खुलकर चर्चा की – सभी दिशाओं में फैले महामहिम की कीर्ति! मैंने बड़े सुन्दर शब्दों में, बड़े उत्साह से यह सब कुछ बताया और ज़रा भी शर्म महसूस नहीं की। इसके विपरीत, इस बात का गर्व अनुभव किया कि यह बताने का सुअवसर मिला है। मैंने उन्हें सब कुछ बताया (हां, समझदारी से काम लेते हुए आपके बारे में चुप्पी लगा गया), अपनी मकान-मालकिन, फ़ाल्दोनी, राताज़्यायेव, अपने जूतों और मार्कोव के बारे में भी सब कुछ बता दिया। उनमें से कोई हंसता रहा, शायद सभी हंसते रहे। सम्भवतः मेरी शक्ल-सूरत या मेरे जूतों के बारे में उन्हें हंसने की कोई बात मिल गयी थी। किसी दुर्भावना से वे ऐसा नहीं कर सकते थे। यह तो इसलिये कि वे जवान और अमीर लोग हैं, किसी बुरे इरादे से वे मेरी बातों पर नहीं हंस सकते थे। मेरा मतलब यह कि महामहिम को लेकर हंसते – ऐसा तो वे हरगिज़ नहीं कर सकते थे। ठीक है न, वारेन्का?

मेरे तो अभी तक होश-हवास ठिकाने नहीं हो पाये हैं, मेरी रानी! इन सब घटनाओं से मैं बहुत उद्विग्न हो उठा हूं! आपके यहां ईंधन तो है न? ठण्ड नहीं खा जाइये, वारेन्का, ठण्ड खाते

कौन-सी देर लगती है। ओह, मेरी प्यारी, अपने उदासी भरे विचारों से आप मेरा बुरा हाल कर देती हैं। मैं तो आपके लिये भगवान से प्रार्थना करता रहता हूं, बहुत प्रार्थना करता रहता हूं, मेरी गुड़िया! मुझे बताइये आपके पास गर्म मोज़े या पहनने को कुछ गर्म कपड़े तो हैं न! मेरी रानी, इस मामले में लापरवाही नहीं कीजिये। अगर आपको किसी चीज़ की ज़रूरत हो, तो भगवान के लिये मुझ बूढ़े को नहीं भूलिये। फ़ौरन मुझे बता दीजिये, फ़ौरन मेरे यहां चली आइये। अब बुरे दिन चले गये। मेरी बिल्कुल चिन्ता नहीं कीजिये। आगे तो सब कुछ उजला-उजला, अच्छा ही अच्छा है!

लेकिन बहुत ही बुरा वक़्त था, वारेन्का! जैसा भी था, बीत गया! साल बीतेंगे और हम इस वक़्त के लिये भी आहें भरेंगे। मुझे अपने जवानी के साल याद आते हैं। अरे! कभी-कभी जेब में एक पैसा भी नहीं होता था। ठण्ड लगती थी पेट में चूहे कूदते थे, लेकिन दिल खिला रहता था। सुबह के वक़्त नेव्स्की सड़क पर चक्कर लगाता, कोई सुन्दर चेहरा नज़र आ जाता और दिन भर दिल खुश रहता। बहुत अच्छा, बहुत ही अच्छा समय था, मेरी रानी। ज़िन्दगी बहुत प्यारी है, वारेन्का! ख़ासकर पीटर्सबर्ग में। आंसू भर भरकर कल मैंने भगवान के सामने प्रायश्चित किया और यह कहा कि वह बुरे वक़्त के मेरे सारे पापों को क्षमा कर दे – तब मैंने शिकवा-शिकायत की, सभी तरह के अनुचित ख़्याल मन में लाया, नशेबाज़ी के फेर में पड़ा और ऐसे ही दूसरे उल्टे-सीधे काम किये। प्रार्थना करते ही मर्मस्पर्शी ढंग से आपकी याद आयी। एक आप ही थीं, मेरे फ़रिश्ते, जो मेरी हिम्मत बढ़ाती थीं, मुझे धीरज और तसल्ली देती थीं, उपदेश-नसीहतें देती और अच्छी राह दिखाती थीं। मेरी रानी, मैं यह तो कभी नहीं भूल सकूंगा। मेरी गुड़िया, आपके सभी पत्रों को आज मैंने चूमा। तो विदा, मेरी रानी! सुनने में आया है कि यहां कहीं पास में ही कोई अपना कोट बेच रहा है। तो मैं जाकर ज़रा इसका पता लगाता हूं। तो विदा मेरे नन्हे फ़रिश्ते, विदा!

आपका सच्चा स्नेही
मकार देवुश्किन।

१५ सितम्बर

मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच,

मैं बहुत ही ज़्यादा परेशान हूं। मैं आपको बताती हूं कि हमारे यहां क्या बात हो गयी है। मुझे किसी अपशकुन की पूर्वानुभूति हो रही है। मेरे अनमोल मित्र, आप स्वयं ही विचार करें इस स्थिति पर – श्रीमान बीकोव पीटर्सबर्ग में हैं। फ़ेदोरा की उनसे भेंट हुई। वह बग्घी में जा रहे थे, उन्होंने बग्घी रुकवाई, फ़ेदोरा के पास आये और पूछने लगे कि वह कहां रहती है। पहले तो उसने नहीं बताया। तब उन्होंने व्यंग्यपूर्वक मुस्कराकर कहा कि उन्हें मालूम है कि उसके यहां कौन रहती है (लगता है कि आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने उन्हें सब कुछ बता दिया)। तब फ़ेदोरा चुप न रह सकी और सड़क पर उनको भला-बुरा कहने, उनकी लानत-मलामत करने लगी। उसने उनसे कहा कि वह बुरे चाल-चलन के आदमी हैं और मेरी सारी मुसीबतों का कारण वही हैं। उन्होंने जवाब दिया कि जब आदमी के पास फूटी कौड़ी भी न हो तो उसका दुखी होना स्वाभाविक बात है। फ़ेदोरा ने कहा कि मैं काम करके अपना जीवन-निर्वाह कर सकती थी, मेरे लिये शादी करना या कोई नौकरी ढूंढ़ लेना भी सम्भव था, लेकिन अब मैं सदा के लिये बदक़िस्मत हो चुकी हूं, कि मैं बहुत बीमार हूं और जल्द ही इस दुनिया से कूच कर जाऊंगी। इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि मैं अभी बहुत जवान हूं, नासमझ हूं और "फिर भी तो पहले जैसी मासूम नहीं रही" (ये उनके शब्द हैं)। मेरा और फ़ेदोरा का ख़्याल था कि उन्हें हमारा पता मालूम नहीं है कि कल अचानक, जब मैं कुछ सौदा-सुलफ़ लेने के लिये गोस्तीनी द्वोर गयी थी, वह हमारे कमरे में आये। लगता है कि वह जान-बूझकर मेरी अनुपस्थिति में हमारे यहां आये। उन्होंने देर तक फ़ेदोरा से हमारे रहन-सहन के बारे में पूछा; सब कुछ देखा-भाला; मेरे काम को भी देखा और आख़िर पूछा – "आप लोगों का परिचित कर्मचारी कौन है?" उसी समय आप अहाता लांघ रहे थे। फ़ेदोरा ने आपकी ओर संकेत किया। वह आपकी तरफ़ देखकर मुस्करा दिया। फ़ेदोरा ने उनसे जाने का अनुरोध किया, यह कहा कि दुख-यातनाओं के कारण मेरा स्वास्थ्य यों भी अच्छा नहीं है और उन्हें यहां देखना मुझे बिल्कुल अच्छा

नहीं लगेगा। उन्होंने इसका कोई जवाब नहीं दिया, बोले कि कोई काम-काज न होने के कारण हमारे यहां चले आये और उन्होंने फ़ेदोरा को पचीस रूबल देने की कोशिश की जो, ज़ाहिर है, उसने नहीं लिये। इस सब का क्या मतलब हो सकता है? किसलिये वह हमारे यहां आये? मैं समझ नहीं पा रही हूं कि उन्हें हमारे बारे में कहां से सब कुछ मालूम है। मैं तरह-तरह के अनुमानों में खोकर रह जाती हूं। फ़ेदोरा का कहना है कि उसकी ननद अक्सीन्या, जो कभी-कभी हमारे घर आती रहती है, नस्तास्या धोबिन से परिचित है और नस्तास्या का चचेरा भाई उस मन्त्रालय में चौकीदार है जहां आन्ना फ़्योदोरोव्ना के भतीजे की जान-पहचान का कोई आदमी नौकरी करता है। कहीं ऐसे ही तो बात आगे ही आगे नहीं पहुंच गयी? हां यह भी हो सकता है कि फ़ेदोरा से ग़लती हो रही हो। हम क्या करें, हमारी समझ में कुछ नहीं आ रहा। क्या वह फिर हमारे यहां आयेंगे? इस विचार मात्र से मेरा दिल कांप उठता है! फ़ेदोरा ने कल जब यह सब कुछ बताया तो मैं इतनी डर गयी कि मुझे मूर्च्छा आती-आती रह गयी। ये लोग मुझ से और क्या चाहते हैं? मैं इनकी सूरत तक नहीं देखना चाहती! क्या लेना-देना है उन्हें मुझ असहाय लड़की से! ओह, कितनी डरी हुई मैं अब! यही सोचती रहती हूं कि श्रीमान बीकोव अभी चले आयेंगे! तब मुझ पर क्या बीतेगी? जाने मेरे भाग्य में अभी और क्या-क्या देखना लिखा है? ईसा मसीह के नाम पर, भगवान के नाम पर मुझ से अभी मिलने आइये, ज़रूर आइये, मकार अलेक्सेयेविच!

ब० द०

१८ सितम्बर

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेवना,

आज हमारे घर में एक बहुत ही दुखद, अकथनीय और अप्रत्याशित घटना हो गयी है। हमारा बेचारा गोर्श्कोव (मेरी रानी, आपको यह बताना ज़रूरी है) पूरी तरह से निर्दोष सिद्ध हो गया।

यों निर्णय तो बहुत पहले हो चुका था, लेकिन आज वह आख़िरी फ़ैसला सुनने के लिये अदालत में गया। फ़ैसला पूरी तरह से उसके हक़ में हुआ। लापरवाही और असावधानी के लिये उस पर जो दोष लगाया गया था, वह पूरी तरह क्षमा कर दिया गया। फ़ैसले में यह भी कहा गया कि सौदागर उसे एक बड़ी रक़म हरजाने के तौर पर अदा करे। तो इस तरह उसकी हालत भी बहुत सुधर गयी, उसकी इज़्ज़त पर जो कलंक लगा था, वह भी धुल गया और सब कुछ ठीक हो गया—थोड़े में यह कि मन की सारी तमन्नायें पूरी हो गयीं। आज दिन के तीन बजे वह घर लौटा। उसे पहचानना मुश्किल था, चेहरा पीला-ज़र्द था, उसके होंठ कांप रहे थे, मगर ख़ुद मुस्कराता जा रहा था। उसने बीवी-बच्चों को गले लगाया। हम सब एक साथ उसे बधाई देने गये। हमारे ऐसे व्यवहार ने उसका मन छू लिया, उसने सभी के साथ कई-कई बार हाथ मिलाया। मुझे तो ऐसा भी लगा कि उसका क़द लम्बा हो गया है, कमर सीधी हो गयी है और आंखों की तरलता भी जाती रही है। बहुत ही उत्तेजित, बहुत ही भाव-विह्वल था बेचारा। वह तो दो मिनट तक भी किसी एक जगह पर खड़ा नहीं रह सकता था। जो कोई भी चीज़ सामने आती, उसे उठा लेता, फिर से वापस रख देता, लगातार मुस्कराता और सिर भुकाता, बैठता, उठता, फिर से बैठता और भगवान जाने, क्या कुछ अंटसंट बोलता जाता था—"मेरी इज़्ज़त, मेरा नेक नाम, मेरे बच्चे!" और बोलता भी कैसे था! यहां तक कि रो पड़ा। हम में से अधिकतर की आंखों में भी आंसू आ गये थे। लगता है कि राताज़्यायेव ने उसकी हिम्मत बढ़ानी चाही और कहा—"भैया, अगर खाने को कुछ न हो तो इज़्ज़त को लेकर क्या चाटा जाये। सबसे बड़ी चीज़ तो पैसा है जिसके लिये भगवान को धन्यवाद देना चाहिये!" और इतना कहकर उसका कन्धा थपथपाया। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि गोर्श्कोव को बुरा लगा। ऐसा तो नहीं कि उसने साफ़-साफ़ अपनी नाराज़गी ज़ाहिर की हो, लेकिन बड़े अजीब ढंग से राताज़्यायेव की तरफ़ देखा और अपने कंधे से उसका हाथ हटा दिया। पहले उसने कभी ऐसा न किया होता, मेरी रानी! वैसे, जितने लोग, उनके उतने ही अलग-अलग रूप होते हैं। उदाहरण के लिये ऐसी

ख़ुशी से मैं घमण्ड में न जाता। बात यह है, मेरी प्यारी, कि कभी-कभी आदमी हृदय की अधिक उदारता, मन की कुछ अधिक कोमलता के कारण ही दूसरों के सामने ज्यादा सिर झुकाता है, अपने को नम्र ज़ाहिर करता है... लेकिन ख़ैर, मैं अपनी बात किसलिये करूं! वह बोला—"पैसा भी अच्छी चीज़ है, शुक्र है भगवान का, शुक्र है भगवान का!" इसके बाद, जब तक हम इसके यहां रहे, वह यही रट लगाये रहा—"शुक्र है भगवान का, शुक्र है भगवान का!" उसकी बीवी ने बढ़िया और काफ़ी मात्रा में भोजन तैयार करने की फ़रमाइश की। हमारी मकान-मालकिन ने ख़ुद अपने हाथों से उनके लिये भोजन पकाया। वैसे हमारी मकान-मालकिन कुछ हद तक दयालु औरत है। भोजन के वक़्त तक गोर्श्कोव टिककर नहीं बैठ सका। किसी ने उसे बुलाया या नहीं बुलाया, वह सभी के कमरों में जाता रहा। बस, योंही किसी के कमरे में चला जाता, मुस्कराता, कुर्सी पर बैठता, कुछ कहता, कभी कुछ भी न कहता और वहां से चला जाता। जहाज़ी अफ़सर के यहां तो उसने ताश के पत्ते भी हाथ में ले लिये; उन्होंने चौथे खिलाड़ी के रूप में उसे खेलने के लिये बिठा लिया। वह खेलता रहा, खेलता रहा, खेल में गड़बड़-घुटाला कर दिया, तीन-चार बार पत्ते चलने के बाद पत्ते फेंक दिये। बोला—"मैंने तो योंही, ऐसे ही पत्ते हाथ में ले लिये थे," और वहां से चला गया। बरामदे में मुझ से मुलाक़ात हो गयी, उसने मेरे दोनों हाथ अपने हाथ में ले लिये, बड़े विचित्र ढंग से मेरी आंखों में देखा, बड़े तपाक से मेरे साथ हाथ मिलाया और लगातार मुस्कराता रहा, किन्तु बड़ी अजीब, बड़ी बोझल, मुर्दे जैसी थी उसकी मुस्कान। उसकी बीवी ख़ुशी के मारे अपने आंसुओं पर क़ाबू नहीं पा सक रही थी। उनके यहां सब कुछ ख़ुशी से छलछला रहा था, पर्व-समारोह का सा वातावरण था। इन लोगों ने दोपहर का खाना जल्द ही खा लिया। भोजन के बाद गोर्श्कोव ने पत्नी से कहा—"सुनो, प्यारी, मैं थोड़ी देर को आराम कर लेता हूं," और बिस्तर पर चला गया। उसने बिटिया को अपने पास बुला लिया, उसके सिर पर हाथ रखकर बहुत देर तक उसका सिर सहलाता रहा। इसके बाद उसने फिर से पत्नी को सम्बोधित किया—"हमारा पेत्या कहां है? हमारा

प्यारा पेत्या?" पत्नी ने झटपट सलीब का निशान बनाया और बोली कि वह तो मर चुका है। "हां, हां, मुझे सब मालूम है, पेत्या तो अब स्वर्ग में है।" पत्नी ने अनुभव किया कि पति के होश-हवास ठिकाने नहीं हैं, कि इस घटना ने उसे पूरी तरह झंझोड़ दिया है, इसलिये उसने कहा – "मेरे प्यारे, आप थोड़ी देर सो लें।" – "हां, ठीक है, मैं अभी... मैं थोड़ी देर सो लेता हूं," इतना कहकर उसने करवट ले ली, थोड़ी देर लेटा रहा, इसके बाद पत्नी की ओर मुंह किया मानो कुछ कहना चाहता हो। पत्नी को इसकी बात सुनाई नहीं दी और उसने पूछा – "क्या बात है, मेरे प्यारे?" लेकिन गोश्कोंव ने कोई जवाब नहीं दिया। बीवी ने कुछ देर इन्तज़ार किया, सोचा कि उसे नींद आ गयी है और घण्टे भर को मकान-मालकिन के पास चली गयी। एक घण्टे बाद वह लौटी, उसने देखा कि पति अभी तक नहीं जागा, उसी तरह से लेटा हुआ है, हिल-डुल नहीं रहा है। उसने सोचा कि सो रहा है और कुछ काम करने बैठ गयी। वह बताती है कि आध घण्टे तक काम करती रही, विचारों में इतनी खो-डूब गयी कि उसे यह तक याद नहीं कि क्या सोचती रही, लेकिन इतना ज़रूर हुआ कि पति के बारे में बिल्कुल भूल गयी। अचानक वह घबराहट की अजीब-सी अनुभूति के कारण चौंकी और कमरे में छाये हुए मौत जैसे सन्नाटे ने सबसे पहले तो उसे हैरान किया। उसने पलंग पर नज़र डाली और देखा कि पति तो एक ही करवट लेटा हुआ है। वह उसके पास गयी, उसका कम्बल उतार फेंका और देखा कि पति का शरीर तो ठण्डा पड़ चुका है – वह मर चुका है। मेरी रानी, गोश्कोंव मर गया, ऐसे अचानक मर गया मानो उस पर बिजली गिर पड़ी हो! किस कारण मर गया – भगवान ही जाने! मैं तो ऐसे स्तम्भित रह गया हूं, वारेन्का, कि अभी तक सम्भल नहीं पाया हूं। यह विश्वास ही नहीं होता कि आदमी की ऐसे भी मौत हो सकती है। बेचारा, दुख-दर्दों का मारा गोश्कोंव! ओह, कैसी क़िस्मत, कैसी क़िस्मत पल्ले पड़ी थी बेचारे के! उसकी बीवी का रो-रोकर बुरा हाल था, अभी तक डरी-सहमी हुई है बेचारी। बच्ची किसी कोने में दुबकी हुई थी। उनके यहां ऐसी खलबली मची हुई है कि बयान से बाहर... डाक्टरी जांच-

पड़ताल होगी... ठीक से कुछ कह नहीं सकता। ओह, अफ़सोस, कितना ज़्यादा अफ़सोस है! यह सोचकर मन उदास हो जाता है कि जाने कब, किस घड़ी आदमी इस दुनिया से चल दे... अभी था, अभी नहीं रहा...

आपका
मकार देवुश्किन।

१९ सितम्बर

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

आपको जल्दी से यह सूचित करना चाहता हूं, मेरी मित्र, कि राताज़्यायेव ने एक लेखक से मेरे लिये काम की व्यवस्था कर दी है। कोई उसके पास आया था, पाण्डुलिपि का मोटा-सा पुलिन्दा दे गया है। शुक्र है भगवान का, बहुत काफ़ी काम मिल गया है। लेकिन उसकी लिखावट बहुत बुरी है, काम शुरू करते हुए घबराहट महसूस होती है और वह इसे जल्दी से कर देने की मांग करता है। ऐसा लिखा हुआ है कि हाथ-पल्ले ही कुछ नहीं पड़ता... हर पृष्ठ की नक़ल करने के लिये चालीस कोपेक पारिश्रमिक तय हुआ है। मेरी रानी, मैं इसीलिये आपको यह सूचित कर रहा हूं कि अब कुछ अतिरिक्त आय का साधन बन गया है। तो अब विदा, मेरी गुड़िया। मैं काम करने बैठ रहा हूं।

आपका सच्चा दोस्त
मकार देवुश्किन।

२३ सितम्बर

मेरे प्रिय मित्र, मकार अलेक्सेयेविच,

पिछले तीन दिन से मैंने आपको कुछ भी नहीं लिखा, मेरे दोस्त। इस बीच मुझे काफ़ी चिन्तायें और परेशानियां रहीं।

परसों मेरे यहां बीकोव आये। घर पर मैं अकेली थी, फ़ेदोरा कहीं गयी थी। मैंने दरवाज़ा खोला और उन्हें देखकर ऐसे डर गयी

कि जहां की तहां बुत बनी खड़ी रह गयी। मैंने अनुभव किया कि मेरे चेहरे का रंग उड़ गया है। वह अपने सामान्य ढंग से, ज़ोर का ठहाका लगाते हुए कमरे में दाखिल हुए और कुर्सी लेकर बैठ गये। मैं देर तक सम्भल नहीं सकी और आखिर कोने में बैठकर काम करने लगी। कुछ ही देर बाद उन्होंने हंसना बन्द कर दिया। लगता है कि मेरी सूरत देखकर वह स्तम्भित रह गये। पिछले कुछ समय में मैं बहुत ही कमज़ोर हो गयी हूं, मेरे गाल और आंखें धंस गयी हैं तथा मेरे चेहरे का रंग उड़ा हुआ था... एक साल पहले जिसने मुझे देखा था, उसके लिये अब मुझे पहचानना सचमुच कठिन है। वह देर तक और टकटकी बांधकर मुझे देखते रहे और आखिर फिर से रंग में आ गये। उन्होंने कोई बात कही, मुझे याद नहीं कि मैंने उसका क्या जवाब दिया और वह फिर से हंस पड़े। वह घण्टा भर मेरे यहां बैठे रहे, देर तक मुझ से बातें करते, कुछ पूछते रहे। आखिर, जाने से पहले उन्होंने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और बोले (मैं उन्हीं का एक-एक शब्द लिख रही हूं) – "वरवारा अलेक्सेयेव्ना, यह हमारी आपसी बात है, आपकी रिश्तेदार और मेरी घनिष्ठ परिचित और मित्र आन्ना फ़्योदोरोव्ना बड़ी नीच औरत है।" (इसके बाद उन्होंने उसके लिये एक अन्य अश्लील शब्द का उपयोग किया।) "उसने आपकी चचेरी बहन को भी गुमराह कर दिया और आपको भी बरबाद कर डाला। आपके इस मामले में मैंने भी अपने को कमीना साबित किया। यही तो ज़िन्दगी का खेल है।" इतना कहकर वह पूरे ज़ोर से हंसे। इसके बाद उन्होंने कहा कि बढ़िया बातें करने के फ़न में वह माहिर नहीं हैं और जो मुख्य चीज़ है, उनकी आत्मा की आवाज़ ने उन्हें जो कुछ कहने और चुप न रहने के लिये विवश किया है, वह उन्होंने कह दिया है और बाक़ी बातें संक्षेप में कहेंगे। इसके फ़ौरन बाद उन्होंने कहा कि मुझ से शादी करना चाहते हैं, कि मेरी इज़्ज़त-आबरू लौटाना वह अपना फ़र्ज़ मानते है, कि वह अमीर हैं, कि शादी के बाद मुझे स्तेपी के अपने गांव में ले जायेंगे, कि वहां वह खरगोशों का शिकार करेंगे, कि वह फिर कभी पीटर्सबर्ग नहीं आयेंगे क्योंकि वह गन्दा शहर है, कि यहां पीटर्सबर्ग में उन्हीं के शब्दों में, उनका एक नालायक़ भतीजा रहता है जिसे अपनी

सम्पत्ति के उत्तराधिकार से वंचित करने की उन्होंने क़सम खायी है और खास तौर पर इसीलिये यानी क़ानूनी वारिस पाने की इच्छा से ही शादी करना चाहते हैं, कि उनके ऐसे इरादे का यही मुख्य कारण है। इसके पश्चात उन्होंने यह भी कहा कि मैं बहुत ही ग़रीबी की हालत में रहती हूं, कि इस तरह के दरबे में रहते हुए मेरा बीमार रहना कोई आश्चर्य की बात नहीं और अगर मैं एक महीने तक भी यहां और रहूंगी तो अवश्य मर जाऊंगी। उन्होंने यह भी कहा कि पीटर्सबर्ग के घर बड़े बेहूदा हैं और अन्त में यह पूछा कि मुझे किसी चीज़ की जरूरत तो नहीं?

बीकोव के प्रस्ताव से मैं इतनी हैरान हुई कि क्यों मैं रो पड़ी, स्वयं नहीं जानती। उन्होंने मेरे आंसुओं को कृतज्ञता के आंसू समझा और बोले कि मुझे तो हमेशा इस बात का विश्वास रहा है कि मैं दयालु, संवेदनशील और पढ़ी-लिखी लड़की हूं। किन्तु इसके बावजूद उन्होंने मेरे वर्त्तमान आचरण के बारे में पूरी तरह से छान-बीन करने के बाद ही ऐसा प्रस्ताव किया था। इसी सम्बन्ध में उन्होंने आपके बारे में पूछा, यह कहा कि सब कुछ सुन चुके हैं, कि आप नेक और अच्छे व्यक्ति हैं, कि वह आपके ऋणी नहीं रहना चाहते और आपने मेरे लिये जो कुछ किया है, उसका एहसान चुकाने के लिये क्या पांच सौ रूबल काफ़ी होंगे? जब मैंने उन्हें यह स्पष्ट किया कि आपने मेरे लिये जो कुछ किया है, कितनी भी दौलत से उसका बदला नहीं चुकाया जा सकता, तो उन्होंने कहा कि ये बेसिर-पैर की बातें हैं, निरी भावुकता है, कि मैं अभी बच्ची हूं और कवितायें पढ़ती हूं, कि उपन्यास जवान लड़कियों को बरबाद करते हैं, कि किताबें केवल नैतिकता का सत्यानाश करती हैं और इसलिये वे उन्हें फूटी आंखों नहीं सुहाते। उन्होंने मुझे सलाह दी कि उनकी उम्र तक जीने के बाद ही मैं लोगों के बारे में अपनी राय ज़ाहिर करूं। "तभी," उन्होंने कहा, "आप लोगों को पहचान पायेंगी।" इसके बाद उन्होंने कहा कि मैं उनके प्रस्ताव पर अच्छी तरह से सोच-विचार करूं, कि सोचे-समझे बिना ऐसा महत्त्वपूर्ण क़दम उठाने से उन्हें बहुत अफ़सोस होगा और यह भी जोड़ दिया कि जल्दबाज़ी और नासमझी अनुभवहीन युवाजन को हमेशा तबाही के रास्ते पर ले जाती हैं। उन्होंने यह भी कहा कि

मेरी ओर से अनुकूल उत्तर पाने की वह हार्दिक कामना रखते हैं और यदि मैं ऐसा करने से इन्कार कर दूंगी तो उन्हें मजबूर होकर मास्को के एक सौदागर की बेटी से शादी करनी होगी, क्योंकि उन्होंने अपने नालायक़ भतीजे को अपनी सम्पत्ति के उत्तराधिकार से वंचित करने की क़सम खाई है। उन्होंने ज़बर्दस्ती करते हुए कशीदाकारी के फ़्रेम पर पांच सौ रूबल रख दिये और बोले कि ये मिठाई के लिये हैं। उन्होंने यह भी कहा कि गांव में मैं ख़ूब मुटा जाऊंगी, कि वहां मेरी पांचों घी में होंगी, कि आजकल उन्हें बहुत-से काम-काज करने हैं, कि वह सारा-सारा दिन दौड़-धूप करते रहते हैं और किसी तरह थोड़ी-सी फ़ुरसत निकालकर मेरे यहां आये हैं। इतना कहकर वह चले गये। मैंने बहुत सोच-विचार किया, सोचते हुए उलझन में पड़कर बहुत व्यथित-पीड़ित हुई, मेरे दोस्त, और आख़िर मैंने निर्णय कर लिया। मेरे मित्र, मैं उनसे शादी करूंगी, मुझे उनका प्रस्ताव स्वीकार करना ही होगा। अगर कोई मुझे अपमान और अपकीर्ति से बचा सकता है, मेरी खोयी हुई इज़्ज़त-आबरू लौटा सकता है, भविष्य में मुझे ग़रीबी, अभावों और दुर्भाग्य से निजात दिला सकता है, तो सिर्फ़ वही ऐसा करने में समर्थ हैं। अपने भविष्य और भाग्य से मैं और आशा ही क्या कर सकती हूं? फ़ेदोरा का कहना है कि अपने सुख-सौभाग्य को ठुकराना नहीं चाहिये। वह कहती है कि अगर यह सुख-सौभाग्य नहीं तो और क्या है? कम से कम मुझे तो अपने लिये कोई दूसरा रास्ता नज़र नहीं आता, मेरे अनमोल दोस्त। तो मैं क्या करूं? काम कर करके मैंने अपनी सेहत बिल्कुल चौपट कर ली है। मैं लगातार काम भी तो नहीं कर सकती। कहीं नौकरी कर लूं? मैं ऊब से मर जाऊंगी और इसके अलावा मैं किसी को ख़ुश भी तो नहीं कर सकती। फिर यों भी बीमार रहती हूं और इसलिये हमेशा किसी न किसी के लिये बोझ बनी रहूंगी। ज़ाहिर है कि अब भी मैं जन्नत में नहीं पहुंच जाऊंगी, लेकिन मैं क्या करूं, मेरे मित्र, मैं क्या करूं? क्या मेरे लिये कोई और रास्ता है?

मैंने आपसे अपनी राय देने का अनुरोध नहीं किया है। इस प्रश्न पर मैं ख़ुद ही सोच-विचार करना चाहती थी। वह निर्णय, जो आपने अभी पढ़ा है, अटल है और मैं जल्द से जल्द बीकोव को इसके बारे में बता दूंगी। वह तो इस मामले के आख़िरी फ़ैसले के लिये योंही बहुत उतावली कर रहे हैं। उनका कहना है कि उन्हें काम-काज से बिल्कुल फ़ुरसत नहीं, कि उन्हें गांव लौटना चाहिये और वह छोटी-मोटी बातों के लिये अपना जाना स्थगित नहीं कर सकते। भगवान ही जानता है कि मैं सौभाग्यशालिनी होऊंगी या नहीं, अपने भाग्य की डोर प्रभु के पावन और रहस्यमय हाथों में सौंप दी है, मैंने निर्णय कर लिया है। सुनने में आया है कि बीकोव दयालु व्यक्ति हैं। वह मेरा आदर करेंगे और शायद इसी तरह मैं भी उनका आदर करूंगी। अपने इस विवाह से मैं और अधिक आशा ही क्या कर सकती हूं?

मैंने आपको सभी बातों से सूचित कर दिया है, मकार अलेक्सेयेविच। मुझे विश्वास है कि आप मेरी सारी व्यथा-वेदना को समझ जायेंगे। मुझ से मेरा इरादा बदलवाने की कोशिश नहीं कीजियेगा। आपकी कोशिशें नाकाम रहेंगी। अपने हृदय में ही इस बात पर अच्छी तरह से विचार कर लें कि किस चीज़ ने मुझे ऐसा क़दम उठाने के लिये विवश किया है। शुरू में मैं बहुत परेशान हो उठी थी, लेकिन अब शान्त हूं। भविष्य के गर्भ में क्या है, मुझे मालूम नहीं। जो होगा, सो होगा, भगवान की इच्छा पूरी होकर रहेगी!

बीकोव आ गये हैं, मैं पत्र अधूरा ही छोड़ रही हूं। अभी आपको और भी बहुत कुछ बताना चाहती थी। बीकोव कमरे में हैं!

व० द०

२३ सितम्बर

मेरी गुड़िया, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मेरी रानी, मैं आपको फ़ौरन जवाब दे रहा हूं, जल्दी से जल्दी आपको यह बताना चाहता हूं कि मैं तो बिल्कुल दंग रह गया हूं। सारा मामला कुछ अजीब-सा लग रहा है... कल हमने गोर्श्कोव को दफ़नाया। हां, ऐसा ही है, ऐसा ही, प्यारी वारेन्का,

बीकोव ने शराफ़त का सबूत दिया है। लेकिन, मेरी प्यारी, आप ऐसे ही, आसानी से राजी हो रही हैं। बेशक हर चीज़ में भगवान की इच्छा होती है, अवश्य ही ऐसा होना चाहिये यानी हर चीज़ में भगवान की इच्छा होनी चाहिये, हर बात में हमारे स्रष्टा की चाह, हमारे भाग्य का खेल छिपा रहता है। फ़ेदोरा भी आपका साथ दे रही है। निश्चय ही अब आप सुखी हो जायेंगी, मेरी रानी, खुशी की ज़िंदगी बितायेंगी, मेरी बुलबुल, मेरी गुड़िया, मेरी लाड़ली, मेरे नन्हे फ़रिश्ते – लेकिन यह सब कितनी जल्दी हो रहा है, वारेन्का? हां, श्रीमान बीकोव को बहुत-से काम-काज हैं, लेकिन वे किसे नहीं, उनके लिये भी काम-काज हो सकते हैं... मैंने उन्हें आपके यहां से बाहर निकलते समय देखा था। प्रभावशाली व्यक्तित्व है, कहा जा सकता है कि बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व है उनका। लेकिन कहीं कुछ गड़बड़ ज़रूर है। महत्त्व की बात यह नहीं कि उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व है, बल्कि यह कि मैं बिल्कुल लुटा-लुटा-सा अनुभव करता हूं। अब हम एक दूसरे को पत्र कैसे लिखा करेंगे? मैं, मैं अकेला कैसे रहूंगा? मेरे नन्हे फ़रिश्ते, मैं अपने दिल में यह सब कुछ तौल रहा हूं, जैसा कि आपने अपने पत्र में लिखा है, सभी कारणों पर चिन्तन-मनन कर रहा हूं। जब मुझे यह सब कुछ मालूम हुआ, उस समय मैं बीसवें पृष्ठ की नक़ल पूरी कर रहा था! मेरी रानी, आप जानेवाली हैं, इसलिये आपको तरह-तरह की बहुत-सी चीज़ें तो खरीदनी होंगी – जूतों के जोड़े, पोशाकें आदि। प्रसंगवश बता दूं कि गोरोखोवाया सड़क पर मैं एक दुकान जानता हूं। आपको याद होगा कि मैंने कैसे आपके सामने उसका वर्णन किया था। अजी नहीं! मेरी रानी, आप ऐसे, किस तरह से जा सकती हैं, यह बिल्कुल सम्भव नहीं, किसी तरह भी सम्भव नहीं। आपको बहुत-सी चीज़ें खरीदनी हैं, बग्घी भी लेनी होगी। इसके अलावा अब मौसम भी खराब है। देखिये तो कितने ज़ोर की, कैसी मूसलाधार बारिश हो रही है, कैसे पानी बरस रहा है... इसके अतिरिक्त... इसके अतिरिक्त यह कि आपको ठण्ड लगेगी, मेरे नन्हे फ़रिश्ते। आपके छोटे-से दिल को ठण्ड लगेगी! आप उस पराये आदमी से डरती हैं, फिर भी जा रही हैं। और मैं अकेला यहां किसके सहारे रहूंगा? फ़ेदोरा

का कहना है कि बहुत बड़ा सुख-सौभाग्य आपकी राह देख रहा है... वह तो बड़ी दुष्ट औरत है और मुझे बरबाद करना चाहती है। क्या आप आज शाम की प्रार्थना में जायेंगी, मेरी रानी? मैं आपको देखने के लिये वहां आ जाता। यह सच है, सोलह आने सच है, मेरी प्यारी, कि आप पढ़ी-लिखी, नेक और संवेदनशील हैं, फिर भी यही ज़्यादा अच्छा होगा कि वह सौदागर की बेटी से ही शादी कर लें! आपका क्या ख्याल है, मेरी रानी? यही ज़्यादा अच्छा होगा कि वह सौदागर की बेटी से शादी कर लें! मेरी अपनी वारेन्का, जैसे ही कुछ अन्धेरा होगा, मैं कोई घण्टे भर के लिये आपके यहां आ जाऊंगा। मेरी रानी, मैं अवश्य ही कोई घण्टे भर के लिये आज आपके यहां आऊंगा। इस वक़्त तो आप बीकोव का इन्तज़ार कर रही हैं। जैसे ही वह चले जायेंगे, मैं तभी, उनके जाने के बाद आऊंगा... मेरी राह देखियेगा, मेरी प्यारी, मैं कुछ देर को आऊंगा...

मकार देवुश्किन।

२७ सितम्बर

मेरे मित्र, मकार अलेक्सेयेविच,

श्रीमान बीकोव का कहना है कि मेरे पास हॉलैंडी लिनन की अवश्य ही तीन दर्जन शमीज़ें होनी चाहिये। तो जितनी भी जल्दी हो सके, दो दर्जन शमीज़ें सीने के लिये दर्जिनें ढूंढ़नी चाहिये और वक़्त हमारे पास बहुत ही कम है। श्रीमान बीकोव नाराज़ हैं, कहते हैं कि इन कपड़ों-लत्तों के मामले में बहुत झंझट है। पांच दिन बाद हमारी शादी होगी और शादी के अगले दिन हम गांव रवाना हो जायेंगे। श्रीमान बीकोव उतावली कर रहे हैं, कहते हैं कि फ़ज़ूल बातों पर अधिक समय नष्ट न किया जाये। दौड़-धूप करते हुए मेरा इतना बुरा हाल हो गया है कि मैं मुश्किल से ही अपने पैरों पर खड़ी रह पाती हूं। काम बेहिसाब हैं और सच तो यह है कि अगर ऐसा कुछ भी न होता तो कहीं बेहतर होता। और हां, हमारे यहां गोटे तथा लेस की कमी पड़ रही है। इन्हें खरीदना चाहिये, क्योंकि श्रीमान बीकोव का कहना है कि

उनकी बीवी बावर्चिन् जैसी लगे, उन्हें यह हरगिज़ पसन्द नहीं, कि मुझे अवश्य ही सभी "ज़मींदारिनों की नाक काटनी चाहिये।" ऐसा वह खुद ही कहते हैं। इसलिये, मकार अलेक्सेयेविच, कृपया गोरोखोवाया सड़क पर मदाम शिफ़ोन के यहां जाइये और अनुरोध कीजिये कि एक तो हमारे यहां दर्ज़िनें भेज दे और दूसरे, खुद भी आने की तकलीफ़ करे। आज मेरी तबीयत खराब है। हमारे नये घर में बड़ी ठण्ड और बेहद गड़बड़ है। श्रीमान बीकोव की मौसी तो इतनी बूढ़ी है कि बड़ी मुश्किल से उसकी सांस आती-जाती है। मुझे डर है कि हमारे यहां से जाने के पहले ही कहीं वह चल न बसे। लेकिन श्रीमान बीकोव का कहना है कि उसे कुछ नहीं होगा। हमारे घर में ऐसी गड़बड़ी है कि बयान से बाहर। श्रीमान बीकोव यहां नहीं रहते हैं और इसलिये नौकर-चाकर न जाने कहां चम्पत हो जाते हैं। कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि सिर्फ़ फ़ेदोरा ही हमारी देख-भाल के लिये रह जाती है। श्रीमान बीकोव का अर्दली जिसे सारी व्यवस्था करनी चाहिये, पिछले तीन दिनों से खुदा जाने कहां ग़ायब रहता है। श्रीमान बीकोव हर सुबह को आते हैं और खीझते-झल्लाते हैं, कल उन्होंने कारिन्दे की पिटाई कर दी, जिसके कारण उन्हें पुलिस से निपटना पड़ा... किसी के हाथ आपको ख़त भी नहीं भिजवा सकती थी। शहरी डाक से भेज रही हूं। और हां! सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो भूल ही चली थी। मदाम शिफ़ोन से कहियेगा कि कल के नमूने के अनुसार अवश्य ही गोटे को बदल दे और नये नमूने दिखाने के लिये खुद आ जाये। यह भी कहियेगा कि आस्तीनों के बिना ब्लाउज़ के बारे में मैंने अपना विचार बदल लिया है और उस पर कढ़ाई की जानी चाहिये। और यह भी कि रूमालों पर रेशमी धागों के टांकों से नहीं, बल्कि कसीदाकारी से अक्षर लिखे जायें। समझ गये न? देखिये, भूल नहीं जाइयेगा – कसीदाकारी से अक्षर लिखे जायें! और हां, यह भी भूल ही गयी थी! उससे कहना कि कालर पर लेस लगायी जाये या चौड़ी झालर लगी रहे। मकार अलेक्सेयेविच, कृपया उससे यह सब कुछ कह दीजिये।

आपकी

ब० द०

पुनश्च – मैं इस बात के लिये बहुत लज्जित हूं कि आपको अपने काम सौंप-सौंप कर परेशान करती रहती हूं। परसों भी आप सारी सुबह दौड़-भाग करते रहे थे। किन्तु क्या किया जाये! हमारे घर में कोई व्यवस्था नहीं और मैं खुद ढीली हूं। मुझ से नाराज़ नहीं होइयेगा, मकार अलेक्सेयेविच। मन बहुत भारी है! ओह, जाने क्या होनेवाला है, मेरे दोस्त, मेरे प्यारे, मेरे दयालु मकार अले-क्सेयेविच! भविष्य की सोचकर ही मेरा दिल कांप उठता है। मुझे कुछ बुरी पूर्वानुभूति हो रही है और मानो किसी कुहासे में जी रही हूं।

पुनश्च – मेरे दोस्त, भगवान के लिये उसमें से कुछ भूल नहीं जाइयेगा जो मैंने अभी-अभी आप से कहा है। मैं चिन्तित हूं कि आप कहीं कोई ग़लती न कर दें। याद रखिये कि अक्षर टांकों से नहीं, कसीदाकारी द्वारा लिखे जायें।

ब० द०

२७ सितम्बर

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

आपके सभी आदेश अच्छी तरह से पूरे कर दिये हैं। मदाम शिफ़ोन ने कहा कि वह खुद भी टांकों के बजाय कसीदाकारी करके अक्षर लिखने की सोच रही थी। ऐसा करना ज्यादा जंचेगा या कुछ ऐसा ही जो मैं अच्छी तरह से समझ नहीं पाया। और हां, आपने झालर लिखी थी और उसने झालर के बारे में भी कुछ कहा था। लेकिन, मेरी रानी, झालर के बारे में उसने क्या कहा था, वह मुझे याद नहीं रहा। सिर्फ़ इतना ही याद है कि उसने बहुत कुछ कहा था, बड़ी खूसट औरत है वह! वह खुद ही आपको सब कुछ बतायेगी। मेरी प्यारी, मैं तो बिल्कुल थक-टूट गया हूं। आज तो दफ़्तर भी नहीं गया। लेकिन मेरी रानी, आप तो व्यर्थ ही हताश हो रही हैं। आपके मन के चैन के लिये मैं सारी दुकानों के चक्कर लगाने को तैयार हूं। आपने लिखा है कि भविष्य के ख्याल से ही आपको डर लगता है। आज तो कोई सात बजे आपको सब कुछ मालूम हो जायेगा। मदाम शिफ़ोन खुद आपके पास आयेगी।

तो आप हताश नहीं हों; आशा रखें, मेरी प्यारी; शायद सब कुछ ठीक-ठाक हो जायेगा। हां, मैं तो उस कम्बख़्त झालर, झालर के ही फेर में पड़ा हुआ हूं। भाड़ में जाये यह झालर! मैं आपके यहां आता, ज़रूर ही आपके यहां आता, मेरे नन्हे फ़रिश्ते। आपके घर के फाटक तक मैं दो बार गया भी। लेकिन बीकोव, मेरा मतलब यह है कि श्रीमान बीकोव हमेशा इतने आग-बबूला हुए रहते हैं, यही बुरी बात है... ख़ैर, किया क्या जाये!

मकार देवुश्किन।

२८ सितम्बर

मेरे प्यारे, मकार अलेक्सेयेविच,

भगवान के लिये अभी भागकर जौहरी के यहां जाइये। उससे कहिये कि मोती और पन्नों से जड़े हुए झुमके नहीं बनाये। श्रीमान बीकोव का कहना है कि बहुत ज्यादा ख़र्च हो रहा है, उन्हें यह बुरी तरह से खल रहा है। वह बिगड़ रहे हैं; कहते हैं कि उनकी जेब ख़ाली होती जा रही है, कि हम उन्हें लूट रहे हैं। कल कह रहे थे कि अगर मुझे पहले से मालूम होता, यदि इतने बड़े ख़र्च का अनुमान लगा पाता तो यह झंझट ही मोल न लेता। उनका कहना है कि शादी होते ही हम गांव चल देंगे, कि दावत और मेहमानों-बेहमानों के चक्कर में नहीं पड़ेंगे, कि मैं नाचने और जशन मनाने के सपने नहीं देखूं। तो ऐसे कहते हैं वह! भगवान साक्षी है, मुझे भला इस सबकी कोई ज़रूरत है! श्रीमान बीकोव ने ख़ुद ही तो यह सब व्यवस्था करने को कहा था। मेरी हिम्मत नहीं होती कि मैं उन्हें कोई जवाब दूं – वह आपे से बाहर हो जाते हैं। मेरे साथ क्या बीतेगी!

व० द०

२८ सितम्बर

मेरी गुड़िया, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

मैं – मेरा मतलब है, जौहरी वाला मामला सब ठीक है।

मैंने शुरू में अपने बारे में बताना चाहा था, कि मैं बीमार हो गया हूं और बिस्तर से उठने में असमर्थ हूं। अब, जब दौड़-धूप का, मेरे काम करने का वक़्त आया है, मुझे ठण्ड लग गयी है। बुरा हो इसका! आपको यह भी बताना चाहता हूं कि मेरी बदक़िस्मती इस हद तक जा पहुंची कि महामहिम मुझ पर बिगड़ उठे। उन्होंने येमेल्यान इवानोविच को भी इतना डांटा-डपटा, उसपर इतने चीख़े-चिल्लाये कि अन्त में उस बेचारे का बुरा हाल हो गया। मैं आपको सब कुछ बता रहा हूं। कुछ और भी लिखना चाहता हूं, किन्तु डरता हूं कि आपको परेशान न कर डालूं। बात यह है, मेरी रानी, मैं तो बुद्धू, सीधा-सादा आदमी हूं, जो कुछ दिमाग़ में आ जाता है, लिख देता हूं। शायद कोई अटपटी बात लिख देता हूं – ख़ैर, किया क्या जाये!

आपका

मकार देवुश्किन।

२९ सितम्बर

मेरी प्यारी, वरवारा अलेक्सेयेव्ना,

आज फ़ेदोरा से मेरी भेंट हो गयी, मेरी गुड़िया। उसने बताया कि कल आपकी शादी हो रही है और परसों आप लोग यहां से जा रहे हैं और श्रीमान बीकोव ने तो घोड़ा-गाड़ी भी किराये पर ले ली है। महामहिम के बारे में तो आपको बता ही चुका हूं, मेरी रानी। और हां – गोरोख़ोवाया सड़क की दुकान के बिलों की मैंने अच्छी तरह से जांच कर ली है। उनमें सब कुछ सही है, लेकिन बहुत कसकर पैसे लिये गये हैं। श्रीमान बीकोव आप पर क्यों झुंझलाते रहते हैं? भगवान आपको सुखी रखें, मेरी रानी! यदि आप सुखी रहेंगी तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी, हां, बहुत ख़ुशी होगी मुझे। मैं तो आपके विवाह के अवसर पर गिरजे में भी आ गया होता, किन्तु ऐसा नहीं कर सकता, मेरी कमर में दर्द है। मैं फिर से पत्रों की चर्चा कर रहा हूं – अब कौन उन्हें हम तक पहुंचायेगा, मेरी प्यारी? अरे हां, आपने फ़ेदोरा के साथ तो बहुत ही अच्छा बर्ताव किया है, मेरी प्यारी! यह बहुत नेक काम किया है आपने,

मेरी मित्र, बहुत अच्छा काम किया है। बड़ा नेक काम है! भगवान आपको हर नेकी का बदला देगा। नेकी कभी बेकार नहीं जाती, उसका फल ज़रूर मिलता है। देर-सबेर भगवान के न्यायालय में हमेशा नेकी करनेवाले के साथ न्याय होता है। मेरी गुड़िया! मेरा बहुत कुछ लिखने को मन हो रहा है, हर घण्टे, हर घड़ी कुछ न कुछ लिखना चाहता हूं, लिखते रहना चाहता हूं! मेरे पास आपकी एक किताब 'बेल्किन की कहानियां' रह गयी है। मेरी रानी, आप उसे मुझ से वापस नहीं लें, उसे मुझे भेंट कर दें, मेरी गुड़िया! यह इसलिये नहीं कि मैं उसे पढ़ने को इतना अधिक उत्सुक हूं। लेकिन आप तो जानती हैं, मेरी रानी, जाड़ा नज़दीक आ रहा है, रातें लम्बी होंगी, मन पर उदासी छा जायेगी, तब मैं इसे पढ़ लिया करूंगा। मेरी रानी, मैं अपना यह घर छोड़कर फ़ेदोरा के यहां उस कमरे में रहने लगूंगा जिसमें आप रहती थीं। इस ईमानदार औरत से मैं अब कभी अलग नहीं होऊंगा। फिर वह मेहनती भी कितनी है। आपके ख़ाली कमरे को कल मैंने अच्छी तरह से देखा। वहां, आपके फ़्रेम और उन पर की गयी कढ़ाई – सब उसी तरह से कोने में रखे हुए हैं। मैंने आपकी कढ़ाई को बहुत ध्यान से देखा। तरह-तरह के कपड़ों के टुकड़े भी वहां पड़े रह गये हैं। मेरे एक पत्र पर आपने धागा लपेटना शुरू किया था। आपकी मेज़ पर काग़ज़ का एक टुकड़ा मिला जिस पर लिखा हुआ है – "मेरे प्यारे मकार अलेक्सेयेविच, मैं जल्दी में हूं" – बस, इतना ही। लगता है कि सबसे ज़्यादा दिलचस्प जगह पर किसी ने बाधा डाल दी। परदों के पीछे कोने में आपका पलंग रखा हुआ है... मेरी गुड़िया!!! तो विदा, विदा! भगवान के लिये मेरे इस पत्र का जल्दी से जल्दी कुछ जवाब ज़रूर दीजिये।

मकार देवुश्किन।

३० सितम्बर

मेरे अनमोल मित्र, मकार अलेक्सेयेविच,

जो कुछ होना था, वह सब हो गया! मेरे भाग्य में क्या लिखा है, मैं नहीं जानती, किन्तु मैंने अपने को भगवान की इच्छा पर



छोड़ दिया है। कल हम यहां से जा रहे हैं। आपसे, मेरे सच्चे और प्यारे मित्र, मेरे शुभ-चिन्तक और हितैषी, मेरे प्रियतम, मैं अन्तिम बार विदा ले रही हूं! मेरे लिये दुखी नहीं होइयेगा, सुखी रहिये, मुझे याद रखिये और मेरी कामना है कि सदा आप पर भगवान की कृपादृष्टि बनी रहे! अपने विचारों, अपनी प्रार्थनाओं में मैं अक्सर आपको याद किया करूंगी। तो लीजिये, यहां के जीवन का समय समाप्त हो गया! अतीत की स्मृतियों में बहुत कम ही ऐसा कुछ सुखद है, जो मैं अपने नये जीवन में अपने साथ ले जा रही हूं। इसीलिये आपकी स्मृतियां और भी अधिक प्रिय रहेंगी, इसीलिये आप और भी अधिक प्रिय बने रहेंगे। आप ही मेरे एकमात्र मित्र हैं, यहां केवल आप ही मुझे प्यार करते थे। मैं तो सब कुछ देखती; सब कुछ जानती थी कि आप मुझे कितना अधिक प्यार करते थे! मेरी एक मुस्कान, मेरे पत्र की एक पंक्ति से ही आपका मन खिल उठता था। अब आपको यह सब कुछ भूलना होगा। आप अकेले यहां कैसे रहेंगे! किसके सहारे आप यहां रहेंगे, मेरे दयालु, मेरे अनमोल और एकमात्र मित्र! वह किताब, कढ़ाई के फ्रेम और शुरू किया हुआ पत्र आपके पास छोड़े जा रही हूं। जब शुरू की हुई इन पंक्तियों को देखेंगे तो आगे अपने मन से वही पढ़ते चले जाइयेगा जो मेरी ओर से आप पढ़ना चाहें। वह सब, जो मैंने आपको लिखा होता। क्या कुछ न लिखा होता अब मैंने आपको! अपनी बेचारी वारेन्का को याद कीजिये जो आपको इतना अधिक प्यार करती थी। आपके सभी पत्र फ़ेदोरा की अलमारी के ऊपरवाले खाने में रखे हुए हैं। आपने लिखा है कि आपकी तबीयत अच्छी नहीं, किन्तु श्रीमान बीकोव मुझे आज कहीं भी नहीं जाने दे रहे हैं। मैं वचन देती हूं कि आपको पत्र लिखा करूंगी, मेरे दोस्त, लेकिन भगवान ही जानता है कि क्या हो जाये। तो अब हम सदा के लिये विदा लेते हैं, मेरे मित्र, मेरे प्यारे, मेरे प्रियतम, हमेशा के लिये!.. ओह, कैसे मैंने आपको अब गले लगाया होता! विदा, मेरे मित्र, विदा, विदा। सुखी रहें, स्वस्थ रहें। मैं तो जीवन भर आपके लिये प्रार्थना करती रहूंगी। ओह! मन कितना उदास है, कितना भारी है। श्रीमान बीकोव मुझे पुकार रहे हैं। चिरन्तन प्यार करनेवाली आपकी

व०

पुनश्च – मेरा मन भर भर आता है, आंसुओं में डूबा जाता है...

आंसुओं से मेरा दम घुटा जा रहा है, जी धबरा रहा है। विदा।

हे भगवान! कितना बोझल है मन! अपनी बेचारी वारेन्का को भूलिये नहीं, भूलिये नहीं!

मेरी प्यारी, मेरी अनमोल गुड़िया, मेरी वारेन्का,

आपको यहां से ले जाया जा रहा है, आप जा रही हैं! आपको मुझ से छीनने के बजाय अगर वे मेरे सीने से मेरा दिल निकाल लेते, तो कहीं अच्छा होता! आप भला यह क्या कर रही हैं! आप रो रही हैं और फिर भी जा रही हैं?! मुझे अभी-अभी आपका पत्र मिला है आंसुओं से भीगा हुआ। इसका मतलब है कि आप जाना नहीं चाहतीं, कि आपको जबर्दस्ती ले जाया जा रहा है, कि आपको मुझ पर तरस आ रहा है, कि आप मुझे प्यार करती हैं! अब कैसे, किसके साथ रहेंगी आप? वहां आपका नन्हा-सा दिल उदास, दुखी और व्यथित होगा। दुख उसे निचोड़ डालेगा, उदासी उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालेगी। आप वहां ज़िन्दा नहीं रह पायेंगी, आपको नम धरती में दफ़ना दिया जायेगा, आपकी क़ब्र पर आंसू बहानेवाला भी कोई नहीं होगा! श्रीमान बीकोव तो ख़रगोशों के शिकार में खोये रहेंगे... ओह, मेरी रानी, मेरी रानी! कैसे आपने ऐसा फ़ैसला कर लिया, कैसे आप ऐसा क़दम उठाने का इरादा बना सकीं! आपने क्या किया, क्या किया यह आपने! वे तो आपको क़ब्र में ले जा रहे हैं, वहां वे आपकी जान ले लेंगे, मेरे नन्हे फ़रिश्ते। मेरी रानी, आप में शक्ति ही कहां है, रोयें की तरह ज़रा-सी जान है आपकी! और मैं क्या कर रहा था? मैं, उल्लू, क्या झक मार रहा था! देख रहा था कि बच्ची मनमानी कर रही है, कि उसकी तबीयत अच्छी नहीं है! मुझे झटपट कुछ करना चाहिये था, लेकिन नहीं, उल्लू का उल्लू ही बना रहा, न कुछ सोचा-विचारा, न कुछ देखा-भाला मानो ऐसा करना ही उचित था, मानो इस मामले का मुझ से कोई ताल्लुक ही नहीं था। इतना ही नहीं, गोटे-झालर के चक्कर में भी दौड़ता रहा!.. नहीं,

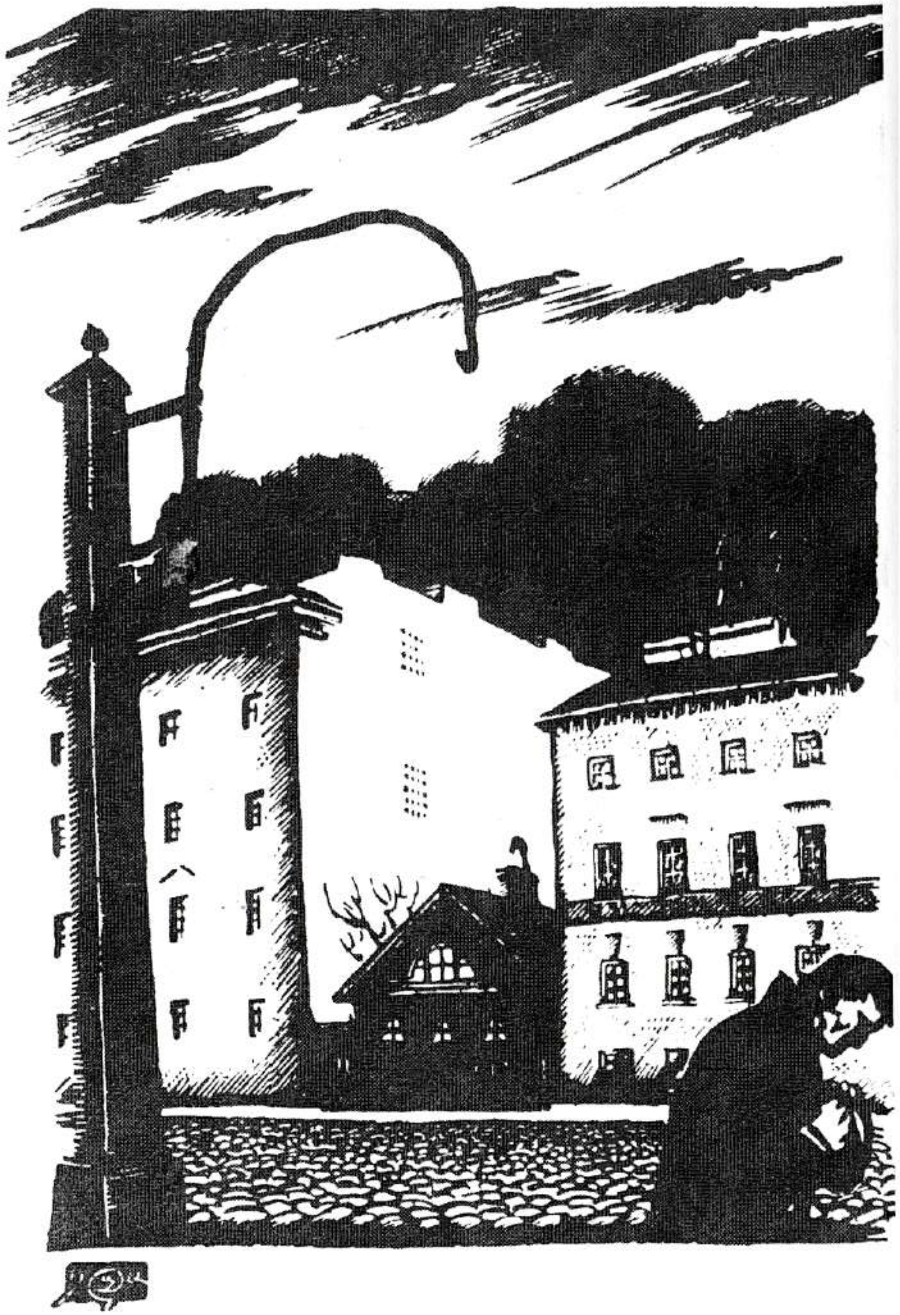
वारेन्का, मैं बिस्तर छोड़ दूंगा, शायद कल तक मैं भला-चंगा हो जाऊंगा, बिस्तर से उठ खड़ा होऊंगा!.. मेरी प्यारी, मैं बग्घी के पहियों के नीचे लेट जाऊंगा, आपको ले जाने नहीं दूंगा! आखिर यह भी कोई बात हुई? किस अधिकार से यह सब किया जा रहा है? मैं आपके साथ जाऊंगा। अगर मुझे साथ ले जाने से इन्कार किया जायेगा, तो मैं, जब तक मेरी आखिरी सांस बाक़ी रहेगी, बग्घी के पीछे-पीछे भागता रहूंगा। आप यह जानती भी हैं कि वहां क्या है, कहां आप जा रही हैं, मेरी रानी? शायद आप यह नहीं जानतीं, तो लीजिये मैं बताता हूं। वहां स्तेपी मैदान है, मेरी प्यारी! मेरी हथेली की तरह नंगी स्तेपी है वहां। वहां बुद्धू औरतें हैं और मूढ़ तथा नशे में धुत्त रहनेवाले किसान हैं। वहां तो अब वृक्षों से पत्ते भी झड़ चुके हैं, वहां बारिश होती है, ठण्ड है – और आप वहां जा रही हैं! श्रीमान बीकोव के लिये वहां करने को कुछ है, वह तो वहां ख़रगोशों के साथ व्यस्त रहेंगे, मगर आप क्या करेंगी? आप ज़मींदारिन बनना चाहती हैं, मेरी रानी? किन्तु, मेरी अप्सरा! आप अपने पर नज़र तो डालें कि क्या आप ज़मींदारिन जैसी लगती हैं?.. भला यह कैसे हो सकता है, वारेन्का! मैं पत्र किसे लिखूंगा, मेरी रानी? हां! आप ज़रा यह सोचें, मेरी रानी, – किसे मैं ख़त लिखा करूंगा? किसे मैं अपनी रानी कहा करूंगा, ऐसे प्यारे नाम से किसे बुलाया करूंगा? कहां मैं आपको बाद में ढूंढ़ पाऊंगा, मेरे नन्हे फ़रिश्ते? मैं मर जाऊंगा, ज़रूर ही मर जाऊंगा, वारेन्का! यह दुख नहीं सहन कर सकेगा मेरा दिल! दिव्य ज्योति की भांति, बेटी की तरह मैंने आपको प्यार किया, आपकी हर चीज़ को प्यार किया, मेरी प्यारी, मेरी रानी! केवल आपके लिये ही जी रहा था! मैं काम करता था, नक़लनवीसी करता था, बाहर आता-जाता, घूमता-फिरता था और जो कुछ देखता था उसे मैत्रीपूर्ण पत्रों के रूप में काग़ज़ पर उतार देता था – यह सब इसलिये, केवल इसलिये करता था कि आप यहां मेरे निकट, मेरे सामने रहती थीं, मेरी रानी शायद आपको यह सब मालूम न हो, किन्तु हक़ीक़त यही थी! सुनिये तो मेरी रानी, विचार कीजिये मेरी प्यारी, भला यह हो ही कैसे सकता है कि आप यहां से चली जायें? मेरी लाड़ली, आप जा नहीं सकतीं, यह असम्भव

है, ऐसा करना एकदम असम्भव है! देखिये, बारिश हो रही है, आप कमज़ोर हैं, आपको ठण्ड लग जायेगी। आपकी बग्घी चूने लगेगी, अवश्य चूने लगेगी। शहर से बाहर निकलते ही वह टूट जायेगी, ज़रूर टूट जायेगी। यहां, पीटर्सबर्ग में बड़ी घटिया बग्घियां बनाते हैं! मैं इन सभी को, बग्घियां बनानेवालों को जानता हूं। उनके लिये तो तड़क-भड़क और दिखावा ही सब कुछ हैं, वे खिलौने बनाते हैं, मज़बूत नहीं बनाते। क़सम खाकर कहता हूं कि कच्ची बग्घियां बनाते हैं! मैं श्रीमान बीकोव के पांव पड़ जाऊंगा, मेरी रानी। मैं उन्हें सब कुछ, सब कुछ स्पष्ट कर दूंगा! और आप भी, मेरी रानी, उन्हें सब कुछ स्पष्ट कर दें, दलीलों से समझा दें! उनसे कहिये कि आप यहीं रहेंगी, कि आप जा नहीं सकतीं!.. ओह, उन्होंने मास्को में सौदागर की बेटी से शादी क्यों नहीं की? यही अच्छा होता कि वह उससे शादी कर लेते! सौदागर की बेटी उनके लिये अच्छी रहती, कहीं ज़्यादा अच्छी रहती – यह तो मैं अच्छी तरह जानता हूं! और मैं आपको यहां, अपने पास रखता। मेरी रानी, श्रीमान बीकोव की आपको क्या ज़रूरत है? किसलिये आपको वह अचानक इतने प्यारे हो गये? शायद इसलिये कि वह आपको गोटा-झालर ख़रीदकर दे रहे हैं, शायद इसलिये! गोटा-झालर भी कोई चीज़ है? क्या ज़रूरत है उसकी? वह तो बड़ी तुच्छ चीज़ है, मेरी रानी! यहां तो इन्सानी ज़िन्दगी का सवाल है और वह गोटा-झालर, वह कपड़ा-लत्ता है मेरी रानी, कपड़ा-लत्ता। वेतन मिलते ही मैं ख़ुद आपको गोटा-झालर ख़रीद दूंगा, स्वयं ख़रीद दूंगा, मेरी रानी। वहां तो मैं एक दुकान भी जानता हूं। बस, तनख़्वाह मिलने की देर है, मेरी नन्ही अप्सरा, मेरी वारेन्का! ओह, भगवान, मेरे भगवान! तो आप ज़रूर ही श्रीमान बीकोव के साथ जा रही हैं, हमेशा के लिये स्तेपी में जा रही हैं! ओह, मेरी रानी!.. नहीं, आप अभी तो मुझे पत्र लिखिये, सब चीज़ों के बारे में लिखिये और जाने के बाद वहां से भी ख़त लिखिये। नहीं तो, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, यह अन्तिम पत्र होगा। किन्तु यह किसी तरह से भी नहीं हो सकता कि यह आखिरी ख़त हो। भला यह भी कोई बात हुई, अचानक और अवश्य ही अन्तिम पत्र! जी नहीं, मैं लिखूंगा और आप भी लिखिये... मेरी तो अब शैली भी निखरने लगी

है... ओह, मेरी प्यारी, क्या महत्त्व रखती है शैली! मैं तो अब भी यह नहीं जानता कि मैं क्या लिख रहा हूं, बिल्कुल नहीं जानता, कुछ भी नहीं जानता और न अपने लिखे को फिर से पढ़ता तथा शैली को सुधारता हूं। मैं तो केवल लिखने के लिये लिखता हूं, केवल इसलिये कि आपको अधिक से अधिक लिख सकूं... मेरी चिड़िया, मेरी प्यारी, मेरी गुड़िया!

रजत रातें

लघु उपन्यास



...या फिर इसीलिये हुआ था उसका जन्म
कि चाहें कुछ क्षण ही सही
वह तेरे हृदय के निकट रह सके ?..

इ० तुर्गेनेव

पहली रात

बहुत ही प्यारी रात थी, ऐसी रात, जो केवल तभी हो सकती है, जब हम जवान होते हैं, कृपालु पाठक। आकाश सितारों से ऐसे जगमगा रहा था, ऐसा उजला था आकाश कि उस पर नज़र डालते ही बरबस यह प्रश्न मन में आता था – क्या ऐसे आकाश के नीचे भी तरह-तरह के क्रोधी और सनकी लोग हो सकते हैं? यह भी जवानी के दिनों का ही प्रश्न है, कृपालु पाठक, बहुत ही जवान लोगों का, मगर भगवान करे कि यह सवाल आपके दिल में अक्सर सिर उठाये!.. सनकी और तरह-तरह के क्रोधी लोगों की चर्चा करते हुए मैं यह स्मरण किये बिना नहीं रह सकता कि आज का दिन खुद मैंने कितने अच्छे ढंग से बिताया था। सुबह से ही एक अजीब तरह की खिन्नता मेरे दिल को कचोटने लगी थी। अचानक मुझे ऐसा प्रतीत हुआ था कि मुझ एकाकी को सभी छोड़े जाते हैं, कि सभी मुझसे दूर भागे जा रहे हैं। निस्सन्देह किसी का भी यह पूछना उचित होगा कि ये 'सभी' कौन हैं? कारण कि मुझे पीटर्सबर्ग में रहते हुए आठ साल हो गये हैं और इस बीच

लगभग किसी भी व्यक्ति से जान-पहचान नहीं कर पाया हूं। मगर मुझे जान-पहचान करने की ज़रूरत ही क्या है? इसके बिना ही मैं सारे पीटर्सबर्ग से परिचित हूं। इसीलिये तो जब सारा पीटर्सबर्ग उठकर अचानक देहाती बंगलों को चल दिया, तो ऐसा लगा कि सभी मुझे छोड़े जा रहे हैं। अकेला रह जाने के ख़्याल से मेरा दिल डूबने लगा। मैं पूरे तीन दिन तक नगर की ख़ाक छानता रहा और यह नहीं समझ पाया कि मुझे क्या हो रहा है। मैं नेव्स्की सड़क पर जाता या बाग़ में या नदी-तट पर भटकता – कहीं भी तो कोई ऐसा चेहरा नज़र नहीं आता था जिसे मैं साल भर से एक ही जगह और एक ही वक़्त पर देखने का आदी हो चुका था। ज़ाहिर है कि वे मुझे नहीं जानते थे, मगर मैं तो उन्हें जानता हूं। मैं उन्हें बहुत अच्छी तरह जानता हूं, मैंने तो उनके चेहरों को लगभग पढ़ लिया है। जब उन चेहरों पर ख़ुशी झलकती है तो मैं खिल उठता हूं और जब उन पर कुहासा छा जाता है, तो उदास हो जाता हूं। एक बुज़ुर्ग से तो लगभग मेरी दोस्ती ही हो गयी है जिससे फ़ोन्तान्का के क़रीब हर दिन एक ही निश्चित समय पर मेरी भेंट होती है। बहुत ही धीर-गम्भीर और सोच में डूबा हुआ चेहरा है उसका। बुज़ुर्ग हर वक़्त कुछ बड़बड़ाता और बायें हाथ को हिलाता-डुलाता रहता है और उसके दायें हाथ में सुनहरे हत्थेवाली गांठदार लम्बी छड़ी होती है। उसने मेरी तरफ़ ध्यान भी दिया है और वह मुझमें हार्दिक दिलचस्पी भी लेता है। मुझे यक़ीन है कि निश्चित समय पर मुझे फ़ोन्तान्का के क़रीब न पाकर वह उदास हो जाता होगा। इसीलिये तो हम कभी-कभी एक-दूसरे की ओर लगभग सिर झुका देते हैं, ख़ास तौर पर तब, जब हम दोनों के दिल खुश होते हैं। एक बार जब पूरे दो दिन तक मुलाक़ात न होने के बाद हम तीसरे दिन मिले, तो हमने अपने टोप लगभग ऊपर उठा लिये थे, किन्तु अच्छा ही हुआ कि ऐन वक़्त पर सम्भल गये, हाथ नीचे कर लिये और एक-दूसरे के प्रति मूक लगाव अनुभव करते हुए पास से गुज़र गये।

मकानों से भी मेरी जान-पहचान है। जब मैं सड़क पर से गुज़रता हूं तो हरेक मकान मानो भागकर मेरे सामने आ जाता है, अपनी सारी खिड़कियों से मुझे ग़ौर से देखता है और लगभग कह उठता

है: "नमस्ते, आपका मिज़ाज कैसा है? भगवान की दया से मैं ठीक-ठाक हूं, मई महीने में मेरी एक मंज़िल और बढ़ जायेगी।" या फिर: "आपका मिज़ाज कैसा है? मेरी कल मरम्मत होनेवाली है।" या यह कि "मैं तो बस, जलते-जलते ही बचा और बहुत डर गया था।" आदि, आदि। उनमें से कुछ मुझे प्रिय हैं, कुछ मेरे घनिष्ठ मित्र हैं। एक तो इस गर्मी में वास्तुशिल्पी से अपना इलाज करानेवाला है। मैं जान-बूझकर हर दिन उसे देखने जाया करूंगा ताकि उसे कोई क्षति न पहुंच जाये, भगवान रक्षा करे उसकी!.. मगर एक बहुत ही सुन्दर, हल्के गुलाबी रंग के छोटे-से घर का क़िस्सा मैं कभी नहीं भूल सकूंगा। वह पत्थर का बना हुआ छोटा-सा, बहुत ही प्यारा घर था। ऐसी हार्दिकता से मेरी ओर देखा करता था वह, ऐसे घमंड से अपने बेढंगे-भोंड़े पड़ोसियों को देखता था कि जब कभी मुझे उसके पास से गुज़रने का मौक़ा मिलता तो मेरा दिल ख़ुशी से भर उठता। अचानक पिछले हफ़्ते इस सड़क पर से जाते हुए मैंने ज्यों ही अपने इस दोस्त पर नज़र डाली कि दर्दभरी चीख सुनाई दी: "मुझे पीले रंग से रंगा जा रहा है!" वहशी, जंगली! उन्होंने सभी कुछ तो रंग डाला था, स्तम्भ भी, कार्निस भी, और मेरा दोस्त पीली चिड़िया जैसा हो गया था। इसके कारण मुझे ख़ुद लगभग पीलिया हो गया और मैं अभी तक क़िस्मत के मारे और बदसूरत बनाये गये अपने इस दोस्त को, जिसे दिव्य साम्राज्य के रंग से रंग दिया गया था, देखने के लिये जाने की हिम्मत नहीं कर पाता।

तो, पाठक, आप समझ गये होंगे कि कैसे मैं सारे पीटर्सबर्ग से परिचित हूं।

मैं पहले कह चुका हूं कि अपनी परेशानी का कारण समझ पाने तक पूरे तीन दिन मेरा बुरा हाल रहा। बाहर भी मेरी ऐसी ही हालत रही (यह नहीं है, वह नहीं है, वह कहां चला गया?) – हां और घर पर भी मैं लुटा-लुटा-सा रहा। दो रातों तक मैं यह जानने की कोशिश करता रहा – मेरे इस छोटे-से घर में क्या नहीं है। क्यों वह काटने को दौड़ता है? कुछ भी समझ न पाते हुए मैंने अपनी हरी, धुएं से काली हुई दीवारों और छत को, जिस पर मकड़ी के जाले लटके हुए थे और जिन्हें मेरी नौकरानी

मात्र्योना खूब बढ़ाती जा रही थी, परेशानी से देखा, फ़र्नीचर पर फिर ग़ौर से नज़र डाली, हर कुर्सी को बहुत अच्छी तरह से जांचा और यह सोचता रहा कि कहीं इसी जगह तो कोई मुसीबत नहीं है! (बात यह है कि अगर मेरी एक भी कुर्सी उसी ढंग से न रखी हुई हो, जैसे वह एक दिन पहले थी, तो मैं बेचैनी महसूस करने लगता हूं) खिड़की पर नज़र डाली, मगर बेसूद... दिल को ज़रा भी राहत नहीं मिली! मेरे दिमाग़ में तो मात्र्योना को बुलाने का भी ख़्याल आ गया और मैंने मकड़ी के जालों और सभी तरह की गड़बड़ के लिये उसे बुज़ुर्गाना ढंग से डांट भी दिया। मगर वह तो केवल हैरानी से मुझे देखती रही और उत्तर में एक भी शब्द कहे बिना कमरे से बाहर चली गयी। चुनांचे मकड़ी के जाले अपनी जगह पर पहले की भांति ही लटके हुए हैं। आख़िर आज सुबह ही मैं अपनी इस परेशानी के कारण का अनुमान लगा पाया। अरे! वे तो मुझे छोड़कर देहाती बंगलों को भागे जा रहे हैं! बाज़ारू शब्दों के लिये क्षमा कीजिये, मगर बढ़िया शब्द-चयन की मुझे सुध ही कहां थी... क्योंकि पीटर्सबर्ग का हर आदमी या तो देहाती बंगले को जा चुका था या जा रहा था; क्योंकि बग्घी किराये पर लेता हुआ सम्मानित नज़र आनेवाला हर व्यक्ति मेरे देखते-देखते ही परिवार के प्रतिष्ठित मुखिया का रूप धारण कर लेता था और हर दिन का काम-काज निपटाकर हल्के मन से अपने परिवार के पास, अपने देहाती बंगले की ओर चल देता था, क्योंकि सभी राहगीरों के चेहरों पर एक ख़ास भाव झलक रहा था, जो सामने आ जानेवाले हर व्यक्ति से लगभग यह कहता प्रतीत हो रहा था: "श्रीमान जी, हम तो बस, चलते-चलाते ही यहां हैं और दो घण्टे बाद अपने देहाती बंगले को चले जायेंगे।" अगर कोई खिड़की खुलती, जिसके शीशे पर पहले तो चीनी जैसी सफ़ेद और पतली-पतली उंगलियां बज उठतीं और फिर कोई सुन्दर लड़की बाहर झांककर फूलों सहित गमले बेचनेवाले को बुलाती, तो फ़ौरन मेरे दिमाग़ में यही ख़्याल आता कि ये फूलोंवाले गमले नगर के उमसभरे फ़्लैट में वसन्त तथा फूलों का आनन्द लेने के लिये नहीं, बल्कि बहुत शीघ्र ही अपने साथ देहाती बंगले में ले जाने के लिये ख़रीदे जा रहे हैं। इतना ही नहीं, अपनी इस नयी और अपने ढंग की

अनूठी खोज में मैंने इतनी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि केवल शक्ल-सूरत देखकर ही बिल्कुल सही-सही यह बता सकता था कि कौन किस देहाती बंगले में रहता है।

कामेन्नी और अप्तेकार्स्की द्वीपों या पीटरगोफ़ सड़क पर रहनेवालों के विशेष लक्षण थे – नज़ाकत-नफ़ासत, गर्मियों के फ़ैशनदार सूट और शानदार बग्घियां, जिनमें वे शहर आते थे। पार्गोलोवो और उससे आगे रहनेवालों को देखते ही मन पर बुद्धिमानी और धीरता-गम्भीरता की "छाप" पड़ती थी। ख़ुश और मस्त-मौजी को देखते ही पता चल जाता था कि वह क्रेस्तोव्स्की द्वीप से आया है। जब मैं सभी तरह के फ़र्नीचर, मेज़ों-कुर्सियों, तुर्की और ग़ैरतुर्की सोफ़ों और घर के दूसरे सामानों से लदी हुई घोड़ा गाड़ियां, जिनके ऊपर अक्सर मालिक के सामान की अपनी आंख की पुतली की तरह रक्षा करनेवाली दुबली-पतली बावर्चिन बैठी होती थी, और घोड़ा गाड़ियों के साथ-साथ हाथों में लगामें थामे हुए धीरे-धीरे चलनेवाले गाड़ीबानों का लम्बा जुलूस देखता या फिर जब मुझे नेवा अथवा फ़ोन्तान्का में घरेलू सामान से ठसाठस लदी-फंदी नावें चोर्नाया नदी अथवा द्वीपों की ओर रेंगती दिखाई देतीं, तो वे घोड़ा गाड़ियां और वे नावें मेरी नज़र में दस गुना, सौ गुना बढ़ जातीं। मुझे लगता कि सभी कुछ उठकर चल पड़ा है, पूरे के पूरे काफ़िलों की शक्ल में सभी कुछ देहाती बंगलों में बसा जा रहा है; मुझे लगता कि पीटर्सबर्ग पर वीराना बन जाने का ख़तरा मंडरा रहा है। तो आख़िर मुझे शर्म आई, दुःख हुआ और मैं उदास हो उठा; मेरे जाने के लिये न तो कोई जगह ही थी और देहाती बंगले में जाने का न कोई कारण ही था। मैं हर घोड़ा गाड़ी के साथ, घोड़ा गाड़ी को किराये पर लेनेवाले हर प्रतिष्ठित श्रीमान के साथ जाने को तैयार था; मगर एक ने भी, किसी ने भी तो मुझे अपने साथ चलने को नहीं कहा; वे तो मानो मुझे भूल गये थे, मानो मैं उन सब के लिये वास्तव में ही पराया था!

मैं बहुत देर तक और बहुत काफ़ी भटकता रहा और जैसा कि आम तौर पर मेरे साथ होता है, पूरी तरह अपने को भूल गया, कि अचानक मैंने अपने को नगर से बाहर पाया। आन की आन में मैं खिल उठा, मैंने अवरोध पार किया और जोते-बोये

खेतों तथा चरागाहों के बीच से चल दिया। मैं थकान अनुभव नही कर रहा था और अपने अंग-अंग में मुझे केवल ऐसी अनुभूति हो रही थी कि मेरी आत्मा से कोई बोझ हटता जा रहा है। सवारियों पर आते-जाते लोग ऐसी हार्दिकता से मेरी ओर देखते थे कि बस, मेरा अभिवादन करते-करते ही रह जाते थे। किसी कारणवश सभी बेहद खुश थे, सभी सिगार के कश खीच रहे थे। मैं भी खुश था, जैसा कि मेरे साथ पहले कभी नहीं हुआ था। मैंने तो जैसे अचानक अपने को इटली में अनुभव किया – लगभग बीमार मुझ नगरवासी को, जिसका नगर की दीवारों में सिर्फ़ दम ही नही घुट गया था, प्रकृति ने ऐसे अभिभूत कर लिया।

हमारे पीटर्सबर्ग की प्रकृति में कुछ ऐसा मर्मस्पर्शी है जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। वसन्त के आगमन पर हमारे पीटर्सबर्ग की प्रकृति जब अपनी सारी शक्ति, ईश्वरदत्त अपने सभी वरदानों का प्रदर्शन करती है, खिलती है, सजधज उठती है, चटकीले फूलों से अपना शृंगार करती है, तो उसमें कुछ ऐसी मर्मस्पर्शता होती है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता... इस संबंध में मुझे बरबस उस रुग्णा, उस मरियल लड़की का स्मरण हो आता है जिसकी ओर कभी तो हम अफ़सोस से, कभी सहानुभूतिपूर्ण स्नेह से देखते हैं, कभी ध्यान ही नहीं देते, मगर जो अचानक, घड़ी भर को बिल्कुल अप्रत्याशित और अव्याख्य ढंग से ऐसी मनमोहिनी हो उठती है कि हम आश्चर्यचकित और आनन्द-विभोर होकर अपने से यह पूछने को विवश हो जाते हैं कि किस शक्ति ने इन उदास और खोयी-खोयी आंखों में ऐसी ज्योति पैदा कर दी है? इन मुरझाये और सूखे गालों पर यह लाली कहां से आ गयी है? इस कोमल नाक-नक़्शे पर भावावेश क्यों झलक उठा है? किस कारण उसकी सांसें ऐसे तेजी से आ-जा रही हैं? किस चीज़ से इस बेचारी लड़की के चेहरे पर अचानक शक्ति, सजीवता और सुन्दरता छलक उठी है, किस कारण वह ऐसी मुस्कान से चमक उठा है, चमचमाती हंसी से जगमगा उठा है? हम इधर-उधर नज़र दौड़ाते हैं, किसी को ढूंढ़ते हैं, कारण का अनुमान लगाते हैं... मगर वह क्षण गुज़र जाता है और शायद अगले ही दिन हमें पहले की भांति फिर वही खोयी-खोयी, सोच में डूबी हुई आंखें, वही मुरझाया चेहरा और

चाल-ढाल में वही विनय, वही सहमापन, यहां तक कि क्षणिक सजीवता के लिये पश्चाताप, मृतप्राय वेदना और अवसाद के अवशेष भी दिखाई देते हैं... और हमें अफ़सोस होने लगता है कि यह क्षणिक सुन्दरता इतनी जल्दी मुरझा गई, कि इसे कभी लौटाया नहीं जा सकता, कि व्यर्थ और कपटपूर्ण ढंग से ही उसकी लौ चमकी – हमें इस बात का अफ़सोस होता है कि उससे तो प्यार करने का भी वक़्त नहीं मिला...

फिर भी मेरी रात मेरे दिन से बेहतर रही। यह ऐसे हुआ:

मैं बहुत देर से शहर में लौटा और जब मैं अपने घर के क़रीब पहुंचा तो रात के दस बज चुके थे। मेरा रास्ता नहर के किनारे-किनारे जाता था और रात को इतनी देर गये यहां किसी आदमी का नाम-निशान भी दिखाई नहीं देता। बात यह है कि मैं नगर के दूरस्थ भाग में रहता हूं। मैं चला जा रहा था और गुनगुना रहा था, क्योंकि जब मेरा दिल खुश होता है, तो मैं उस सुखी आदमी की भांति अवश्य कुछ न कुछ गुनगुनाने लगता हूं जिसके न तो मित्र और न ऐसे भले परिचित ही होते हैं, जिनके साथ वह अपनी खुशी बांट सके। अचानक मेरे साथ एक बिल्कुल अप्रत्याशित घटना घट गई।

नहर के जंगले का सहारा लिये, उस पर कुहनियां टिकाये हुए एक नारी रास्ते से ज़रा हटकर खड़ी थी। सम्भवतः वह नहर के गंदले पानी को बहुत ध्यान से देख रही थी। वह प्यारी-सी पीली टोपी और सुन्दर-सा काला लबादा पहने थी। "यह जवान और अवश्य ही श्यामकेशिनी है," मैंने सोचा। जब मैं सांस रोके और बहुत ज़ोर से धड़कते दिल के साथ उसके पास से गुज़रा, तो शायद उसने मेरे पैरों की आहट नहीं सुनी, वह हिली-डुली भी नहीं। "अजीब बात है!" मैंने सोचा। "शायद वह किसी ख़्याल में बहुत गहरी डूबी हुई है।" अचानक मैं जहां का तहां ठिठक कर रह गया। मुझे दबी-घुटी-सी सिसकी सुनाई दी। हां! मुझे भ्रम नहीं हुआ था – लड़की रो रही थी और रह-रह कर सिसक रही थी। हे भगवान! मेरा दिल बैठ गया। औरतों के मामले में मैं बेशक बहुत झेंपू हूं, मगर यह तो विशेष क्षण था!.. मैं लौटा, उसकी तरफ़ बढ़ा और अगर मुझे यह मालूम न होता कि कुलीनों

से सम्बन्धित रूसी उपन्यासों में हज़ारों बार "श्रीमती" सम्बोधन का उपयोग हो चुका है, तो मैंने अवश्य ही उसे इसी तरह सम्बोधित किया होता। इसी चीज़ ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया। मगर जब तक मैं उचित शब्द ढूंढ़ पाऊं, लड़की चौंकी, उसने अपने इर्दगिर्द नज़र डाली, सम्भली और नज़र झुकाये हुए मेरे पास से गुज़रकर तटबन्ध पर बढ़ चली। मैं उसी क्षण उसके पीछे-पीछे हो लिया, मगर यह अनुभव कर उसने सड़क पार की और पटरी पर चलने लगी। सड़क के उस ओर जाने की मेरी हिम्मत नहीं हुई। मेरा दिल जाल में फंसे पंछी की तरह ज़ोर से धड़क रहा था। इसी क्षण एक ऐसी बात हो गयी जिसने मुझे उबार लिया।

ख़ासी अच्छी उम्र का एक महाशय, जो अच्छा फ़ाक कोट पहने था, मगर जिसकी चाल-ढाल अच्छी नहीं कही जा सकती थी, अचानक मेरी उस अपरिचिता के क़रीब पटरी पर दिखाई दिया। वह लड़खड़ाता और सावधानी से दीवार का सहारा लेता हुआ चल रहा था। लड़की तो सहमी-सहमी और तनकर बहुत तेज़ी से चली जा रही थी, उन सभी लड़कियों की तरह जो यह नहीं चाहतीं कि रात के समय कोई उन्हें घर तक पहुंचाने के लिये अपने को पेश करे। यदि मेरा भाग्य इस लड़खड़ाते महाशय के दिमाग़ में असाधारण उपायों का सहारा लेने का विचार पैदा न कर देता तो, निश्चय ही, वह उस लड़की के क़रीब न पहुंच पाता। मेरा यह महाशय कुछ कहे-सुने बिना अचानक ही पूरे ज़ोर से भागने लगा और भागता हुआ मेरी इस अपरिचिता के निकट पहुंचने लगा। वह हवा की तरह तेज़ी से चल रही थी, मगर लड़खड़ाता हुआ महाशय उसके क़रीब होता जा रहा था, उसके बिल्कुल क़रीब जा पहुंचा और लड़की चिल्ला उठी... मैंने उस बढ़िया गांठदार छड़ी के लिये, जो इस वक़्त मेरे दायें हाथ में थी, अपने भाग्य को सराहा। मैं पलक झपकते में उस पटरी पर जा पहुंचा और पलक झपकते में ही वह बिन बुलाया मेहमान भी यह समझ गया कि क़िस्सा क्या है। उसने डंडे के अकाट्य तर्क को समझा, चुपचाप पीछे हट गया और जब हम दोनों काफ़ी आगे चले गये तो ख़ासे भारी-भरकम शब्दों में मुझे भला-बुरा कहने लगा। किन्तु उसके शब्द हमें बहुत कम ही सुनाई दिये।

"लाइये, अपना हाथ मुझे दे दीजिये," मैंने अपनी अपरिचिता

से कहा। "तब उसे हमारा पीछा करने की जुर्रत नहीं होगी।"

उसने चुपचाप अपना हाथ मेरी तरफ़ बढ़ा दिया, जो अभी तक डर और घबराहट के कारण कांप रहा था। ओ, बिन बुलाये श्रीमान! कितना आभारी था मैं तुम्हारा इस क्षण! मैंने लड़की पर उड़ती-सी नज़र डाली – वह बहुत ही प्यारी और श्यामांगिनी थी – मैंने ठीक ही भांपा था। उसकी काली बरौनियों पर कुछ ही क्षण पहले के भय या उससे भी पहले के दुःख के – मुझे यह मालूम नहीं – अश्रुकण चमक रहे थे। मगर होंठों पर मुस्कान खिल उठी थी। उसने भी कनखियों से मुझे देखा, तनिक शर्माई और नज़र नीची कर ली।

"देख रही हैं न, उस वक़्त आपको मुझसे कन्नी नहीं काटनी चाहिये थी। अगर मैं आपके पास होता, तो ऐसी कोई बात ही न होती..."

"मगर मैं तो आपको जानती नहीं थी। मैंने सोचा कि आप भी..."

"तो क्या अब आप मुझे जानती हैं?"

"कुछ-कुछ। मिसाल के तौर पर, यह बताइये कि आप इस तरह कांप क्यों रहे हैं?"

"ओह, तो आप फ़ौरन ही भांप गयीं!" मैंने इस बात से ख़ुश होते हुए उत्तर दिया कि मेरी यह सुन्दरी बहुत समझदार है। यह तो सोने में सुगन्धवाली बात है। "हां, आप फ़ौरन ही यह भांप गयीं कि किससे आपका वास्ता पड़ा है। यह सही है कि मैं औरतों से झेंपता हूं, मानता हूं कि इस समय मैं उतना ही घबरा रहा हूं, जितनी एक मिनट पहले आप घबरा रही थीं, जब उस महाशय ने आपको डरा दिया था... इस वक़्त मैं कुछ डरा हुआ हूं। यह तो सचमुच सपना है और मैंने तो सपने में भी यह कल्पना नहीं की थी कि कभी किसी नारी से बातचीत करूंगा।"

"यह आप क्या कह रहे हैं? यह सच है क्या?.."

"हां, अगर मेरा यह हाथ कांप रहा है, तो इसीलिये कि आपके इस हाथ जैसा छोटा और प्यारा-सा हाथ उसने कभी नहीं थामा। मैं औरतों की संगत का बिल्कुल आदी नहीं रहा; मेरा मतलब यह कि मैं कभी उसका आदी हुआ ही नहीं था। मैं तो एकदम एकाकी

हूं। मैं तो यह भी नहीं जानता कि उनसे बातचीत कैसे करूं। अब भी यह नहीं जानता कि आपसे कोई बेहूदा बात तो नहीं कह बैठा? आप मुझे साफ़-साफ़ बता दीजिये। आपको यक़ीन दिलाता हूं कि मेरा बुरा मानने का स्वभाव नहीं है..."

"नहीं, नहीं, ऐसा कुछ नहीं है, बल्कि बात इसके उलट है। पर यदि आप साफ़गोई ही चाहते हैं, तो मैं कहूंगी कि नारियों को ऐसी झेंप अच्छी लगती है। अगर आप इससे भी अधिक कुछ जानना चाहते हैं, तो कहूंगी कि मुझे भी यह पसन्द है और घर पहुंचने तक मैं आपको खदेड़ूंगी नहीं।"

"आप आन की आन में मेरी झेंप दूर कर देंगी," मैंने खुशी से हांफते हुए कहना शुरू किया, "और तब – अलविदा मेरे सारे साधन..."

"साधन? कैसे साधन, क्या मतलब है आपका? अब यह भोंडी बात है।"

"क्षमा चाहता हूं, फिर कभी ऐसी बात नहीं कहूंगा, मेरी जबान से निकल गयी। मगर आप यह कैसे चाहती हैं कि ऐसे क्षण में यह इच्छा न पैदा हो कि..."

"आप पसन्द आयें?"

"हां, हां। दया कीजिये, भगवान के लिये मुझ पर दया कीजिये। आप ख़ुद ही तो सोचिये कि मैं क्या हूं। मैं छब्बीस साल का हो चुका हूं और आज तक कभी किसी नारी से मिला-जुला नहीं। तो कैसे मैं अच्छे ढंग से, ख़ूबसूरती से और ढंग की बात कर सकता हूं? अगर मैं खुलकर, साफ़-साफ़ सब कुछ कह दूंगा, तो आप ही के लिये तो अच्छा रहेगा... जब मेरा दिल कुछ कहने को हुलस रहा हो, तो मैं चुप नहीं रह सकता। पर, ख़ैर जो भी हो... आप विश्वास करेंगी, किसी एक भी औरत से मेरा कभी वास्ता नहीं पड़ा! किसी से परिचय तक भी नहीं? बस, हर दिन यह सपना ही देखता रहता हूं कि आखिर कभी तो किसी न किसी से मुलाक़ात होगी। और, काश आप यह जान सकतीं कि इस तरह कितनी बार मुझे प्यार हुआ है!.."

"मगर कैसे, किससे?.."

"किसी से नहीं, आदर्श से, उससे जो मुझे सपने में दिखाई

देती है। मैं कल्पना में पूरे के पूरे उपन्यास गढ़ लेता हूं। ओह, आप मुझे नहीं जानतीं! हां, यह सही है कि दो-तीन नारियों से मेरी मुलाक़ात हो चुकी है, मगर वे भी कोई नारियां थीं? वे सभी ऐसी घरेलू थीं कि... पर यदि मैं आपको यह बताऊं तो आप हंस पड़ेंगी कि कई बार मैंने सड़क पर ऐसे ही किसी रईसज़ादी से बात करने की सोची है। जाहिर है कि जब वह अकेली हो। हां, सो भी सहमे-सहमे, आदर से, भावनाओं के साथ। मैं उससे कहूंगा कि अकेला मरा जा रहा हूं, कि वह मुझे दुतकारे नहीं, कि किसी भी औरत से जान-पहचान करने का मेरे पास कोई उपाय नहीं है। मैं उसे समझाऊंगा कि यह तो नारी का कर्त्तव्य भी है कि वह मुझ जैसे बदक़िस्मत आदमी की ऐसी सहमी-सी प्रार्थना को न ठुकराये। यों भी, आख़िर मैं उससे इतना ही तो चाहूंगा कि वह मुझे भाई मानते हुए सहानुभूति के दो शब्द कह दे, पास आते ही मुझे खदेड़ न दे, मेरे शब्दों पर विश्वास करे, मैं जो कहूं उसे सुन ले, इच्छा होने पर मेरी हंसी उड़ा ले, मुझे आशा दिलाये, मुझसे दो शब्द, केवल दो शब्द कह दे और फिर चाहे कभी भी हमारी मुलाक़ात न हो!.. अरे, आप हंस रही हैं... पर ख़ैर, मैं इसीलिये तो आपको यह सब कुछ बता रहा हूं..."

"बुरा नहीं मानिये! मैं इसलिये हंस रही हूं कि आप तो ख़ुद ही अपने दुश्मन हैं। अगर आपने कोशिश की होती, तो सफल हो ही जाते, बेशक सड़क पर ही ऐसा होता, मामला जितना सीधा-सादा होता, उतना ही अच्छा रहता... कोई भी दयालु औरत, अगर वह बुद्धू न होती या उस क्षण किसी ख़ास वजह से बहुत झल्लायी हुई न होती, तो उन दो शब्दों को कहे बिना, जिन्हें आप ऐसे सहमे-सहमे ढंग से सुनना चाहते हैं, कभी आपको भगा देने की ज़ुर्रत न करती... मगर मैं यह क्या कह रही हूं! निश्चय ही उसने आपको पागल समझा होता। मैंने तो अपने को ध्यान में रखते हुए ऐसा कहा है। ख़ुद ही मैं कौन बहुत अधिक जानती हूं इस दुनिया के लोगों के रंग-ढंग को!"

"ओह, बहुत आभारी हूं मैं आपका," मैं चिल्ला उठा। "आप नहीं जानतीं कि आपने मेरे लिये क्या किया है!"

"रहने दीजिये, रहने दीजिये! मगर यह बताइये कि आपने

यह कैसे जान लिया कि मैं ही ऐसी नारी हूं जिसके साथ ... मेरा मतलब, जिसे आपने ध्यान देने और अपनी मैत्री के योग्य समझा ... थोड़े में, जो आपके मुताबिक़ घरेलू नहीं है। आपने मुझसे बात करने का क्यों निर्णय किया ?"

"क्यों ? क्यों ? मगर आप तो अकेली थीं, वह महाशय हद से आगे बढ़ गया था, रात का वक़्त ठहरा ; आपको यह मानना होगा कि ऐसे क्षण में तो आदमी का ऐसा कर्त्तव्य ही हो जाता है ..."

"नहीं, नहीं, मैं इसके पहले की बात कर रही हूं, तब की, जब आप सड़क के उस ओर थे। आप तो तभी मेरे पास आना चाहते थे न ?"

"वहां, सड़क के उस ओर ? मगर मैं, मैं वास्तव में ही यह नहीं जानता कि इसका कैसे जवाब दूं। मुझे डर लगता है कि ... आपसे कहूं कि आज मैं बहुत रंग में था, मैं चला जा रहा था, गा रहा था। मैं आज शहर के बाहर होकर आया था ; ऐसे खुशी के क्षण मैंने पहले कभी अनुभव नहीं किये थे। आप ... हो सकता है कि मुझे ऐसा लगा ही हो ... मैं माफ़ी चाहूंगा, मगर मैं आपको याद दिला दूं—मुझे लगा कि आप रो रही हैं और मैं ... मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सका ... मेरे दिल को कुछ होने लगा ... हे भगवान ! तो क्या मुझे आपके लिये पीड़ा नहीं हो सकती थी ? तो क्या आपके प्रति भाई जैसी वेदना अनुभव करना पाप था ?.. संवेदना कहने के लिये मुझे क्षमा कीजिये ... मतलब यह कि अगर मेरे मन ने बरबस आपके पास आना चाहा था तो क्या आप इससे नाराज़ हो सकती थीं ?.."

"बस, बस, रहने दीजिये, और कुछ नहीं कहियेगा ..." लड़की ने नज़र झुकाये और मेरा हाथ दबाते हुए कहा। "मैं खुद दोषी हूं कि मैंने इसकी चर्चा शुरू की। मगर मैं खुश हूं कि आपके बारे में मुझसे भूल नहीं हुई ... तो लीजिये मेरा घर आ गया। मुझे यहां, इस कूचे में जाना है, बस, कुछ ही क़दम और ... तो विदा, बहुत धन्यवाद ..."

"तो क्या, तो क्या हम फिर कभी नहीं मिलेंगे ?.. तो क्या यही अन्त है ?"

"देखिये न," लड़की ने हंसते हुए कहा। "शुरू में आप सिर्फ़

दो शब्द सुनना चाहते थे और अब ... पर ख़ैर मैं आपसे कुछ नहीं कहूंगी ... शायद हम फिर मिलें ..."

"मैं कल यहां आऊंगा," मैंने कहा। "ओह, माफ़ कीजियेगा, मैं तो आपसे मांग करने लगा हूं ..."

"हां, आप बहुत जल्दबाज़ हैं ... आप तो लगभग मांग कर रहे हैं ..."

"सुनिये, कृपया सुनिये तो !" मैंने उसे रोका, "अगर मैं फिर आपसे कोई ऐसी-वैसी बात कह दूं, तो मुझे क्षमा कीजियेगा ... तो बात यह है कि मैं कल यहां आये बिना रह ही नहीं सकता। मैं सपनों की दुनिया में रहता हूं। मेरा वास्तविक जीवन इतना कम है कि मेरे लिये ऐसे, इस वक़्त जैसे क्षण इतने दुर्लभ हैं कि मैं उन्हें अपनी कल्पना में दोहराये बिना नहीं रह सकता। मैं रात भर, हफ़्ते भर, साल भर आपके ही सपने देखता रहूंगा। मैं अवश्य ही कल यहां, यहीं, इसी जगह, इसी वक़्त आऊंगा और आज का स्मरण करके खुशी महसूस करूंगा। यह जगह मुझे प्रिय हो गयी है। पीटर्स-बर्ग में मेरे लिये ऐसी दो-तीन जगहें हैं। एक बार तो मैं यादों के कारण आपकी तरह रो भी पड़ा था ... कौन जाने, दस मिनट पहले शायद आप भी स्मृतियों के कारण ही रो रही थीं ... मगर माफ़ कीजिये, मैं फिर बहक गया हूं। शायद इस जगह आप कभी बहुत ही भाग्यशाली रही होंगी ..."

"अच्छी बात है," लड़की बोली। "सम्भवतः मैं कल यहां, दस बजे ही आऊंगी। देख रही हूं कि मैं आपको मना नहीं कर सकती ... बात यह है कि मुझे यहां आना ही है। यह मत समझियेगा कि मैं आपको प्रेम-मिलन के लिये बुला रही हूं। मैं आपको चेतावनी देती हूं कि मुझे अपने लिये ही यहां आना है। समझे न ... तो मैं आपसे साफ़-साफ़ कह देती हूं कि अगर आप भी यहां आयेंगे, तो इसमें कोई बुराई नहीं होगी। पहली बात तो यह है कि आज जैसी ही फिर कोई बुरी घटना हो सकती है, मगर ख़ैर, बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं है ... थोड़े में, मैं आपसे महज़ मिलना चाहती हूं ... ताकि आपको दो शब्द कह सकूं। मगर इससे मेरे बारे में आप ग़लत धारणा तो नहीं बना लेंगे ? यह मत समझियेगा कि मैं ऐसे आसानी से लोगों से मिलने को तैयार हो जाती हूं ... मैं आपसे भी न मिलती

अगर ... पर खैर, इसे मेरा राज़ ही रहने दीजिये! लेकिन एक शर्त है ..."

"शर्त! बोलिये, कहिये, सब कुछ पहले से ही कह दीजिये। मैं हर चीज़ के लिये तैयार हूं, सब कुछ करने को राज़ी हूं," मैं खुशी से चिल्ला उठा। "अपने बारे में मैं आपको पूरा यक़ीन दिलाता हूं–आपकी हर बात मानूंगा, आपकी इज़्ज़त करूंगा ... आप तो मुझे जानती ही है ..."

"जानती हूं, इसीलिये तो आपको कल आने को कह रही हूं," लड़की ने हंसते हुए कहा। "बहुत अच्छी तरह से जानती हूं आपको। मगर देखिये एक शर्त पर आइयेगा। मैं आपसे जो अनुरोध करूंगी उसे पूरा करने की कृपा कीजियेगा – (मैं आपसे सब कुछ साफ़-साफ़ कहे दे रही हूं), सब से पहले तो यह कि मुझे प्यार नहीं कर बैठियेगा ... आपको विश्वास दिलाती हूं कि ऐसा हरगिज़ नहीं करना चाहिये। दोस्त बनने को मैं तैयार हूं, यह लीजिये मेरा हाथ ... मगर प्यार नहीं कीजियेगा, मैं आपकी मिन्नत करती हूं!"

"मैं क़सम खाता हूं!" उसका हाथ थामते हुए मैं चिल्ला उठा ...

"बस, बस, क़सम नहीं खाइये। मैं तो जानती हूं कि आप बारूद की तरह फट सकते हैं। मेरे इन शब्दों का बुरा नहीं मानियेगा। काश, आपको यह मालूम होता ... मेरा भी तो कोई ऐसा नहीं है जिससे मैं अपने दिल की बात कह सकूं, जिससे सलाह ले सकूं। ज़ाहिर है कि सड़क पर तो सलाह देनेवाले खोजे नहीं जाते। हां, आपकी बात दूसरी है। मैं आपको ऐसे जानती हूं मानो हम बीस साल से दोस्त हों ... आप बेवफ़ाई तो नहीं करेंगे न?.."

"आप खुद ही देख लेंगी ... नहीं जानता कि इन बीच के चौबीस घण्टों तक कैसे ज़िन्दा रहूंगा।"

"खूब गहरी नींद सोइये। शुभरात्रि – और यह याद रखियेगा कि मैं आप पर विश्वास करती हूं। अभी, कुछ ही देर पहले आपने कितना ठीक कहा था – क्या हर भावना, यहां तक कि भाई जैसी संवेदना की सफ़ाई देना भी ज़रूरी होता है! जानते हैं इतनी अच्छी बात कही थी यह आपने कि मेरे दिमाग़ में उसी वक़्त आपको अपना राज़दान बनाने का ख्याल आया था ..."

"किस राज़ का? भगवान के लिये कहिये तो?"

"कल। फिलहाल इसे मेरा राज़ ही रहने दीजिये। आपके लिये तो यह बेहतर ही रहेगा – कम से कम दूर से तो रोमांस जैसा प्रतीत होगा। शायद मैं कल ही आपसे यह राज़ कह दूं, शायद न कहूं ... इसके पहले मैं आपसे अभी और कुछ बातचीत करना चाहूंगी, हम एक-दूसरे को और अधिक अच्छी तरह जान जायेंगे ..."

"अरे हां, मैं आपको अपने बारे में कल ही सब कुछ बता दूंगा! मगर यह क्या है? मेरे साथ तो जैसे कोई चमत्कार हो रहा है ... कहां हूं मैं, मेरे भगवान? कहिये तो क्या आप इस बात से दुःखी हैं कि मुझसे नाराज नहीं हुई, जैसे कि किसी दूसरी ने किया होता, कि मुझे शुरू में ही दूर नहीं भगाया? केवल दो मिनट, और आपने मुझे सदा-सदा के लिये भाग्यशाली बना दिया। हां, हां, भाग्यशाली! कौन जाने, शायद आपने खुद मेरे साथ ही मेरी सुलह करा दी हो, मेरे सन्देहों को दूर कर दिया हो ... हो सकता है कि मुझ पर ऐसे क्षण आते हों ... हां, हां, मैं कल आपको सब कुछ बता दूंगा, आप सब कुछ जान जायेंगी ..."

"अच्छी बात है, तो ऐसा ही सही, आप ही शुरू करेंगे अपनी कहानी ..."

"मुझे मंज़ूर है।"

"नमस्ते!"

"नमस्ते!"

हम विदा हुए। मैं रात भर घूमता ही रहा, घर लौटने की हिम्मत ही नहीं कर सका। मैं इतना अधिक खुश था ... अगले दिन तक!

दूसरी रात

"तो लीजिये, ज़िन्दा रह गये!" लड़की ने मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर हंसते हुए कहा।

"मैं तो दो घण्टे से यहां हूं। आप नहीं जानतीं कि दिन भर मेरी क्या हालत रही!"



"जानती हूं, जानती हूं ... तो काम की बात हो जाये! जानते हैं कि मैं यहां क्यों आई हूं? कल की तरह फ़जूल की बातें करने नहीं। तो सुनिये – आगे हमें समझदारी से काम लेना चाहिये। मैं इन सभी चीज़ों के बारे में कल देर तक सोचती रही।"

"किस चीज़, किस चीज़ के बारे में समझदारी से काम लेना चाहिये? अपनी ओर से मैं इसके लिये तैयार हूं। मगर सच यह है कि मेरे जीवन में तो अब से अधिक समझदारी की कभी कोई बात हुई ही नहीं।"

"सच? सबसे पहले तो मैं यह अनुरोध करती हूं कि मेरे हाथों को ऐसे नहीं दबाइये। दूसरे, मैं आपको यह बताना चाहती हूं कि आपके बारे में आज मैंने बहुत देर तक सोचा।"

"और किस नतीजे पर पहुंचीं?"

"किस नतीजे पर? इस नतीजे पर कि सब कुछ फिर से शुरू करना चाहिये, क्योंकि सभी बातों का मैंने आज यह नतीजा निकाला कि अभी मैं आपको बिल्कुल नहीं जानती हूं, कि कल मैंने एक बच्ची जैसा, एक छोकरी का सा व्यवहार किया। स्पष्टतः मैं इस निष्कर्ष पर पहुंची कि मेरा दयालु हृदय ही इसके लिए दोषी है। यों कहना चाहिए कि मैंने अपनी ही प्रशंसा की, जैसा कि हमेशा ही उस समय होता है, जब हम अपना विश्लेषण करने लगते हैं। तो अपनी भूल सुधारने के लिए मैंने आपके बारे में अधिक से अधिक जानने का निर्णय किया है। पर चूंकि और किसी से आपके बारे में जानकारी नहीं मिल सकती, तो आप ही को मुझे सब कुछ, अपनी गुप्त से गुप्त बातें बतानी चाहिए। तो, आप किस तरह के व्यक्ति हैं? जल्दी कीजिये – शुरू कीजिये, अपनी सारी कहानी सुनाइये।"

"कहानी!" मैं घबराकर चिल्ला उठा। "कहानी! किसने आपसे यह कहा कि मेरी कोई कहानी है? मेरी कोई कहानी नहीं है ..."

"कहानी नहीं है, तो आपने ज़िंदगी कैसे गुज़ारी?" उसने हंसते हुए मेरी बात काटी।

"किसी भी तरह की कहानी के बिना! कैसे जिया हूं, जैसे कि कहा जाता है – अपने तक ही, यानी एकदम एकाकी – एकाकी,

सी तरह एकाकी – आप एकाकी होने का मतलब समझती हैं ?"

"एकाकी, कैसे एकाकी ? आपका मतलब है कि आप कभी किसी से मिलते-जुलते नहीं ?"

"ओह, नहीं, मिलता-जुलता तो हूं, मगर फिर भी मैं एकाकी हूं।"

"तो क्या, क्या आप कभी किसी से बातचीत नहीं करते ?"

"अगर बिल्कुल सही-सही कहा जाये, तो नहीं।"

"आप हैं कौन, यह स्पष्ट कीजिये ! ज़रा रुकिये, लगता है कि मैं आपके बारे में कुछ-कुछ भांप रही हूं। सम्भवतः मेरी भांति आपकी भी नानी है। वह अंधी है, एक ज़माने से मुझे कहीं भी नहीं जाने देती और इसलिए मैं बातचीत करना बिल्कुल भूल गयी हूं। दो साल पहले, जब मैं एक बार शरारत कर बैठी थी, तो उसने समझ लिया था कि मैं हाथ से निकल गयी। उसने मुझे अपने पास बुलाया और सेफ्टी पिन से मेरा फ़्राक अपने फ़्राक के साथ जोड़ दिया। तब से हम दिन भर ऐसे ही बैठी रहती हैं। वह बेशक अंधी है, फिर भी मोज़े बुनती रहती है और मुझे उसके पास बैठे रहकर या तो सिलाई करनी पड़ती है या उसे किताब पढ़ कर सुनानी होती है। कैसी अजीब-सी बात है यह – दो साल से ऐसे पिन से मुझे अपने साथ जोड़ कर बिठा रखा है उसने ..."

"हे भगवान ! यह तो बड़ी बदक़िस्मती है ! हां, पर मेरी तो ऐसी नानी नहीं है !"

"अगर नानी नहीं है, तो फिर आप क्यों घर में बैठे रहते हैं ?.."

"सुनिये, आप यह जानना चाहती हैं कि मैं कौन हूं ?"

"हां, हां !"

"बिल्कुल ठीक-ठीक ?"

"बिल्कुल ठीक-ठीक !"

"अच्छी बात है ! मैं – मैं अपने ढंग का एक व्यक्ति हूं।"

"अपने ढंग का ? किस ढंग का ?" लड़की ठहाका मार कर ऐसे चिल्ला उठी मानो उसे साल भर से हंसने का मौक़ा ही न मिला हो। "हां, आप ख़ूब मज़ेदार आदमी हैं ! देखिये, यहां यह बेंच है, आइये हम इस पर बैठ जायें ! यहां कभी कोई नहीं आता, कोई भी हमारी बातचीत नहीं सुनेगा और – आप अपनी कहानी

सुनाना शुरू कीजिये ! आप मुझे यह तो यक़ीन नहीं दिला सकेंगे कि आपकी कोई कहानी नहीं है। आपकी कहानी तो ज़रूर है, पर आप उसे छिपा रहे हैं। सबसे पहले तो यह बताइये कि अपने ढंग का आदमी क्या होता है ?"

"अपने ढंग का ? अपने ढंग का आदमी, वह अजीब-सा, वह बड़ा हास्यास्पद आदमी होता है !" उसकी बच्चों जैसी हंसी का साथ देते हुए मैं ख़ुद भी ज़ोर से हंस दिया। "यह तो इस तरह का मिज़ाज होता है। सुनिये – आप यह जानती हैं कि स्वप्नदर्शी क्या होता है ?"

"स्वप्नदर्शी ! अजी वाह, यह कौन नहीं जानता ? मैं ख़ुद भी स्वप्नदर्शी हूं ! नानी के पास बैठे-बैठे कैसे-कैसे ख़्याल मेरे दिमाग़ में नहीं आते ! तब मैं सपने देखने लगती हूं और यह तक कल्पना कर लेती हूं कि चीनी राजकुमार से मेरी शादी हो गई है... कभी-कभी सपने देखना भी अच्छा होता है ! मगर शायद नहीं, भगवान ही जाने ! ख़ास तौर पर तब, जब इसके सिवा कुछ और भी सोचने को हो," लड़की ने गम्भीरतापूर्वक इतना और जोड़ दिया।

"बहुत ख़ूब ! अगर आप चीनी राजकुमार के साथ अपनी शादी का सपना देख चुकी हैं, तो अवश्य ही मुझे समझ जायेंगी। मगर सुनिये तो – अरे हां, मैं तो अभी तक आपका नाम भी नहीं जानता।"

"यह भी अच्छी रही ! बहुत जल्द ख़्याल आया इसका आपको !"

"हे भगवान ! मैं इतना ख़ुश था कि यह बात ही दिमाग़ में नहीं आई ..."

"मेरा नाम नास्तेन्का है।"

"नास्तेन्का ! बस, इतना ही ?"

"इतना ही ! आपके लिए क्या इतना कम है, लालची कहीं के !"

"कम है ? इसके उलट, बहुत है, बहुत ही ज़्यादा है। नास्तेन्का, आप अगर मुझे पहली ही बार से कुलनाम के बिना, केवल नास्तेन्का कहने की अनुमति दे रही हैं, तो निश्चय ही आप बहुत दयालु लड़की हैं।"

"सो तो हूं ही ! तो आगे कहते जाइये !"

"लीजिये, सुनिये, नास्तेन्का, कैसी अजीब कहानी है यह !"

मैं उसकी बगल में बैठ गया, मैंने धीर-गम्भीर सूरत बना ली और ऐसे बोलना शुरू किया मानो लिखा हुआ पढ़कर सुना रहा हूं :

"नास्तेन्का, पीटर्सबर्ग में, शायद आप उन्हें न जानती हों, मगर काफ़ी अजीब-से कोने हैं। इन जगहों पर मानो वह सूरज नहीं चमकता जो पीटर्सबर्ग के अन्य सभी लोगों के लिए चमकता है। वहां तो कोई दूसरा, नया ही सूरज चमका करता है जो मानो इन कोनों के लिए ख़ास तौर पर आर्डर देकर बनवाया गया है और उसकी रोशनी भी दूसरी ही, ख़ास क़िस्म की होती है। प्यारी नास्तेन्का, इन कोनों में मानो बिल्कुल दूसरी ही क़िस्म की ज़िंदगी है, उससे एकदम भिन्न, जो हमारे आसपास रेल-पेल कर रही है। ऐसी ज़िंदगी, जो किसी काल्पनिक, अनदेखे-अनजाने राज्य में हो सकती है, मगर हमारी दुनिया में, हमारे गम्भीर, अति गम्भीर समय में नहीं हो सकती। यही ज़िन्दगी तो कोरी कल्पना, अत्यधिक आदर्श और साथ ही, (ओह, नास्तेन्का!) बेहद घटियापन की तो चर्चा ही क्या की जाये, बेरंग नीरसता और साधारणता की अजीब खिचड़ी-सी है।"

"छी! हे भगवान! कैसी भूमिका है यह! जाने क्या सुनने जा रही हूं मैं?"

"आप सुनेंगी, नास्तेन्का, (लगता है कि मैं नास्तेन्का कहते-कहते कभी नहीं थकूंगा), आप सुनेंगी कि इन कोनों में अजीब-से लोग – स्वप्नदर्शी रहते हैं। स्वप्नदर्शी – अगर उसकी सही-वही परिभाषा आवश्यक हो – तो वह आदमी नहीं, बल्कि नपुंसक लिंग का एक प्राणी होता है। वह अक्सर किसी अगम्य कोने में रहता है, मानो दिन की रोशनी से भी छिपता हो। एक बार वहां घुसने पर वह घोंघे की तरह अपने खोल में ही छिपा रहता है या फिर इस दृष्टि से वह कम से कम उस विख्यात जन्तु से बहुत मिलता-जुलता है, जो जन्तु भी होता है और घर भी और जिसे कछुआ कहते हैं। क्या ख़्याल है आपका, क्यों वह अपनी चारदीवारी को, जो अवश्य ही हरे रंग की, कालिख पुती, भोंड़ी और सिगरेट के धुएं से बुरी तरह भरी होती है, प्यार करता है? इस अजीब महाशय के इने-गिने परिचितों में से (अन्त में उसका कोई परिचित भी नहीं रहता) जब कोई उससे मिलने आता है तो क्यों परेशानी

से उसके चेहरे का रंग उड़ जाता है, क्यों वह ऐसे घबराकर उससे मिलता है मानो उसने अपनी चारदीवारी में अभी-अभी कोई अपराध किया हो, मानो जाली नोट बनाये हों या वह कविता रची हो जिसे बेनाम ख़त के साथ किसी पत्रिका को भेजनेवाला हो और ख़त में यह कहा गया हो कि कवि की तो मृत्यु हो चुकी है, किन्तु मैं, उसका मित्र, उसकी कविता को छपवाना अपना पावन कर्त्तव्य मानता हूं? बताइये तो, नास्तेन्का, क्यों इन दोनों के बीच ढंग से बातचीत नहीं हो पाती? अचानक आने और उलझन में पड़ जानेवाला यह मित्र हंसता क्यों नहीं, कोई फब्ती क्यों नहीं कसता, जब कि किसी दूसरे वातावरण में हंसना, चुटकियां लेना, सुन्दरियों और अन्य दिलचस्प विषयों की चर्चा करना उसे बहुत पसन्द है? आख़िर क्यों यह दोस्त, जो सम्भवतः कुछ ही समय पहले का परिचित है, क्यों पहली बार यहां आने पर ही – क्योंकि ऐसी स्थिति में दूसरी बार वह कभी आयेगा ही नहीं – अपने मेज़बान के चेहरे पर परेशानी का भाव देखकर, ख़ुद यह दोस्त ही क्यों परेशान उठा है, अपनी तमाम हाज़िरदिमाग़ी के बावजूद (अगर उसमें वह है) क्यों, उसकी ज़बान को काठ मार गया है? दूसरी तरफ़ मेज़बान ख़ुद यह दिखाने की ज़ोरदार, मगर नाकाम कोशिश के बाद कि वह भी सभा-सोसाइटी के तौर-तरीके जानता है, कि उसे भी सुन्दरियों की चर्चा पसन्द है, क्यों बिल्कुल हतप्रभ-सा हो गया है और केवल आदरभाव दिखाते हुए ही अपने यहां भूलकर आ जानेवाले इस भले आदमी को ख़ुश करने की कोशिश करता है? आख़िर क्यों यह मेहमान अचानक कोई बहुत ही ज़रूरी, किन्तु वास्तव में अस्तित्वहीन काम की याद करके अपना टोप झपट लेता है और अपने मेज़बान द्वारा कसकर पकड़े हुए हाथों को, जो इस तरह अपना अफ़सोस ज़ाहिर करता है और स्थिति को सुधारना चाहता है, जैसे-तैसे छुड़ाकर बाहर भागने की कोशिश करता है? क्यों यह दोस्त दरवाज़े से बाहर निकलते ही ठहाका मार कर हंसता है और इसी क्षण यह क़सम खाता है कि फिर कभी इस अजीब आदमी के पास नहीं आयेगा, यद्यपि यह अजीब आदमी दरअसल है बहुत ही प्यारा? पर साथ ही वह अपनी कल्पना को थोड़ी-सी उड़ान भरने यानी बातचीत के सारे समय के दौरान मेज़बान की जैसी सूरत थी,

उसकी उस बिल्ली के दुःखी बच्चे के साथ तुलना करने से नहीं रोक सकता, जिसे बच्चों ने छल-कपट से पकड़कर खूब सताया, डराया और मारा-पीटा हो और जो बेहद परेशान होकर उनसे बचने के लिये कुर्सी के नीचे अंधेरे में जा दुबका हो तथा वहां रोंगटे खड़े किये तथा फूं-फूं करते हुए घण्टे भर तक दोनों पंजों से अपने छोटे-से दुःखी चेहरे को सहलाने-संवारने को विवश होता है और फिर अरसे तक प्रकृति और दुनिया, यहां तक कि उन टुकड़ों को भी, जिन्हें दयालु नौकरानी स्वामी की जूठन से उसके लिये बचा रखती है, शत्रुतापूर्वक देखता है?"

"सुनिये तो," नास्तेन्का ने, जो अभी तक हैरानी से आंखें फाड़े और मुंह बाये मेरी बातें सुनती रही थी, मुझे टोका। "सुनिये तो, मैं बिल्कुल यह नहीं जानती कि यह सब क्यों हुआ और किस-लिये आप मुझसे ऐसे अजीब-अजीब प्रश्न पूछ रहे हैं। मगर शायद जो मैं जानती हूं, वह यह है कि शुरू से अन्त तक ये सभी घटनायें आपके साथ घटी हैं।"

"निश्चय ही," मैंने बहुत गम्भीर मुद्रा बनाकर उत्तर दिया।

"अगर ऐसा ही है तो कहते जाइये," नास्तेन्का बोली, "क्यों-कि मैं इनका अन्त जानने को बहुत उत्सुक हूं।"

"आप यह जानना चाहती हैं, नास्तेन्का, कि हमारा नायक, या फिर यह कहना बेहतर होगा कि मैं, क्योंकि इन सभी घटनाओं का नायक मैं खुद, मेरा साधारण-सा व्यक्तित्व ही था, अपने उस कोने में ऐसा क्या कर रहा था? आप यह जानना चाहती हैं कि अपने मित्र के अप्रत्याशित आगमन से मैं ऐसे बेहद परेशान क्यों उठा और दिन भर को अपना सन्तुलन क्यों खो बैठा? आप यह जानना चाहती हैं कि जब मेरे कमरे का दरवाज़ा खुला तो मैं ऐसे चौंक क्यों पड़ा, ऐसे झेंप क्यों गया, अपने मेहमान का स्वागत क्यों नहीं कर पाया और अपने आतिथ्यसत्कार के बोझ तले ही ऐसे लज्जापूर्ण ढंग से दब क्यों गया?"

"हां, हां!" नास्तेन्का ने उत्तर दिया, "मैं यही जानना चाहती हूं। सुनिये, आप बहुत ही बढ़िया ढंग से यह सब सुना रहे हैं, मगर क्या कुछ कम बढ़िया ढंग से ऐसा करना मुमकिन नहीं? आप तो ऐसे बोलते हैं मानो किताब पढ़कर सुना रहे हों।"

"नास्तेन्का!" अपनी आवाज़ को रोबीली और कठोर बनाते और बड़ी मुश्किल से हंसी रोकते हुए मैंने कहा, "प्यारी नास्तेन्का, मैं जानता हूं कि मैं बहुत बढ़िया ढंग से अपनी कहानी कहता हूं, मगर अफ़सोस है कि दूसरा ढंग जानता ही नहीं। इस वक़्त, प्यारी नास्तेन्का, इस वक़्त मैं अपने को बादशाह सोलोमोन की उस रूह के समान अनुभव कर रहा हूं जिसे हज़ार साल तक सात ताले लगाकर बन्द रखा गया है और आखिर जिसके ये सातों ताले खोल दिये गये हैं। अब, प्यारी नास्तेन्का, जब हम इतनी लम्बी जुदाई के बाद फिर से मिले हैं – क्योंकि मैं आपको बहुत अरसे से जानता था, नास्तेन्का, क्योंकि मैं बहुत अरसे से किसी की खोज में था और यह इस बात का संकेत है कि मैं आप ही को खोज रहा था और यह कि अब हमें मिलना ही था – तो अब मेरे मस्तिष्क के हज़ारों द्वार खुल गये हैं और मैं शब्दों की नदी बहाने के लिये मजबूर हूं वरना मेरा दम घुट जायेगा। इसलिये मैं आपसे अनुरोध करता हूं, नास्तेन्का, कि मुझे रोके-टोके बिना चुपचाप और ध्यान से मेरी बातें सुनती जाइये, नहीं तो मैं चुप हो जाऊंगा।"

"नहीं, नहीं! हरगिज़ नहीं! कहते जाइये! मैं अब एक भी शब्द ज़बान से नहीं निकालूंगी।"

"तो मैं अपनी बात जारी रखता हूं। मेरी दोस्त नास्तेन्का, मेरे दिन में एक ऐसा घण्टा है, जिसे मैं बहुत प्यार करता हूं। यह वही घण्टा है जब सब लोगों के लगभग सभी काम-काज, सभी ज़िम्मेदारियां और कर्त्तव्य खत्म हो जाते हैं और सभी खाना खाने तथा कुछ देर आराम करने के लिये घर की तरफ़ जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाते हैं और रास्ते में ही शाम, रात तथा फ़ुरसत के बाक़ी वक़्त के लिये दिलचस्प योजनायें बनाते हैं। इसी वक़्त हमारा नायक – नास्तेन्का, कृपया मुझे तृतीय पुरुष में ही अपनी कहानी कहने की अनुमति दीजिये, क्योंकि प्रथम पुरुष में इसे सुनाते हुए मुझे बेहद शर्म आयेगी – तो इसी समय हमारा नायक भी, जो दिन भर निठ-ल्ला नहीं रहा है, औरों के साथ-साथ चल रहा है। मगर उसका पीला, कुछ-कुछ मुरझाया चेहरा, खुशी के एक अजीब-से भाव से चमक रहा है। वह पीटर्सबर्ग के ठण्डे आकाश में डूबते सूर्य की ला-लिमा को भी उदासीनता से नहीं देखता है। जब मैं कहता हूं कि

देखता है, तो झूठ बोलता हूं। वह देखता नहीं, बल्कि खोया-खोया-सा किसी बात का चिन्तन करता है, मानो थका हुआ और साथ ही किसी दूसरे, अधिक दिलचस्प विषय में डूबा हुआ है और इसलिये अपने इर्दगिर्द की दुनिया पर लगभग अनिच्छापूर्वक एक उड़ती-सी नज़र ही डाल सकता है। वह खुश है, क्योंकि कल तक के लिये उसके यातनापूर्ण धन्धे खत्म हो गये हैं। वह खुश है उस स्कूली बालक की तरह जिसे अपने मनपसन्द खेल खेलने और मौज करने की छुट्टी दे दी गयी है। कनखियों से उस पर नज़र डालिये तो, नास्तेन्का, आप फ़ौरन देखेंगी कि खुशी के भाव ने उसकी कमज़ोर स्नायुओं और रोगग्रस्त, झल्लायी हुई कल्पना को प्रभावित भी कर दिया है। लीजिये, वह सोच में डूब गया... आपका ख्याल है कि खाने के बारे में? आज की शाम के बारे में? वह किसे इस तरह ताक रहा है? इस ठाठदार श्रीमान को जिसने अपने पास से गुज़रनेवाली तेज़ घोड़ों की बढ़िया बग्घी में बैठी महिला को बड़े अन्दाज़ से सिर झुकाया है? नहीं, नास्तेन्का, उसके लिये अब इन छोटी-मोटी बातों का क्या महत्त्व है! वह तो अब अपने विशेष जीवन के धन से ही धनी है। वह तो अचानक ही धनी हो गया है। डूबते सूरज की अन्तिम किरण ऐसे ही तो खुशी के साथ उसके सामने नहीं चमकी थी, ऐसे ही तो उसने उसके हृदय को नहीं गर्माया और उस पर ढेरों छापें नहीं छोड़ी थी। अब उस सड़क की तरफ़ उसका ध्यान ही नहीं जा रहा है जिस पर पहले बहुत ही मामूली-सी चीज़ उसे आश्चर्यचकित कर सकती थी। अब "कल्पना की देवी" ने (प्यारी नास्तेन्का, अगर आपने जुकोव्स्की को पढ़ा है!) जादुई हाथ से सुनहरा ताना तान दिया है और वह उसके सामने अभूतपूर्व और अद्भुत दुनिया के नमूने बनाने लगी है। कौन जाने कि अपने जादुई हाथ से उसने उसे ग्रेनाइट की उस शानदार पटरी से, जिस पर वह घर की ओर जा रहा है, सातवें बिल्लौरी आकाश में पहुंचा दिया है। अब उसे रोककर अचानक उससे यह पूछिये तो कि इस वक्त वह कहां खड़ा है और किन गलियों-सड़कों से गुज़र कर आया है? उसे सम्भवतः कुछ भी याद नहीं होगा, न तो यह कि कहां से गुज़र कर आया है और न यह ही कि अब कहां खड़ा है और परेशानी से झेंपता हुआ वह स्थिति को सम्भालने के लिये अवश्य ही कुछ

झूठ बोल देगा। इसीलिये तो जब एक बहुत ही भद्र वृद्धा ने उसे पटरी के बीच ही रोककर बड़े आदर से रास्ता बताने को कहा तो वह सिर से पांव तक कांप उठा, चीखता-चीखता ही रह गया और उसने घबराकर अपने इर्दगिर्द नज़र दौड़ाई। झल्लाहट से माथे पर बल डाले हुए वह उन राहगीरों की ओर, जो उसे देखकर मुस्कराते हैं और मुड़-मुड़कर उसे देखते हैं या उस बालिका की ओर भी ध्यान दिये बिना आगे चलता जाता है, जो डरकर उसके रास्ते से हट जाती है और फिर आंखें फाड़-फाड़कर उसकी ध्यानमग्न खिली मुस्कान तथा हिलते-डुलते हाथों के इशारे देखकर ज़ोर से हंस पड़ती है। मगर वही कल्पना की देवी उस वृद्धा, उन जिज्ञासु राहगीरों, उस हंसती हुई बालिका और उन देहक़ान-नाविकों को भी, जो फ़ोन्तान्का नदी पर अपने बजरों का बांध-सा बनाये हुए शाम का खाना खा रहे हैं (मान लीजिये कि हमारा नायक इस वक्त वहां से गुज़र रहा है), अपनी चंचल उड़ान में अपने साथ उड़ा ले जाती है और सभी को तथा हर चीज़ को उसी तरह अपने सुन्दर ताने-बाने में बुन देती है, जैसे मकड़ी के जाले में मक्खियां बुनी जाती हैं। यह अजीब आदमी इस नई दौलत के साथ ही अपनी सुखद मांद में प्रवेश करता है, खाना खाने बैठता है, खाना कभी का खत्म हो चुका है और वह केवल तभी चौंकता है, जब सोच में डूबी और सदा उदास रहनेवाली उसकी नौकरानी मात्र्योना मेज़ साफ़ करने के बाद उसे पाइप देती है। वह चौंकता है और हैरान होकर यह याद करता है कि खाना पूरी तरह खत्म कर चुका है और उसकी समझ में नहीं आता कि यह कैसे हो गया। कमरे में अंधेरा हो गया है, उसका मन उदास है, सूना-सूना है; उसके इर्दगिर्द कल्पना का एक पूरा साम्राज्य किसी तरह की आवाज़ के बिना तहस-नहस हो गया है, उसका नाम-निशान भी बाक़ी नहीं रहा, वह एक सपने की तरह ग़ायब हो गया है और उसे खुद भी यह याद नहीं रहा कि वह क्या कुछ देखता रहा है। मगर उसे कोई अस्पष्ट-सी अनुभूति हो रही है जिससे दिल में हल्की धड़कन और बेचैनी हो रही है, कोई नई चाह उसकी कल्पना को फुसलाती हुई गुदगुदा और उत्तेजित कर रही है, जो अनजाने ही ढेरों नई छायाओं को उभारती है। छोटे-से कमरे में गहरी खामोशी छाई

हैं, एकान्त और काहिली की धूप में कल्पना मज़े ले रही है ; उसमें गर्मी आती है और वह बग़ल के रसोईघर में पूरी तरह निश्चिन्त और कॉफ़ी बनाने में मस्त बूढ़ी मात्र्योना की केतली के पानी की तरह उबलने लगती है। लीजिये, अब उसकी कल्पना शोलों के रूप में भड़कने लगी है, लीजिये, उद्देश्य के बिना और ऐसे ही उठा ली गयी किताब भी, जिसके दो से अधिक पृष्ठ नहीं पढ़े गये, मेरे स्वप्नदर्शी के हाथ से नीचे गिर गयी है। उसकी कल्पना फिर से रंग में आ गयी है, फिर से उत्तेजित हो उठी है और फिर से एक नई दुनिया, एक नई अद्भुत ज़िन्दगी अपनी सारी सम्भावनाओं के साथ जगमगाते रूप में उसके सामने चमक उठी है। नया सपना – नया सुख! सूक्ष्म और इन्द्रियगत विष का एक और घूंट! ओह, उसके लिये क्या महत्त्व है हमारे वास्तविक जीवन का! उसकी अनूठी नज़र में, नास्तेन्का, हम तो बहुत ही सुस्त, धीमी और मुरझायी ज़िन्दगी बिताते हैं ; उसकी नज़र में तो हम सभी अपने भाग्य से बेहद असन्तुष्ट हैं, हमारी ज़िन्दगी हमारे लिये बोझ है! हां, सचमुच पहली नज़र में हम एक-दूसरे के प्रति उदासीन, कैसे उदास और मानो नाराज़-से प्रतीत होते हैं ..., "बेचारे!" हमारा स्वप्नदर्शी सोचता है। हां, अगर वह ऐसा सोचता है, तो इसमें हैरानी की बात भी क्या है! ज़रा देखिये तो इन जादुई, इन सजीव चित्रों को जिनके ताने-बाने ये अद्भुत छायायें इतने सुन्दर, इतने सधे, इतने उदार और विस्तृत ढंग से उसके सामने बुनती हैं और जिनमें ज़ाहिर है, कि हमारा स्वप्नदर्शी, अपने विशिष्ट चरित्र के साथ, सबसे आगे-आगे, सबसे प्रमुख होता है। इन विविधतापूर्ण कारनामों को देखिये, उसके अन्तहीन ख़ुशीभरे सपनों पर नज़र डालिये! आप शायद यह जानना चाहेंगी कि वह किस चीज़ के सपने देखता है? यह पूछने की ज़रूरत ही क्या है? सभी चीज़ों के। कवि बनने के, जिसकी शुरू में अवहेलना हो और बाद में धाक मान ली जाये ; होफ़मान की दोस्ती के, सेन्ट बार्थोलोमिओ की रात के, डिआना वर्नोन के, ज़ार इवान वसील्येविच की कज़ान-विजय में वीरतापूर्वक भूमिका अदा करने के, क्लारा मोबरे, एफ़ी डीन्स के, प्रीलेट परिषद के सामने खड़े हुस के, "रोबेर्टो" में मृतों के पुनर्जन्म के (यह संगीत याद है न? क़ब्रिस्तान की गंध आती है!), मीन्ना

और ब्रेंडा के, बेरेज़ीना की लड़ाई के, काउंटेस व० द० की बैठक में कविता-पाठ के, दांतोन के, क्लियोपेत्रा और उसके प्रेमियों के, – वह सपने देखता है कोलोमना में छोटे-से घर, उस घर में अपने अलग कोने और जाड़े की रात में अपनी बग़ल में बैठी सुन्दरी के, जो बहुत ध्यान से इसी तरह उसकी बातें सुन रही हो, जैसे, मेरे नन्हे फ़रिश्ते, इस वक़्त आप मुझे सुन रही हैं! नहीं, नास्तेन्का, उस कल्पना-विलासी के लिये उस जीवन का क्या महत्त्व है जिसके हम इतने इच्छुक हैं? वह सोचता है कि यह बहुत ही घटिया दयनीय जीवन है और इस बात को नहीं भांपता है कि कभी उसके लिये भी दुःख की घड़ी आ सकती है, जब वह इस दयनीय जीवन के एक दिन के लिए अपनी कल्पना के सभी वर्ष दे देगा और सो भी ख़ुशी और सुख के लिये नहीं, दुःख, पश्चाताप और शोक के उस क्षण में चुनाव करना भी पसन्द नहीं करेगा। मगर जब तक वह घड़ी, वह भयानक समय नहीं आता, उसे किसी चीज़ की इच्छा नहीं, क्योंकि वह इच्छामुक्त है, क्योंकि उसके पास सब कुछ है, क्योंकि वह सन्तुष्ट है, क्योंकि वह अपने जीवन का स्वयं स्रष्टा है और अपनी हर नयी तरंग के मुताबिक़ उसे नया रूप देता रहता है। और फिर ऐसी कल्पना का सुन्दर संसार तो इतनी आसानी और ऐसे स्वाभाविक ढंग से रचा जा सकता है, मानो यह कल्पना-सृष्टि हो ही नहीं! वास्तव में कभी-कभी मैं यह विश्वास करने को तैयार होता हूं कि यह सारा जीवन भावनाओं की उत्तेजना, छलना और कल्पना का धोखा ही नहीं, बल्कि वास्तविक और यथार्थ है, हक़ीक़त है! बताइये तो, नास्तेन्का, क्यों ऐसे क्षणों में आत्मा पर बोझ-सा मालूम होता है? किस तरह, किस जादू, किस अदृश्य शक्ति के प्रभाव से नब्ज़ तेज़ हो जाती है, स्वप्नदर्शी की आंखों से आंसू बहने लगते हैं, उसके पीले, नम गाल तमतमा उठते हैं और उसका रोम-रोम स्वर्गिक सुख से पुलकित हो उठता है? उसकी पूरी-पूरी उनींदी रातें अक्षय आनन्द और ख़ुशी के एक पल की भांति क्यों बीत जाती हैं और जब उषा की पहली गुलाबी किरण खिड़की को लांघकर अपने हिचकते-झिझकते अलौकिक प्रकाश से, जैसा कि हमारे पीटर्सबर्ग में होता है, उसके उदास कमरे को रोशन कर देती है, तो हमारा थका-हारा, अत्यधिक क्लान्त स्वप्नदर्शी क्यों बिस्तर पर

जा पड़ता है और अपनी रुग्ण, झकझोरी हुई आत्मा के परमानन्द की बेहोशी से अपने दिल में यातनापूर्ण मधुर पीड़ा लिये हुए गहरी नींद सो जाता है? हां, नास्तेन्का, उससे धोखा हो जाता है और अनचाहे ही आदमी यह विश्वास कर लेता है कि वास्तविक और सच्चा अनुराग ही उसकी आत्मा को आलोड़ित करता है, बरबस यह यक़ीन हो जाता है कि उसके अदेह दिवास्वप्नों में कुछ सजीव, कुछ ठोस और मूर्त्त है! देखिये तो कैसा छल है यह – मिसाल के लिये प्यार ने अपनी असीम ख़ुशी और अपनी सभी कष्टप्रद यातनाओं के साथ उसके हृदय में प्रवेश किया है... उस पर एक नज़र डालते ही आपको इस बात का यक़ीन हो जायेगा! मगर उसे देखते हुए प्यारी नास्तेन्का, आप यह विश्वास करती हैं या नहीं कि जिसे अपने उन्मादी सपनों में वह इतना अधिक प्यार करता रहा है, उसे वास्तव में उसने कभी जाना ही नहीं? क्या वह बहकाने-फुसलानेवाली छायायें ही देखता रहा है और क्या केवल इस उन्माद के ही उसे सपने आते रहे हैं? क्या वास्तव में ही उन दोनों ने एक-दूसरे की बांह थामे, सारी दुनिया को भूलकर अपनी दुनिया और अपनी ज़िन्दगी को एक-दूसरे के साथ जोड़कर अपने जीवन के अनेक वर्ष साथ-साथ नहीं बिताये? जुदाई की घड़ी आने पर क्या वही रात को बहुत देर से कठोर आकाश के नीचे उठते तूफ़ान और तेज़ झंझा पर कान दिये बिना, जो उसकी काली बरौनियों से अश्रुकण उड़ा ले जाती थी, उसकी छाती पर पड़ी हुई सिसकती तथा छटपटाती नहीं रही थी? क्या यह सब कल्पना ही थी – वह उपेक्षित, अस्त-व्यस्त और उदास-उदास बाग़ भी, जिसकी पगडण्डियों पर काई जमी हुई थी, जो सूना-सूना और अवसादपूर्ण था और जहां वे दोनों अक्सर टहलते थे, आशायें संजोते थे, व्यथित होते थे, प्यार करते थे, "इतने अधिक समय तक और अत्यधिक भावना-विभोर होकर" प्यार करते रहे थे! और वह अजीब-सा दादों-परदादों का पुराना मकान, जिसमें उसने अपने बूढ़े, कठोर, सदा गुमसुम और चिड़चिड़े पति के साथ एकान्त और उदासी में इतना समय बिताया; उस पति के साथ, जो उन्हें – दो भीरु बालकों को – डराया करता था और वे दोनों दुःखी तथा डरते हुए एक-दूसरे से अपना प्यार छिपाया करते थे? कैसी यातनायें सहते रहे

थे, कैसे भयभीत रहे थे वे, कितना भोला और स्वच्छ था उनका प्यार और (सो तो स्पष्ट ही है) कितने क्रुद्ध थे लोग! और हे भगवान, बाद में अपने देश से दूर, गर्म, अजनबी आकाश के नीचे, सुन्दर, शाश्वत नगर में, समारोही जगमग और संगीत के धूम-धड़ाके में, प्रकाश के सागर में डूबे हुए महल (उसका महल होना अनिवार्य था) के छज्जे में, जिसके चारों ओर गुलाब और सफ़ेद मेंहदी के फूल खिले हुए थे, क्या फिर उसी से उसकी मुलाक़ात नहीं हुई थी? उसे पहचानते ही क्या उसने झटपट अपना नक़ाब नहीं उतारा था और यह फुसफुसाकर कि "मैं आज़ाद हूं", सिहरी और उसकी बांहों में नहीं चली गयी थी? तब ख़ुशी से चीख़कर और एक दूसरे की बांहों में कसे हुए वे दोनों घड़ी भर में ही क्या अपना दुःख-दर्द, अपनी जुदाई, अपनी सारी यातना, उस उदास घर, उस बूढ़े, दूरस्थ मातृभूमि के उस सूने बाग़ और उस बेंच को नहीं भूल गये थे, जहां हताशापूर्ण व्यथा से निर्जीव-सी होकर वह अन्तिम, ज़ोरदार चुम्बन के बाद उसकी बांहों से निकल गयी थी?... ओह, नास्तेन्का, आपको यह तो मानना ही होगा कि अगर कोई लम्बा-तड़ंगा, हट्टा-कट्टा, ख़ुशमिज़ाज और विनोदी नौजवान, आपका बिन बुलाया दोस्त, अचानक आकर दरवाज़ा खोल दे और ऐसे चिल्लाकर, मानो कुछ हुआ ही न हो, यह कहे कि "मेरे भाई, मैं अभी-अभी पाव्लोव्स्क से आया हूं!" तो आप उस स्कूली बालक की तरह ही चौंक उठेंगी, झेंप जायेंगी और शर्म से आपका मुंह लाल हो जायेगा, जिसने पड़ोस के बाग़ से चुराया हुआ सेब अभी-अभी जेब में डाला हो! हे भगवान! बूढ़ा काउंट मर गया, वर्णनातीत सौभाग्य का क्षण शुरू हो रहा है और यहां पाव्लोव्स्क से लोग चले आ रहे हैं!"

अपनी आवेशपूर्ण बातों को ख़त्म करते हुए मैं आवेश में ही चुप हो गया। मुझे याद है कि किसी न किसी तरह ठहाका लगाने को मेरा कितना अधिक मन हुआ था। कारण कि मैं अनुभव करने लगा था कि कोई छोटा-सा शत्रुतापूर्ण शैतान मेरे भीतर हिलने-डुलने लगा है, कि मेरा कण्ठ रुंधने, मेरी ठोड़ी हिलने और आंखें अधिकाधिक नम होने लगी हैं... मुझे आशा थी कि नास्तेन्का, जो अपनी समझदार आंखें फैलाये हुए मेरी बातें सुनती रही थी, अपनी अदम्य बाल-सुलभ हंसी का ज़ोरदार फ़व्वारा छोड़ देगी।

इसलिये मुझे इस बात का अफ़सोस भी होने लगा था कि ऐसे ही इतनी दूर तक बहकता चला गया, बेकार ही उससे वह सब कुछ कह डाला, जो एक ज़माने से मेरे दिल में उमड़ता-घुमड़ता रहा था और जिसे मैं ऐसे सुना सकता था मानो लिख रखा हो। कारण कि अपने को मैं खुद ही एक ज़माने पहले सज़ा सुना चुका था और अब उसे पढ़कर सुनाने का मोह नहीं छोड़ सका, यद्यपि यह सच है कि मुझे समझ लिया जायेगा, इसकी उम्मीद मैंने नहीं की थी। किन्तु मुझे इस बात से बड़ी हैरानी हुई कि वह खामोश रही, कुछ क्षण बाद उसने धीरे-से मेरा हाथ दबाया और सहमी-सी सहानुभूति के साथ पूछा: "क्या सचमुच ही आपने इसी तरह अपनी सारी ज़िन्दगी बितायी है?"

"हां, सारी ज़िन्दगी, नास्तेन्का, सारी ज़िन्दगी," मैंने जवाब दिया। "लगता है कि ऐसे ही इसका अन्त होगा।"

"नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिये," उसने परेशान होते हुए कहा, "ऐसा नहीं होगा: नहीं तो शायद मुझे ज़िन्दगी भर नानी की बग़ल में ही बैठे रहना पड़ेगा। सुनिये, आप यह जानते हैं न कि ऐसे जीना बिल्कुल अच्छी बात नहीं है?"

"जानता हूं, नास्तेन्का, जानता हूं!" अपनी भावनाओं को और अधिक वश में न रख पाकर मैं चिल्ला उठा। "अब मैं पहले से कहीं अधिक अच्छी तरह यह जानता हूं कि अपने सब से अच्छे वर्ष मैंने योंही गंवा दिये। अब मैं यह जानता हूं और इस बात की चेतना से मुझे और भी अधिक पीड़ा होती है कि स्वयं भगवान ने आपको, मेरे दयालु फ़रिश्ते को, मुझे यह बताने और इसका सबूत देने के लिये मेरे पास भेजा है। अब, जबकि मैं आपके पास बैठा हुआ आपसे बातचीत कर रहा हूं, मुझे भविष्य का ख़्याल करके ही डर महसूस होता है, क्योंकि भविष्य में फिर एकाकीपन होगा, फिर वही निस्सार, खोखला जीवन होगा मेरा। जब आपके पास बैठे हुए यथार्थ में ही मैं इतना सौभाग्यशाली हो सका हूं तो अब कल्पना भी किस चीज़ की करूंगा! ओ, प्यारी लड़की, भगवान आपका भला करे कि आपने शुरू में ही मुझे नहीं खदेड़ दिया, कि अब मैं यह कह सकता हूं कि अपने जीवन में मैं कम से कम दो शामें तो जिया हूं!"

"ओह, नहीं, नहीं!" नास्तेन्का चिल्ला उठी और उसकी आंखों में आंसू चमक उठे। "अब आगे ऐसा नहीं होगा। हम ऐसे जुदा नहीं होंगे! दो शामें भला क्या होती हैं!"

"ओह, नास्तेन्का, नास्तेन्का! जानती हैं कि अब कितने अरसे के लिये आपने खुद अपने से ही मेरी सुलह करा दी है? जानती हैं कि अब मैं अपने बारे में ही इतना अधिक बुरा नहीं सोचूंगा, जितना कि कभी-कभी सोचता था? जानती हैं कि शायद अब मैं इस बात से दुःखी नहीं हुआ करूंगा कि अपने जीवन में अपराध और पाप करता रहा हूं, क्योंकि ऐसी ज़िन्दगी अपराध और पाप ही तो है? यह भी नहीं सोचियेगा कि मैंने कुछ बढ़ा-चढ़ाकर आपसे अपनी बातें कही हैं। भगवान के लिये ऐसा नहीं सोचियेगा, नास्तेन्का, क्योंकि मेरे जीवन में कभी-कभी अवसाद के ऐसे क्षण आते हैं... क्योंकि इन क्षणों में मुझे ऐसा लगने लगता है कि मैं कभी वास्तविक जीवन आरम्भ कर ही नहीं सकूंगा, क्योंकि मुझे प्रतीत होता है कि मैं वास्तविक और यथार्थ जीवन की लय-ताल, उसकी अनुभूति से वंचित हो चुका हूं, क्योंकि मैं खुद अपने लिये अभिशाप बन चुका हूं, क्योंकि अब मेरे जीवन में सपनों की रात के बाद चिन्तन के क्षण आते हैं, जो भयानक होते हैं! साथ ही इसी समय ज़िन्दगी के चक्कर में लोगों की भीड़ दौड़-धूप करती दिखाई देती है, उस-का शोर सुनाई देता है, यह नज़र आता है कि कैसे लोग वास्तविक जीवन बिताते हैं, यह देखने को मिलता है कि उनकी ज़िन्दगी भरी-पूरी है, कि उनकी ज़िन्दगी सपने, या छाया की तरह झलक दिखाकर ग़ायब नहीं हो जायेगी, कि उनका जीवन नित नया रूप धारण करता है, वह सदा जवान रहता है और उनके जीवन का हर क्षण दूसरे से भिन्न होता है। दूसरी ओर भीरु कल्पना कितनी नीरस और ऊब की चरम सीमा तक एकरूपी है। वह छाया की, विचार की दासी है, वह उस पहले बादल की दासी है जो अचानक सूरज को ढंक देता है और हर सच्चे पीटर्सबर्गी के दिल को, जो अपने सूरज को इतना महत्त्व देता है, खिन्न कर देता है, और खिन्नता में कल्पना ही भला किस चीज़ की हो सकती है! ऐसा लगता है कि स्थायी तनाव के परिणामस्वरूप यह असीम कल्पना भी आखि-रकार थक-हारकर चुक जायेगी, क्योंकि हम अधिकाधिक प्रौढ़ होते

जाते हैं, पुराने आदर्शों के चौखटे से बाहर निकल जाते हैं, वे टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं, धूल में मिल जाते हैं। अगर कोई दूसरा जीवन नहीं है, तो इन्हीं टुकड़ों को जोड़कर उसे फिर से बनाना पड़ता है। मगर हमारी आत्मा कुछ दूसरा चाहती है, किसी और चीज़ की मांग करती है। स्वप्नदर्शी बेकार ही अपने पुराने सपनों की राख में किसी चिनगारी की खोज करता है ताकि उसे सुलगा सके, फिर से सुलगायी आग से सर्द हुए दिल को गर्मा सके, उसमें फिर से उस सब कुछ को ज़िन्दा कर सके जो पहले इतना प्रिय था, मर्मस्पर्शी था, जिससे ख़ून गर्म हो उठता था, आंखों में आंसू छलक आते थे और जो इतने शानदार ढंग से उसकी आंखों में धूल झोंक देता था। जानती हैं, नास्तेन्का, मैं कहां तक जा पहुंचा हूं? जानती हैं, नास्तेन्का, कि मैं अब अपनी भावनाओं की, उस चीज़ की वर्ष-गांठ मनाने के लिये मजबूर हो रहा हूं, जो पहले इतनी प्रिय थी, जो वास्तव में कभी थी ही नहीं। यह वर्षगांठ भी उन्हीं मूर्खतापूर्ण और अमूर्त्त सपनों के उपलक्ष्य में मनायी जायेगी और मनानी यह इसलिये होगी कि अब वे मूर्खतापूर्ण सपने भी तो नहीं रहे, क्योंकि उनके जीने का कोई सहारा नहीं रहा – आखिर सपनों को भी तो जिया जाता है! जानती हैं कि अब मुझे कुछ ख़ास वक़्तों पर उन जगहों को याद करना और वहां जाना बहुत अच्छा लगता है, जहां कभी अपने ही ढंग से मुझे सुखानुभूति हुई थी! मुझे उसी अतीत के आधार पर, जिसे कभी लौटाया नहीं जा सकता, वर्त्तमान के सुख का निर्माण करना बहुत प्रिय है और इसीलिये मैं अक्सर किसी आवश्यकता और उद्देश्य के बिना छाया की भांति, उदास और खोया-सा, पीटर्सबर्ग के गलियों-कूचों में घूमा करता हूं। कैसी हैं ये सब स्मृतियां! मिसाल के तौर पर याद आता है कि पूरे एक साल पहले इसी जगह, इसी वक़्त, इसी घड़ी, इसी पटरी पर, ऐसे ही, जैसे कि इस समय, एकाकी और उदास-सा घूमता रहा था! याद आता है कि सपने तब भी उदास थे और यद्यपि अब की तुलना में पहले भी कुछ भी बेहतर नहीं था, फिर भी ऐसा अनुभव होता है मानो जीवन अधिक आसान और अधिक चैन का था, कि तब यह उल्टा-सीधा विचार दिमाग़ में नहीं था, जो अब मेरे साथ चिपक गया है, कि आत्मा की वह फटकार, वे अवसाद-

पूर्ण और कटु पश्चाताप नहीं थे जो अब न दिन को, न रात को ही मुझे चैन लेने देते हैं। ख़ुद अपने से सवाल करता हूं – कहां हैं अब वे तुम्हारे सपने? और सिर हिलाकर कहता हूं – कितनी तेज़ी से साल उड़ जाते हैं! फिर अपने से पूछता हूं – अपने सालों का तुमने क्या किया? कहां दफ़ना दिया तुमने अपना अच्छा वक़्त? तुम जिये या नहीं? तब अपने आप से कहता हूं – देखो तो दुनिया में कितनी बेरुख़ी होती जा रही है। कुछ और साल बीतेंगे और उनके बाद कटु एकाकीपन आयेगा, लाठी के सहारे हिचकोले खाता हुआ बुढ़ापा आयेगा और उसके पीछे आयेगी उदासी और ऊब। तुम्हारी सपनों की दुनिया बेरंग हो जायेगी, सपने मुरझा जायेंगे और पीले पत्तों की तरह वृक्षों से झड़ जायेंगे ... ओ, नास्तेन्का! एकाकी, एकदम एकाकी रहने से दुःख होगा, यहां तक कि पश्चाताप करने के लिये भी कुछ नहीं होगा – कुछ भी, कुछ भी तो नहीं ... क्योंकि मैंने जो खोया है, वह सब कुछ भी तो नहीं था, पागलपन था, एकदम शून्य था, वे तो केवल सपने थे!"

"बस, बस, मुझे अब और अधिक द्रवित नहीं कीजिये!" आंसू पोंछते हुए नास्तेन्का ने कहा। "अब यह सब नहीं होगा! अब हम दोनों एकसाथ होंगे। मेरे साथ अब चाहे कुछ भी क्यों न हो, हम कभी अलग नहीं होंगे। सुनिये, मैं साधारण लड़की हूं, बहुत कम पढ़ी-लिखी हूं, यद्यपि नानी ने मेरे लिये अध्यापक भी रखा था। मगर वास्तव में ही मैं आपको अच्छी तरह समझती हूं, क्योंकि जो कुछ आपने बताया है, उस सब की मुझे उन दिनों अनुभूति हो चुकी है, जब नानी ने पिन लगाकर अपने और मेरे फ्राक को जोड़ लिया था। ज़ाहिर है कि मैं यह सब कुछ आपकी तरह सुन्दर ढंग से बयान न कर पाती, मैं तो पढ़ी-लिखी नहीं हूं," लड़की ने झेंपते हुए इतना और जोड़ दिया, क्योंकि मेरी करुणाजनक बातों और ऊंची शैली के प्रति वह अभी भी आदरभाव अनुभव कर रही थी, "मगर बहुत ख़ुश हूं कि आपने पूरी तरह अपना दिल खोलकर मेरे सामने रख दिया है। अब मैं आपको जानती हूं, पूरी तरह, सब कुछ जानती हूं। जानते हैं कि मैं भी आपको अपनी कहानी सुनाना चाहती हूं, सो भी दुराव-छिपाव के बिना? उसे सुनने के बाद आप मुझे अपनी सलाह दीजियेगा। आप बहुत समझदार आदमी

हैं। अपनी सलाह देने का वचन देते हैं न?"

"आह, नास्तेन्का," मैंने उत्तर दिया, "यह सही है कि मैं सलाहकार, तिस पर समझदार सलाहकार तो कभी नहीं था। पर अब, यह अनुभव कर रहा हूं कि अगर हम दोनों हमेशा इसी तरह एक-दूसरे का साथ देंगे, तो यह बहुत समझदारी की बात होगी और हम में से प्रत्येक दूसरे को बहुत ही अक़्लमन्दी की सलाह दे सकेगा! हां तो, मेरी अच्छी नास्तेन्का, आपको कैसी सलाह की ज़रूरत है? साफ़-साफ़ कहिये – अब मैं इतना खुश, इतना सौभाग्यशाली, इतना साहसी और समझदार हूं कि तुरन्त ही आपको उत्तर दूंगा।"

"नहीं, नहीं!" नास्तेन्का ने हंसते हुए मुझे टोका। "मुझे केवल समझदारी की ही नहीं, बल्कि हार्दिक, एक भाई की सी सलाह, ऐसी सलाह की ज़रूरत है, जो अगर आप मुझे जीवन भर प्रेम करते रहे होते, तब देते!"

"ठीक है, ठीक है, नास्तेन्का!" मैं खुशी से चिल्ला उठा, "अगर मैंने बीस बरस भी आपको प्यार किया होता, तो वह भी इससे अधिक न होता, जितना अब है!"

"अपना हाथ दीजिये!" नास्तेन्का ने कहा।

"यह लीजिये!" मैंने उत्तर देते हुए अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया।

"तो मेरी कहानी शुरू होती है।"

नास्तेन्का की कहानी

"आधी कहानी तो आप जानते ही हैं यानी आपको यह मालूम है कि मेरी बूढ़ी नानी है..."

"अगर बाक़ी आधी भी इतनी ही संक्षिप्त है तो..." मैंने हंसते हुए टोका।

"चुप रहिये और सुनते जाइये। सबसे पहले तो यह शर्त ज़रूरी है कि आप मुझे टोकेंगे नहीं, वरना मैं सम्भवतः सब कुछ गड़बड़ा दूंगी। तो चुपचाप सुनिये।

"हां, तो मेरी बूढ़ी नानी है। मैं छोटी उम्र में ही उसके पास आ गयी थी, क्योंकि मेरे मां-बाप का देहान्त हो गया था। शायद यह मानना चाहिये कि मेरी नानी पहले कुछ अधिक समृद्ध रही होगी, क्योंकि अब भी अच्छे दिनों की याद करती रहती है। उसी ने मुझे फ़्रांसीसी सिखाई और फिर मेरे लिये अध्यापक रख दिया। जब मैं पन्द्रह साल की हुई (इस वक़्त सत्रह की हूं) तो पढ़ाई ख़त्म हो गयी। इसी वक़्त मैं एक शरारत कर बैठी। वह शरारत क्या थी, यह मैं आपको नहीं बताऊंगी। बस, इतना कह देना ही काफ़ी होगा कि अपराध मामूली-सा था। मगर नानी ने एक सुबह को मुझे अपने पास बुलाकर कहा कि चूंकि वह अंधी है, मुझ पर नज़र नहीं रख सकती, इसलिये उसने सेफ़्टी पिन लेकर मेरा फ़्राक अपने फ़्राक के साथ जोड़ लिया और कहा कि अगर मैं सुधर नहीं जाऊंगी तो हम ज़िन्दगी भर ऐसे ही बैठी रहेंगी। संक्षेप में यह कि शुरू में तो उसके पास से हटा ही नहीं जा सकता था – काम-काज, पढ़ना-लिखना, सब कुछ नानी के पास बैठे-बैठे ही करना होता था। एक दिन मैंने चालाकी से काम लेते हुए अपनी बहरी नौकरानी फ़्योक्ला को अपनी जगह बैठने को राज़ी कर लिया। फ़्योक्ला मेरी जगह आ बैठी, उसी वक़्त नानी की आंख लग गई और मैं पास ही रहनेवाली अपनी एक सहेली के यहां चली गई। मगर इसका बुरा नतीजा निकला। मेरी अनुपस्थिति में नानी जाग गई और उसने यह समझते हुए कि मैं अपनी जगह पर शान्त बैठी हूं, कुछ पूछा। फ़्योक्ला ने देखा कि नानी कुछ पूछ रही है, मगर उसे सुनाई तो कुछ नहीं दे रहा था। वह सोचती रही, सोचती रही कि क्या करे और आख़िर पिन अलग करके भाग खड़ी हुई..."

नास्तेन्का यहां रुकी और खिलखिलाकर हंसने लगी। मैं भी उसके साथ-साथ हंस पड़ा। उसने फ़ौरन हंसना बन्द कर दिया।

"सुनिये, आप नानी पर नहीं हंसिये। यह तो मैं इसलिये हंस रही हूं कि हंसने की बात है... अगर नानी सचमुच है ही ऐसी, तो हो ही क्या सकता है। फिर भी मैं उसे थोड़ा-सा प्यार तो करती ही हूं। हां, तब मेरी शामत आई। उसी वक़्त मुझे फिर से मेरी जगह पर बिठा दिया गया और हिलना-डुलना तक भी असम्भव हो गया।

"हां, मैं आपको यह बताना तो भूल ही गई कि हमारा, यानी नानी का घर, सिर्फ़ तीन खिड़कियोंवाला है, पूरी तरह लकड़ी का बना हुआ और नानी की तरह ही बहुत बरसों का, पुराना। उसमें ऊपर एक दुछत्ती है। तो एक नया किरायेदार उसमें रहने के लिये आया ..."

"इसका मतलब यह हुआ कि उसके पहले भी कोई किरायेदार वहां रहता था?" मैंने ऐसे ही पूछा।

"सो तो जाहिर ही है," नास्तेन्का ने उत्तर दिया, "और वह आपकी तुलना में अधिक चुप रह सकता था। सच तो यह है कि वह बड़ी मुश्किल से जबान हिला पाता था। वह एक दुबला-पतला-सा, गूंगा, अंधा और लंगड़ा बुड्ढा था। आख़िर जब उसके लिये इस दुनिया में और अधिक जीना सम्भव नहीं रहा, तो वह चल बसा। इसके बाद एक नये किरायेदार की ज़रूरत हुई, क्योंकि इसके बिना हमारा काम नहीं चल सकता। नानी की पेंशन और किराया – बस, यही हमारी कुल आमदनी है। क़िस्मत का खेल कहिये, नया किरायेदार नौजवान था, स्थानीय नहीं, कहीं बाहर से आया था। चूंकि उसने किराये के मामले में किसी तरह की सौदे-बाज़ी नहीं की, इसलिये नानी ने उसे ही रख लिया और इसके बाद मुझसे पूछा: 'नास्तेन्का, हमारा नया किरायेदार जवान है क्या?' मैंने झूठ नहीं बोलना चाहा, बोली, 'बिल्कुल जवान तो नहीं, मगर बूढ़ा भी नहीं है।' नानी ने फिर पूछा: 'शक्ल-सूरत अच्छी है क्या?' मैंने फिर झूठ बोलना पसन्द नहीं किया: 'हां, अच्छी शक्ल-सूरत है, नानी!' नानी बोली: 'आह, यह भी कैसा ग़ज़ब है! बेटी, मैं तुमसे यह इसलिये कह रही हूं कि तुम उसकी तरफ़ कोई ध्यान न देना। कैसा ज़माना आ गया है! ऐसा मामूली-सा किरायेदार और वह भी अच्छी शक्ल-सूरत वाला है। पहले जमाने में तो ऐसा नहीं होता था!'

"नानी पुराने ज़माने का ही राग अलापा करती है! वह जवान भी पुराने ज़माने में थी, तब सूरज भी अधिक गर्म होता था और क्रीम भी इतनी जल्दी खट्टी नहीं होती थी – हर चीज़ का पुराने ज़माने से ही सम्बन्ध जुड़ा रहता है! मैं बैठी हुई मन ही मन सोचने लगी – नानी खुद ही तो मेरे दिमाग़ में ऐसे विचार पैदा कर रही

है, पूछ रही है कि किरायेदार अच्छी शक्ल-सूरतवाला है या नहीं, जवान है या नहीं? मगर यह ख्याल घड़ी भर को यों ही दिमाग़ में आया और मैं उसी क्षण फिर से जुराबें बुनने, उनके फंदे गिनने में व्यस्त हो गई और बाद में यह बात बिल्कुल भूल गई।

"एक दिन किरायेदार सुबह ही यह जानने को आया कि हमने उसके कमरे में काग़ज़ की नयी छींट लगवा देने का जो वादा किया था, वह कब पूरा होगा। नानी तो ठहरी बातूनी, बात में से बात निकलती रही और फिर मुझसे बोली – 'नास्तेन्का, जाकर मेरे सोने के कमरे से गिनतारा ले आ।' मैं झटपट उठी, मालूम नहीं किस कारण शर्म से लाल हुई जा रही थी और यह भूल गई कि मेरा फ़्राक नानी के फ़्राक से जुड़ा हुआ है। इसके बजाय कि पिन को धीरे से अलग कर देती ताकि किरायेदार की उसपर नज़र न पड़ती, मैं ऐसे तेज़ी से लपकी कि नानी की आरामकुर्सी भी मेरे साथ-साथ घिसट चली। जैसे ही मैंने यह देखा कि किरायेदार को मेरे बारे में अब सब कुछ मालूम हो गया है, मैं शर्म से लाल हो गई, जहां की तहां बुत बनी खड़ी रह गई और अचानक रो पड़ी। उस क्षण इतनी शर्म आई और इतना बुरा लगा कि काश धरती फट जाती! नानी चिल्लाई: 'तू खड़ी क्यों है, री?' और मैं अधिक ज़ोर से रो पड़ी... किरायेदार ने जैसे ही यह देखा कि मैं उसके कारण शर्म से गड़ी जा रही हूं, वह फ़ौरन सिर झुकाकर वहां से चला गया!

"इसके बाद तो जैसे ही ड्योढ़ी में आहट होती, वैसे ही मेरा दम निकल जाता। मैं सोचती, लो, किरायेदार आ रहा है और सावधानी बरतते हुए धीरे-से पिन भी खोल लेती। मगर यह आहट उसके पैरों की न होती, वह न आया, दो हफ़्ते बीत गये। तब किरायेदार ने फ़्योक्ला से कहलवा भेजा कि उसके पास फ़्रांसीसी भाषा में बहुत-सी किताबें हैं और सब अच्छी किताबें हैं जिन्हें पढ़ा जा सकता है। उसने जानना चाहा कि क्या नानी यह नहीं चाहेगी कि मैं उन्हें उसे पढ़कर सुना दूं ताकि ऊब महसूस न हो? नानी कृतज्ञतापूर्वक इसके लिये राज़ी हो गई, मगर बराबर मुझसे यह पूछती रही कि किताबें नैतिक हैं या नहीं, क्योंकि अगर वे अनैतिक हैं तो, नास्तेन्का, तुम्हें किसी भी हालत में उन्हें नहीं पढ़ना चाहिये, वे तुम्हें बुरी बातें सिखा देंगी।

"'क्या सिखा देंगी वे, नानी? क्या लिखा है उनमें?'

"'आह!' वह बोली, 'लिखा है उनमें कि कैसे जवान लोग भली लड़कियों को बहकाते-फुसलाते हैं, कैसे वे यह कहकर कि उन्हें अपनी बीवी बनाना चाहते हैं, मां-बाप के घर से भगा ले जाते हैं, कैसे बाद में वे इन बदक़िस्मत लड़कियों को उनकी क़िस्मत के रहम पर छोड़ देते हैं और वे बहुत दर्दनाक मौत मरती हैं। मैंने,' नानी बोली, 'बहुत-सी ऐसी किताबें पढ़ी हैं और वे सभी इतनी बढ़िया लिखी हुई हैं कि रात भर जागकर चुपके-चुपके पढ़ी जाती हैं। हां तो, नास्तेन्का,' वह बोली, 'तुम ऐसी किताबें नहीं पढ़ना। कैसी किताबें भेजी हैं उसने?'

"'सभी वाल्टर स्कॉट के उपन्यास हैं, नानी।'

"'वाल्टर स्कॉट के उपन्यास! हां, मगर कहीं, कोई चालाकी तो नहीं है? यह देख लो कि कहीं कोई प्रेम-पत्र तो नहीं रख दिया है उसने?'

"'नहीं, नानी, कोई प्रेम-पत्र नहीं है,' मैंने कहा।

"'तुम जिल्द के नीचे भी देख लो। ये शैतान के चर्खे, कभी-कभी जिल्द के नीचे भी उसे छिपा देते हैं!'

"'नहीं, वहां भी कुछ नहीं है, नानी!'

"'तब ठीक है!'

"तो हमने वाल्टर स्कॉट की रचनायें पढ़नी शुरू कीं और कोई महीने भर में लगभग आधी पढ़ डालीं। इसके बाद उसने और किताबें भेजीं। पुश्किन की कृतियां भी। आख़िर किताबों के बिना मेरा जीना ही मुश्किल हो गया और चीनी राजकुमार से शादी करने का विचार मेरे दिमाग से निकल गया।

"ऐसी स्थिति थी, जब एक दिन सीढ़ियों में किरायेदार से मेरी भेंट हो गयी। नानी ने किसी कारणवश मुझे ऊपर भेजा था। वह रुक गया, मैं शर्म से लाल हो गई, वह भी लाल हो गया, मगर फिर भी हंस पड़ा, उसने अभिवादन किया, नानी के स्वास्थ्य के बारे में पूछा और बोला: 'किताबें पढ़ लीं क्या?'–'पढ़ लीं,' मैंने उत्तर दिया।–'कौन-सी सबसे अधिक पसन्द आई?'–'इवा-नहोये' और पुश्किन की रचनायें सबसे अधिक अच्छी लगीं,' मैंने जवाब दिया। इस बार तो बातचीत यहीं ख़त्म हो गई।

"हफ़्ते भर बाद सीढ़ियों में ही फिर उससे मेरी मुलाक़ात हो गई। इस बार नानी ने नहीं भेजा था, ख़ुद मुझे ही कुछ काम था। दिन के दो बजे के बाद का वक़्त था और किरायेदार इस वक़्त घर लौटता था। 'नमस्ते,' वह बोला।–'नमस्ते,' मैंने उत्तर दिया।

"'दिन भर नानी के पास बैठे रहना आपको नीरस नहीं लगता?' उसने पूछा।

"जैसे ही उसने यह सवाल किया, वैसे ही न जाने क्यों, मैं शर्म से लाल हो गई, मुझ पर घड़ों पानी पड़ गया और फिर से मुझे सम्भवतः इस कारण दुःख हुआ कि पराये लोग भी अब इस बारे में पूछने लगे हैं। मैंने चाहा कि जवाब दिये बिना ही वहां से चली जाऊं, मगर मेरी ताक़त जवाब दे गई।

"'सुनिये,' वह बोला, 'आप भली लड़की हैं। क्षमा कीजिये कि मैं आपसे ऐसी बात कह रहा हूं, मगर विश्वास दिलाता हूं कि नानी से अधिक आपकी भलाई चाहता हूं। क्या आपकी सहेलियां नहीं हैं जिनसे आप मिलने-जुलने जा सकें?"

"मैंने जवाब दिया कि सिर्फ़ एक सहेली माशा थी और वह भी प्स्कोव चली गई।

"'सुनिये, क्या आप मेरे साथ थियेटर चलना पसन्द करेंगी?' उसने पूछा।

"'थियेटर? मगर नानी का क्या होगा?'

"'नानी को बताये बिना, चुपके से,' वह बोला।

"'नहीं,' मैंने जवाब दिया, 'मैं नानी को धोखा नहीं देना चाहती। नमस्ते!'

"'तो, नमस्ते,' इसके अतिरिक्त उसने कुछ नहीं कहा।

"हां, दोपहर के खाने के बाद वह हमारे यहां आया, बैठे गया, देर तक नानी से बातचीत करता रहा, उसने यह पूछा कि वह घर से बाहर भी कहीं आती-जाती है, कि उसकी जान-पहचान के लोग भी हैं या नहीं और फिर अचानक बोला: 'आज मैंने 'सेविले का नाई' ऑपेरा के लिये थियेटर में एक बॉक्स किराये पर लिया है। कुछ परिचित आनेवाले थे, मगर बाद में उन्होंने इन्कार कर दिया और टिकट मेरे पास फालतू रह गये हैं।'

"'सेविले का नाई!' नानी चिल्ला उठी। 'वही 'सेविले का

नाई' ऑपेरा, जो पुराने ज़माने में पेश किया जाता था?'

"'हां, वही सेविले का नाई,' उसने जवाब दिया और मेरी ओर देखा। मैं तो सब कुछ समझ गई, लज्जारुण हो उठी और मेरा दिल प्रत्याशा में उछलने लगा!

"'इस ऑपेरा को भला मैं कैसे नहीं जानूंगी!' नानी बोली। 'किसी वक़्त अपने घरेलू थियेटर में मैं ख़ुद रोज़ीना की भूमिका खेल चुकी हूं!'

"'तो क्या आप आज चलना पसंद नहीं करेंगी?' किरायेदार ने पूछा। 'वरना मेरे तो टिकट बेकार चले जायेंगे।'

"'हां, शायद चलेंगी ही,' नानी ने जवाब दिया। 'चलेंगी क्यों नहीं? मेरी नास्तेन्का तो कभी थियेटर गई ही नहीं।'

"हे भगवान, कितनी ख़ुश थी मैं! हम फ़ौरन तैयार होने लगीं, सजी-धजीं और चल पड़ीं। नानी बेशक अंधी है, फिर भी संगीत सुनने को उसका मन ललक उठा। इसके अलावा वह दयालु वृद्धा है – सबसे अधिक तो मेरा मन बहलाना चाहती थी। हम ख़ुद तो कभी थियेटर जाने का कार्यक्रम बना न पातीं। 'सेविले के नाई' का मेरे दिल पर कैसा प्रभाव हुआ, यह मैं आपको नहीं बताऊंगी। केवल इतना ही कहूंगी कि उस सारी शाम को हमारा किरायेदार मेरी ओर ऐसे अन्दाज़ में देखता और बातें करता रहा कि मैं फ़ौरन समझ गयी कि सुबह यह प्रस्ताव करके कि मैं उसके साथ अकेली थियेटर चलूं, वह मेरी परीक्षा ले रहा था। मेरी ख़ुशी का पारावार नहीं था! मैं ऐसे गर्वीली-सी और इतनी ख़ुश-ख़ुश बिस्तर पर गई, ऐसे ज़ोरों से मेरा दिल धड़क रहा था कि हल्का-सा बुख़ार भी हो गया और मैं रात भर 'सेविले के नाई' के बारे में ही बड़बड़ाती रही।

"मेरा ख़्याल था कि इसके बाद वह अक्सर हमारे पास आया करेगा – मगर ऐसा नहीं हुआ। उसने तो लगभग आना ही बन्द कर दिया। महीने में एक बार आता और सो भी थियेटर के लिये आमंत्रित करने को। एक-दो बार हम फिर थियेटर गये, मगर इससे मुझे बिल्कुल ख़ुशी नहीं हुई। मैं समझ गई कि उसे सिर्फ़ इस बात के लिये मुझ पर दया आती थी कि मैं नानी के साथ ऐसे बंधी बैठी थी और इससे अधिक कुछ नहीं। इसी तरह वक़्त गुज़रता गया, गुज़रता गया और आख़िर मेरी अजीब-सी हालत हो गई। अब

न तो मुझसे टिककर बैठा जाता, न पढ़ा जाता, न काम किया जाता, कभी-कभी हंसती और नानी को चिढ़ाने के लिये जान-बूझकर कोई हरकत करती और फिर कभी बस, रोने लगती। आख़िर मैं बहुत दुबला गई और लगभग मरीज़ हो गई। ऑपेरा का सीज़न ख़त्म हो गया और किरायेदार ने बिल्कुल ही आना बन्द कर दिया। जब कभी हमारी भेंट हो जाती – ज़ाहिर है कि उन्हीं सीढ़ियों में – तो वह ऐसे चुपचाप और ऐसे गम्भीरता से सिर झुका देता मानो बात ही न करना चाहता हो। वह तो ओसारे तक पहुंच जाता और मैं चेरी की तरह लाल हुई, क्योंकि उससे भेंट होने पर मेरा सारा ख़ून सिर की तरफ़ दौड़ने लगता था, सीढ़ियों के बीचोंबीच खड़ी रह जाती।

"बस, अब कहानी समाप्त ही होनेवाली है। पिछले साल की मई में हमारा किरायेदार आया और नानी से बोला कि यहां उसने अपने सभी काम-काज निपटा लिये हैं और अब उसे फिर से एक साल के लिये मास्को जाना होगा। मैंने जैसे ही यह सुना, तो मेरे चेहरे का रंग उड़ गया और मैं बेजान-सी कुर्सी पर गिर पड़ी। नानी को कुछ भी पता नहीं चला और किरायेदार ने यह कहकर कि हमारे यहां से जा रहा है, सिर झुकाया और बाहर चला गया।

"मैं क्या करूं? मैं सोचती रही, सोचती रही, बेहद परेशान होती रही, दुःखी होती रही और आख़िर मैंने निर्णय कर लिया। उसे अगले दिन जाना था और मैंने यह तय किया कि रात को जब नानी बिस्तर पर चली जायेगी, तब मैं यह क़िस्सा ख़त्म कर डालूंगी। ऐसा ही हुआ भी। मैंने सभी फ़ाकों और दूसरे ज़रूरी कपड़ों की गठरी बांधी और उसे हाथ में लिये हुए जीती-मरती-सी किराये-दार की दुछत्ती की ओर चल दी। मेरे ख़्याल में सीढ़ियां चढ़ने में मुझे पूरा एक घण्टा लगा होगा। जब मैंने उसका दरवाज़ा खोला तो वह मुझे देखकर चीख़ उठा। उसने समझा कि मैं कोई भूत हूं और फिर वह मुझे पानी देने के लिये लपका, क्योंकि मैं तो बड़ी मुश्किल से खड़ी रह पा रही थी। दिल बहुत ज़ोर से धड़क रहा था, सिर में दर्द हो रहा था और मेरा सिर चकरा रहा था। जब मुझे कुछ होश आया, तो किसी तरह की भूमिका के बिना मैंने अपनी गठरी उसके पलंग पर रख दी, ख़ुद उसके पास बैठ गई, हाथों से

15–901

मुंह ढांप लिया और फूट-फूटकर रोने लगी। वह फ़ौरन सब कुछ समझ गया। उसका चेहरा ज़र्द हो उठा और मेरे सामने खड़ा हुआ ऐसी उदास नज़र से मुझे देखता रह गया कि मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े होने लगा।

"'सुनिये,' उसने कहना शुरू किया, 'सुनिये, नास्तेन्का, मैं कुछ भी तो नहीं कर सकता। मैं ग़रीब आदमी हूं, अभी तो मेरे पास कुछ भी नहीं है, यहां तक कि ढंग की नौकरी भी नहीं है। अगर मैं आपसे शादी कर लूं तो हमारा गुज़ारा कैसे चलेगा?'

"हम देर तक बातें करते रहे और आखिर में भावावेश में आकर कह उठी कि नानी के पास अब और नहीं रह सकती, उसे छोड़कर भाग जाऊंगी, यह नहीं चाहती कि पिन लगाकर मुझे बिठाये रखा जाये और, वह चाहे या न चाहे, मैं तो उसके साथ मास्को जाऊंगी, क्योंकि उसके बिना ज़िन्दा नहीं रह सकती। लज्जा, प्यार और गर्व – सभी एकसाथ मेरे दिल में उबल पड़े और मैं लगभग बेहोश होकर पलंग पर गिर पड़ी। मैं इस बात से बहुत डर रही थी कि वह कहीं इन्कार न कर दे!

"वह कुछ क्षण तक चुपचाप बैठा रहा, फिर उठा, मेरे पास आया और उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया।

"'सुनिये, मेरी दयालु, मेरी प्यारी नास्तेन्का!' उसने भी आंसू बहाते हुए कहना शुरू किया, 'मेरी बात सुन लीजिये। क़सम खाता हूं कि अगर कभी मैं शादी करने के लायक़ हूंगा, तो निश्चय ही आप मेरी ज़िंदगी की खुशी बनेंगी। यक़ीन दिलाता हूं कि अब केवल आप ही मेरा सौभाग्य बन सकती हैं। सुनिये – मैं मास्को जा रहा हूं और साल भर वहां रहूंगा। मुझे आशा है कि वहां अपना काम-काज ठीक कर लूंगा। जब लौटूंगा, और अगर उस समय तक आपका प्यार बना रहा, तो क़सम खाता हूं, कि हम सौभाग्यशाली होंगे। इस वक़्त तो यह असम्भव है, मैं ऐसा नहीं कर सकता, मुझे तो वादा करने का भी अधिकार नहीं है। दोहरांता हूं कि अगर एक साल बाद ऐसा न हुआ तो कभी तो अवश्य ही ऐसा होगा – ज़ाहिर है कि उस हालत में, अगर आप किसी दूसरे को मुझ पर तरजीह नहीं देंगी, क्योंकि मैं आपको बचनबद्ध नहीं कर सकता और ऐसा करने की जुर्रत भी नहीं कर सकता।'

"तो उसने यह कहा और अगले दिन चला गया। हमने यह तय किया था कि नानी से इसके बारे में एक भी शब्द न कहा जाये। ऐसा उसने चाहा था। बस, मेरी कहानी लगभग समाप्त हो गई। एक साल गुज़र चुका है। वह लौट आया है, पूरे तीन दिन से यहां है और..."

"और क्या?" अन्त जानने के लिये मैं बेसब्री से चीख उठा।

"और अब तक उसने अपनी सूरत नहीं दिखाई!" मानो अपनी शक्ति बटोरते हुए नास्तेन्का ने कहा। "कोई अता-पता ही नहीं है उसका..."

इतना कहकर वह रुकी, कुछ देर चुप रही, उसने सिर झुकाया और अचानक दोनों हाथों से मुंह ढांप कर ऐसे सिसकने लगी कि उसकी सिसकियों से मेरा कलेजा फटने लगा।

मैंने ऐसे अन्त की बिल्कुल आशा नहीं की थी।

"नास्तेन्का!" मैंने दिलासा देते हुए सहमी-सी आवाज़ में कहा। "नास्तेन्का! भगवान के लिये रोइये नहीं! आपको भला क्या मालूम? हो सकता है कि वह अभी आया ही न हो..."

"यहां है, यहां है!" नास्तेन्का ने मेरी बात काटते हुए कहा। "वह यहां है, मैं यह जानती हूं। तभी, उसी शाम को, उसके जाने के पहले ही हमने सब कुछ तय कर लिया था। जो कुछ मैंने आपको सुनाया है, जब हम वह सब कुछ कह-सुन और तय कर चुके तो घूमने के लिये बाहर निकले यानी यहीं नदी के घाट पर आये। रात के दस बजे थे, हम इसी बेंच पर बैठे थे। मैं तब रो नहीं रही थी, उसकी बातें सुन-सुनकर मस्त हो रही थी... उसने कहा था कि यहां लौटते ही हमारे घर आयेगा और अगर मैं उसके बारे में अपना इरादा नहीं बदलूंगी, तो हम सब कुछ नानी से कह देंगे। अब वह आ चुका है, मैं यह जानती हूं, मगर अभी तक हमारे यहां नहीं आया!"

उसने फिर से आंसुओं की झड़ी लगा दी।

"हे भगवान! क्या किसी तरह भी आपकी मदद नहीं की जा सकती?" मैं बेहद दुःखी होते हुए बेंच से उठकर चिल्ला पड़ा। "कहिये, नास्तेन्का, क्या मैं उसके पास नहीं जा सकता?.."

"क्या यह मुमकिन है?" अचानक सिर उठाकर उसने पूछा।

15*

"नहीं, बेशक, नहीं!" अपनी भूल सुधारते हुए मैंने कहा। आप ऐसा कीजिये, ख़त लिख दीजिये।"

"नहीं, यह सम्भव नहीं, ऐसा करना ठीक नहीं होगा!" उसने निर्णायक ढंग से, मगर सिर झुकाकर और मेरी नज़र बचाते हुए कहा।

"क्यों ठीक नहीं होगा? किसलिये ठीक नहीं होगा?" अपने विचार को आगे बढ़ाते हुए मैं कहता गया। "मगर जानती हैं कि कैसा ख़त! ख़त भी तरह-तरह के होते हैं... आह, नास्तेन्का, मैं सच कहता हूं। मुझे पर भरोसा कीजिये, भरोसा कीजिये! मैं आपको कोई बुरी सलाह नहीं दूंगा। इस मामले को ठीक-ठाक किया जा सकता है। आप ही ने तो तब पहला क़दम उठाया था – तो अब क्या..."

"नहीं, यह ठीक नहीं होगा! तब ऐसा लगेगा मानो मैं अपने को उस पर थोप रही हूं..."

"आह, मेरी दयालु नास्तेन्का," मैंने अपनी मुस्कान को न छिपाते हुए उसे टोका। "नहीं, ऐसी बात नहीं है। आपको ऐसा करने का अधिकार है, क्योंकि उसने आपसे वादा किया था। सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मैं इस नतीजे पर पहुंचता हूं कि वह शरीफ़ आदमी है, कि उसने बहुत अच्छा व्यवहार किया है," अपने तर्कों और निष्कर्षों की सुसंगतता से अधिकाधिक ख़ुश होता हुआ मैं कहता गया। "कैसा व्यवहार किया है उसने? उसने अपने को तो वचनबद्ध कर लिया। उसने कहा कि अगर शादी करेगा तो आपसे ही। मगर आपको उसने किसी तरह के बन्धन में नहीं बांधा। आप चाहें तो इसी वक़्त उससे शादी करने से इन्कार कर सकती हैं... इसलिये आप पहल कर सकती हैं, आपको इसका अधिकार है, उसकी तुलना में आपकी स्थिति इसलिये बेहतर है कि, उदाहरण के लिये, अगर आप उसे वचनमुक्त ही करना चाहती हों..."

"कहिये तो, आप कैसे लिखते?"

"क्या?"

"यही ख़त।"

"मैं तो ऐसे लिखता – 'श्रीमान जी...'"

"क्या यह लिखना ज़रूरी है – श्रीमान जी?"

"ज़रूरी है! मगर शायद ज़रूरी न हो? मैं सोचकर..."

"ख़ैर, ख़ैर! आगे बढ़िये।"

"'श्रीमान जी...

क्षमा कीजियेगा कि मैं...' नहीं, क्षमा मांगने की कोई ज़रूरत नहीं है। ख़ुद हक़ीक़त ही हर चीज़ की सफ़ाई पेश करती है। सीधे-सादे लिखिये –

"'मैं आपको पत्र लिख रही हूं। मेरी इस अधीरता के लिये क्षमा कीजियेगा। मैं साल भर आशा को दिल में संजोये हुए सुखी रही। क्या मैं इसके लिये दोषी हूं कि अब शंका का एक दिन भी नहीं काट पाती? अब, जबकि आप यहां आ चुके हैं, शायद आपने अपना इरादा बदल लिया है। तब यह पत्र आपसे कहेगा कि मैं न तो आपकी शिकायत करती हूं और न आपको दोषी ही ठहराती हूं। अगर आपका दिल नहीं जीत सकती, तो इसके लिये आपको दोष कैसे दे सकती हूं। मेरा भाग्य ही ऐसा है।

"'आप सज्जन व्यक्ति हैं। अधीरता में लिखी गई इन पंक्तियों पर आप न तो मुस्करायेंगे और न झल्लायेंगे ही। याद रखिये कि एक बेचारी दीन लड़की ने इन्हें लिखा है, कि वह एकाकी है, कि उसे सीख और सलाह देनेवाला कोई नहीं है, कि वह स्वयं अपने दिल को कभी वश में नहीं रख पायी है। मगर घड़ी भर को भी मेरी आत्मा में जो शंका घुस आई थी, उसके लिये मुझे क्षमा कीजियेगा। आप तो विचारों में भी कभी उसके दिल को ठेस नहीं लगा सकते जो आपको इतना प्यार करती थी और करती है।'"

"हां, हां! यह तो बिल्कुल वैसा ही है जैसा कि मैंने सोचा था!" नास्तेन्का चिल्लायी और उसकी आंखों में ख़ुशी चमक उठी। "ओह! आपने मेरे सन्देह दूर कर दिये, स्वयं भगवान ने आपको मेरे पास भेजा है! आभारी हूं, आपकी बहुत आभारी हूं!"

"किस चीज़ के लिये? इसलिये कि स्वयं भगवान ने मुझे भेजा है?" उसके खिले चेहरे को ख़ुशी से देखते हुए मैंने कहा।

"हां, चाहे इस के लिये ही सही।"

"आह, नास्तेन्का! कभी-कभी हम कुछ लोगों के केवल इसलिये आभारी होते हैं कि वे हमारे साथ इस दुनिया में सांस लेते

हैं। मैं आपका इसलिये आभारी हूं कि आपसे मेरी भेंट हुई, कि जीवन भर आपको याद रखूंगा।"

"बस, बस, काफ़ी है! अब मेरी बात सुनिये – तब हम दोनों ने यह तय किया था कि जैसे ही वह यहां आयेगा, वैसे ही मेरे परिचितों को, जो भले और सीधे-सादे लोग हैं और इस बारे में कुछ भी नहीं जानते, पत्र भेजकर अपने आने की सूचना देगा। अगर पत्र लिखना ठीक नहीं होगा, क्योंकि पत्र में सभी कुछ तो हमेशा बयान नहीं किया जा सकता, तो यहां आने के दिन ही रात के ठीक दस बजे इसी जगह, जहां हमने मिलने की जगह तय की थी, आ जायेगा। वह आ गया है, यह मुझे मालूम है। उसे यहां आये हुए आज तीसरा दिन हो गया है, मगर न तो उसका ख़त आया है और न वह ख़ुद ही। दिन के वक़्त नानी को छोड़कर जाना मेरे लिये बिल्कुल असम्भव है। उन भले लोगों को, जिनकी मैं आपसे चर्चा कर रही हूं, कल मेरा ख़त दे दीजियेगा। वे ख़ुद ही उसे भेज देंगे और अगर कोई जवाब आयेगा तो आप ही रात के दस बजे उसे वहां ले आइयेगा।"

"मगर ख़त, ख़त कहां है! उसे तो अभी लिखना होगा! इसलिये परसों ही यह सब हो सकेगा।"

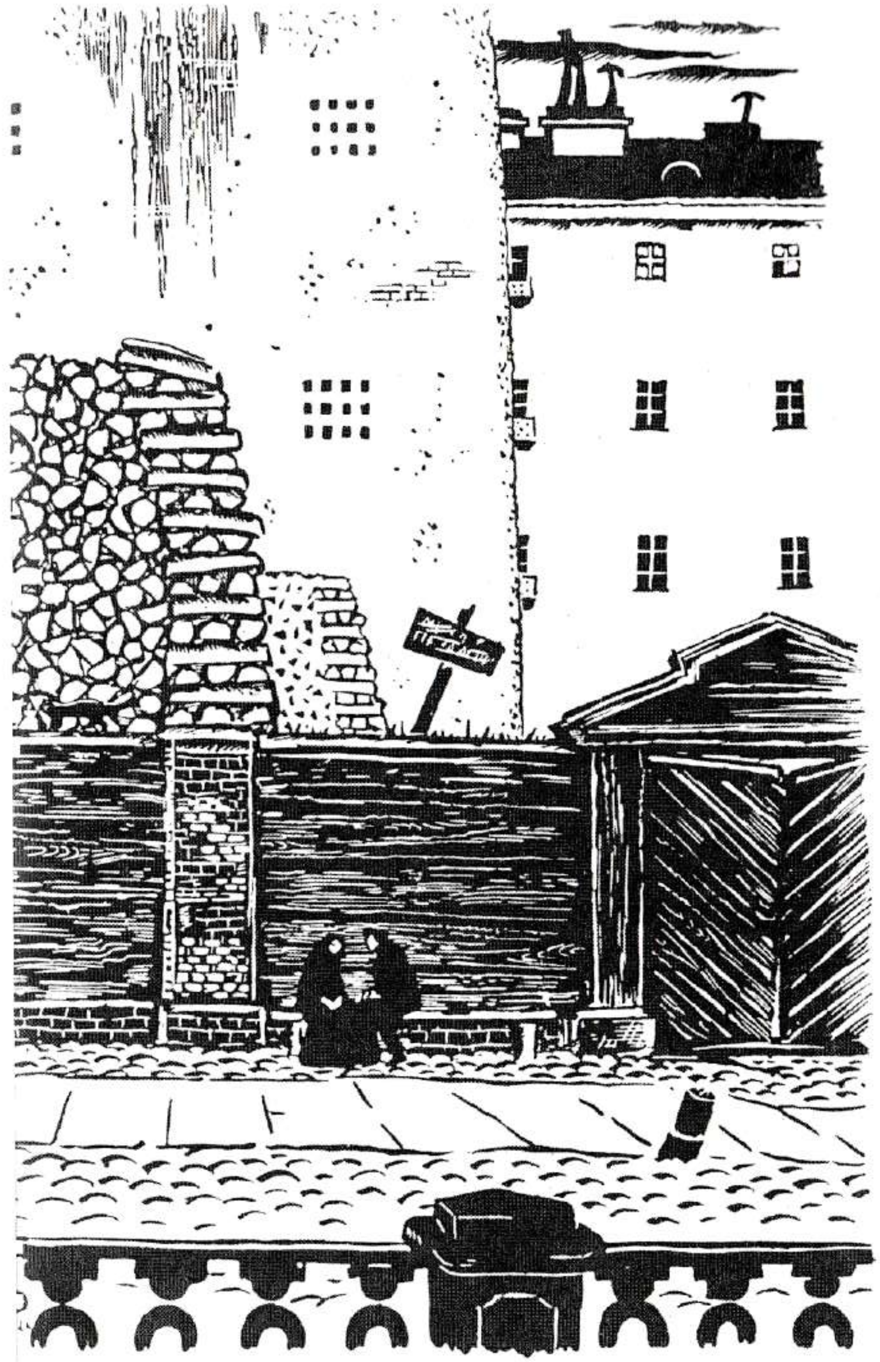
"ख़त..." नास्तेन्का ने तनिक घबराकर कहा, "ख़त..."

उसने अपनी बात पूरी नहीं की। उसने अपना मुंह फेर लिया, गुलाब की तरह लज्जारुण हुई और अचानक मैंने अपने हाथ में पत्र अनुभव किया। ज़ाहिर है कि वह पहले से ही लिख लिया गया था, बिल्कुल तैयार और मुहरबन्द था। कोई जानी-पहचानी, प्यारी-प्यारी और मधुर स्मृति मेरे मस्तिष्क में कौंध गई।

"रो-ज़ी-ना," मैंने शुरू किया।

"रोज़ीना!" हम दोनों एक साथ गा उठे। ख़ुशी की तरंग में मैं तो उसे बाहुपाश में बांधता-बांधता ही रह गया, वह शर्म से बेहद लाल हो उठी और आंसुओं के बीच, जो मोतियों की तरह उसकी काली पलकों पर चमक रहे थे, हंसती रही।

"बस, काफ़ी है, काफ़ी है! अब विदा!" उसने जल्दी-जल्दी कहा। "यह ख़त लीजिये और यह रहा वह पता जहां इसे पहुंचाना है। विदा! नमस्ते! कल फिर मिलेंगे!"



उसने तपाक से मेरे दोनों हाथ दबाये, सिर झुकाया और तनी हुई अपने कूचे की ओर उड़ चली। मैं देर तक वहीं खड़ा रहा, उसे जाते हुए देखता रहा।

"कल फिर मिलेंगे! कल फिर मिलेंगे!" उसके नज़र से ओझल हो जाने पर ये शब्द मेरे दिमाग़ में गूंजते रहे।

तीसरी रात

आज दिन बहुत उदास-उदास था, पानी बरसता रहा, अंधेरा-सा छाया रहा। मेरे भावी बुढ़ापे-सा ही सूना दिन था यह। बड़े अजीब-अजीब-से विचार, बड़ी धुंधली-धुंधली-सी भावनायें, अस्पष्ट-से प्रश्न मेरे मन में उमड़-घुमड़ रहे थे। उन्हें समझने की न तो मुझमें शक्ति थी और न इच्छा ही। इनका समाधान ढूंढ़ना मेरे बस की बात नहीं थी!

आज हमारी भेंट नहीं होगी। कल, हमारे विदा लेने के समय आकाश में बादल घिरने लगे थे, कुहासा छाने लगा था। मैंने कहा था कि कल मौसम बहुत बुरा रहेगा। उसने कोई उत्तर नहीं दिया था, वह अपने को निराश नहीं करना चाहती थी। उसके लिये तो ऐसा दिन भी उजला और रोशन होगा, उसकी खुशी पर तो छोटी-सी बदली भी नहीं छा सकेगी।

"अगर बारिश होगी, तो हम नहीं मिलेंगे!" उसने कहा। "मैं नहीं आऊंगी।"

मेरा ख़्याल था कि आज की बारिश की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया होगा, मगर फिर भी वह नहीं आई।

कल हमारी तीसरी मुलाक़ात हुई थी, कल हमारी तीसरी रजत रात थी...

हां, खुशी और सुखसौभाग्य व्यक्ति को कितना अद्भुत बना देते हैं! प्यार दिल में छलका पड़ता है! ऐसी इच्छा होती है कि हम अपने दिल का सारा प्यार किसी दूसरे दिल में उंडेल दें, जी चाहता है कि हर चीज़ खुश हो, हर चीज़ हंसे- मुस्कराये। कैसे दूसरों को

अपनी छूत देती है यह खुशी! कल उसके शब्दों में कितना परम सुख था, मेरे प्रति कितनी सरसता थी... कितनी मधुर थी वह मेरे साथ, कैसे मुझे दुलारती थी, कैसे मेरे दिल को दिलासा देती थी, सहलाती थी! ओह, इसी खुशी के कारण कितनी चंचलता दिखायी थी उसने! और मैंने... मैंने यह सब कुछ सच समझा था। मैंने सोचा था कि वह...

मगर, हे भगवान, मैंने ऐसा सोचा ही कैसे? मेरी आंखों पर यह परदा कैसे है, जबकि सब कुछ कोई दूसरा लूट चुका है, जब सब कुछ पराया है, जब मेरे प्रति उसकी वह कोमलता, वह लाड़, वह प्यार... हां, मेरे प्रति उसका प्यार भी, जल्द ही दूसरे से होनेवाले मिलन की खुशी, मुझ पर अपनी खुशी थोपने की इच्छा के सिवा कुछ नहीं था?.. मगर जब वह नहीं आया, जब उसकी राह देखते-देखते हम निराश हो गये थे, तब कैसे उसके माथे पर बल पड़े थे, वह कैसे सहम गई थी, भयभीत हो उठी थी। उसके हावों-भावों, उसके शब्दों में वह चंचलता, चपलता, वह खुशी नहीं रही थी। और कितनी अजीब बात है यह कि वह मेरी ओर पहले से कहीं अधिक ध्यान देने लगी थी मानो सहज भाव से वही कुछ मुझ पर उंडेल देना चाहती हो, जिसकी स्वयं इच्छुक थी, जिसके न होने के भय से आतंकित थी। मेरी नास्तेन्का इतनी सहम गई थी, इतनी भयभीत हो उठी थी, लगता है कि आखिर यह समझ गई थी कि मैं उसे प्यार करता हूं और उसे मेरे कातर प्यार पर दया आ गई थी। इसीलिये जब हम खुद दुःखी होते हैं, तो दूसरों के दुःख की हमें कहीं अधिक अनुभूति होती है; तब भावना मरती नहीं, संकेन्द्रित हो जाती है...

मैं भावनाओं से ओत-प्रोत हृदय लिये हुए उससे मिलने गया और मिलन-बेला की प्रतीक्षा मुझ पर बहुत भारी गुज़री। मुझे इसका पूर्वाभास नहीं हुआ था जो अब अनुभव करूंगा, यह पूर्वाभास नहीं हुआ था कि अन्त कुछ दूसरा ही होगा। उसकी खुशी फूटी पड़ रही थी, वह जवाब की प्रतीक्षा में थी। जवाब वह खुद ही हो सकता था। वह आयेगा, उसकी पुकार पर दौड़ता हुआ आयेगा। वह मेरे पहुंचने से एक घण्टा पहले ही आ गई थी। शुरू में वह हर बात पर ठहाके लगाती रही, मेरे हर शब्द पर हंसती

रही। मैं अपनी बात कहनेवाला था, मगर चुप्पी लगा गया।

"जानते हैं कि मैं इतनी खुश क्यों हूं!" उसने कहा। "आपको देखकर किसलिये इतनी प्रसन्न हूं? क्यों इतना प्यार करती हूं आज आपको?"

क्यों?" मैंने पूछा और मेरी हृदय कांप उठा।

"मैं इसलिये प्यार करती हूं आपको कि आप मुझसे प्यार नहीं करने लगे। आपकी जगह कोई दूसरा होता तो परेशान करने लगता, पीछे पड़ जाता, आहें भरता, उद्विग्न हो उठता, मगर आप इतने भले हैं!"

इतना कहकर उसने इतने ज़ोर से मेरा हाथ दबाया कि मैं चिल्लाता-चिल्लाता रह गया। वह हंस दी।

"हे भगवान! कितने अच्छे दोस्त हैं आप!" घड़ी भर बाद उसने बहुत गम्भीरता से कहना शुरू किया। "हां, भगवान ने ही आपको मेरे पास भेजा है! अगर इस समय आप मेरे साथ न होते, तो मुझ पर क्या गुज़रती? कितने निस्स्वार्थ हैं आप! कितना अच्छा है मेरे प्रति आपका प्यार! मेरे शादी कर लेने के बाद हम बहुत ही अच्छे मित्र होंगे, भाई-बहनों से भी बढ़कर। मैं आपको लगभग उसके समान ही प्यार करूंगी..."

इस क्षण मैं बेहद उदास हो गया, मगर हंसी जैसी कोई चीज़ मेरी आत्मा में हिली-डुली।

"इस वक़्त आप पर घबराहट का दौरा पड़ा हुआ है," मैंने कहा, "आप डर रही हैं, आपका ख़्याल है कि वह नहीं आयेगा।"

"यह आप क्या कह रहे हैं!" उसने कहा। "अगर मैं खुश न होती, तो लगता है कि आपके इस अविश्वास और फटकार से रो पड़ती। मगर फिर भी आपने मुझे सोच में डाल दिया है और मैं बहुत समय तक सोचती रहूंगी। पर ऐसा मैं बाद में करूंगी और इस वक़्त तो यह स्वीकार करती हूं कि आपने जो कुछ कहा, वह सच है। हां! मैं खुद अपने में नहीं हूं, प्रत्याशा में हूं और भावनाओं के वेग में बही जा रही हूं। पर ख़ैर, भावनाओं की बात नहीं करेंगे!.."

इसी वक़्त आहट सुनाई दी और अंधेरे में एक राहगीर हमारी ओर आता दिखाई दिया। हम दोनों कांप उठे, वह तो चीखती-चीखती रह गई। मैंने उसका हाथ छोड़ दिया और ऐसा संकेत किया मानो उससे दूर हटना चाहता हूं। किन्तु हमसे भूल हुई थी – यह वह नहीं था।

"आपको डर किस बात का है? आपने मेरा हाथ क्यों छोड़ दिया?" फिर से अपना हाथ मुझे देते हुए उसने कहा। "ऐसी भी क्या बात है? हम एकसाथ उससे मिलेंगे। मैं चाहती हूं कि वह यह देखे कि हम एक-दूसरे को कितना प्यार करते हैं।"

"हम एक-दूसरे को कितना प्यार करते हैं!" मैं चिल्ला उठा।

"ओह, नास्तेन्का, नास्तेन्का।" मैंने मन ही मन सोचा। "इन शब्दों में तुमने कितना कुछ कह डाला है! इस तरह के प्यार से, नास्तेन्का, कभी-कभी दिल में झुरझुरी होने लगती है और आत्मा बोझिल हो उठती है। तुम्हारा हाथ ठण्डा है और मेरा आग की तरह गर्म। बिल्कुल अन्धी हो तुम तो, नास्तेन्का!.. ओह! कभी-कभी सुखी आदमी कितना असह्य हो जाता है। मगर मैं तुमसे नाराज़ नहीं हो सकता!.."

आखिर मेरे दिल का प्याला छलक गया।

"सुनिये, नास्तेन्का।" मैं चिल्ला उठा। "जानती हैं कि आज दिन भर मेरे साथ क्या बीतती रही है?"

"क्या बीतती रही है? कहिये! आप अब तक चुप्पी क्यों साधे रहे!"

"सबसे पहले तो यह कि मैंने आपके सभी आदेश पूरे कर दिये, आपके भले लोगों के पास जाकर ख़त दे दिया, और उसके बाद... और उसके बाद मैं घर जाकर सो रहा।"

"बस, इतना ही?" उसने हंसते हुए मुझे टोका।

"हां, लगभग इतना ही," मैंने दिल पर क़ाबू पाते हुए जवाब दिया, क्योंकि नादान आंसू आंखों में उमड़ने लगे थे। "हमारी मिलन-बेला से एक घण्टा पहले मैं जागा, मगर जैसे कि सोया ही नहीं। मालूम नहीं कि मुझे क्या हुआ था। मैं आपको यह सब कुछ बताने यहां आ रहा था कि मानो समय मेरे लिये रुक गया, कि मानो इस समय से एक ही अनुभूति, एक ही भावना सदा-सदा को मेरे साथ रहेगी, कि मानो एक क्षण ही अनन्त काल तक बना रहेगा, कि समय ही मेरे लिये रुककर रह गया है... जब मैं जागा

तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो कोई चिर-परिचित धुन, जिसे मैंने कभी कहीं सुना था, बहुत प्यारी और भूली-बिसरी धुन, मुझे फिर से याद हो आयी है। मुझे लगा कि जीवन भर वह मेरी आत्मा में से फूट पड़ने को मचलती रही है और केवल अभी ..."

"आह, मेरे भगवान, मेरे भगवान!" नास्तेन्का ने मुझे टोका। "यह सब क्या है? मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आ रहा।"

"आह, नास्तेन्का! मैं इस अजीब अनुभूति को किसी तरह आप तक पहुंचा देना चाहता था..." मैंने दुःखी आवाज़ में कहना शुरू किया, जिसमें अभी भी, बेशक बहुत हल्की-सी आशा की किरण झलक रही थी।

"बस, बस, रहने दीजिये!" उसने कहा और यह चालाक लड़की पलक झपकते ही सब कुछ भांप गई!

अचानक वह असाधारण रूप से बातूनी, खुश और चंचल हो उठी। उसने मेरी बांह अपनी बांह में डाल ली, हंसने लगी और यह चाहा कि मैं भी हंसूं और घबराहट में कहे गये मेरे हर शब्द पर वह लम्बे और ज़ोरदार ठहाके लगाती... मैं झल्लाने लगा और उसने अचानक चोंचलेबाज़ी शुरू कर दी।

"एक बात कहूं," उसने कहना आरम्भ किया, "मुझे इस बात का थोड़ा-सा अफ़सोस तो है कि आपको मुझसे प्यार नहीं हुआ। अब आदमी को कोई समझ ही क्या सकता है! फिर भी श्रीमान हठीराम, आप इस बात के लिये मेरी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते कि मैं इतनी सीधी-सादी हूं। कैसी भी ऊट पटांग बात मेरे दिमाग़ में क्यों न आये, मैं आपसे सब कुछ, सभी कुछ कह देती हूं।"

"सुनिये! यह क्या ग्यारह बज रहे हैं?" दूरी पर शहर के घण्टाघर की घड़ी की मधुर टनटनाहत सुनते हुए मैंने कहा। वह अचानक हंसना बन्द करके खामोश हो गई और घण्टों को गिनने लगी।

"हां, ग्यारह बज गये हैं," आख़िर उसने सहमी और कांपती हुई आवाज़ में कहा।

मुझे फ़ौरन इस बात का अफ़सोस हुआ कि मैंने उसे डरा दिया, उसे घण्टों की गिनती करने के लिए मजबूर किया और झल्लाहट

के दौरे के लिये मैंने अपनी लानत-मलामत की। मैं उसके दुःख से दुःखी हो उठा और यह नहीं समझ पा रहा था कि अपने इस पाप के प्रायश्चित के लिये क्या करूं। मैं उसे तसल्ली देने, उसके न आने के बहाने गढ़ने लगा, तरह-तरह की दलीलें और सबूत पेश करने लगा। नास्तेन्का को इस वक़्त धोखा देना तो बहुत ही आसान था। वास्तव में ऐसी स्थिति में कोई भी हर तरह की तसल्ली पर खुशी से कान देने को तैयार होगा, मामूली-सी सफ़ाई पेश किये जाने पर खुश होगा।

"हां, और यह बड़ी अजीब-सी बात है," अधिकाधिक उत्साहित और अपने तर्कों की असाधारण स्पष्टता पर मुग्ध होते हुए मैंने कहना शुरू किया, "वह तो आ ही नहीं सकता था। आपने तो मुझे भी उलटे चक्कर और भ्रम में डाल दिया, नास्तेन्का। यहां तक कि मैं भी वक़्त का हिसाब भूल गया... आप ज़रा ध्यान दीजिये – उसे ख़त अभी मिला ही होगा, हो सकता है कि वह आने में असमर्थ हो, हो सकता है कि वह जवाब दे और तब कल से पहले तो ख़त आ ही नहीं सकता। मैं कल सुबह ही सुबह इसके लिये जाऊंगा और फ़ौरन आपको इसकी ख़बर दूंगा। यह भी ध्यान में रखिये कि हज़ारों अप्रत्याशित बातें हो सकती हैं – जब ख़त पहुंचा हो, तो मुमकिन है कि वह घर पर न हो और यह भी सम्भव है कि अब तक उसे ख़त मिला ही न हो? सभी कुछ तो हो सकता है।"

"हां, हां!" नास्तेन्का ने जवाब दिया। "मैंने यह सब तो सोचा ही नहीं। बेशक, सब कुछ हो सकता है," वह विनम्र अन्दाज़ में कहती गई, मगर किसी दूसरे, किसी अस्पष्ट-से विचार का अवसादपूर्ण और बेसुरा स्वर उसकी आवाज़ में सुनाई दे रहा था। "तो आप ऐसा कीजिये," उसने अपनी बात जारी रखी, "कल सुबह आप, जितनी भी जल्दी हो सके, वहां जाइये और अगर कोई जवाब मिले, तो फ़ौरन मुझे उसकी ख़बर दीजिये। आप तो जानते ही हैं कि मैं कहां रहती हूं?" और उसने फिर से मुझे अपना पता बताया।

इसके बाद वह अचानक मेरे प्रति बहुत ही स्नेहशील, बहुत ही विनीत हो गयी... वह मेरी बातों को बहुत ध्यान से सुनती प्रतीत हुई, मगर जब मैंने उससे कोई सवाल किया, तो वह चुप

रही, घबरा गयी और उसने मुंह फेर लिया। मैंने उसकी आंखों में झांका – मेरा अनुमान सही निकला – वह रो रही थी।

"हटाइये भी, हटाइये भी! ओह, आप भी कैसी बच्ची हैं! क्या बचपना है यह!.. बस, रहने भी दीजिये इसे!"

उसने मुस्कराने, शान्त होने की कोशिश की, मगर उसकी ठोड़ी कांपती रही, वह गहरी सांसें लेती रही।

'मैं आपके बारे में सोच रही हूं," घड़ी भर चुप रहने के बाद उसने कहा, "आप इतने अच्छे हैं कि अगर मैं यह अनुभव न करती, तो निरी पत्थर ही होती... जानते हैं कि इस वक़्त मेरे दिमाग़ में क्या ख्याल आया है? मैंने आप दोनों की तुलना की है। काश, उसकी जगह आप होते! आप जैसा क्यों नहीं है वह? आप उससे बेहतर हैं, यद्यपि मैं उसे आपसे अधिक प्यार करती हूं।"

मैंने जवाब में कुछ भी नहीं कहा। हां, यह लगा कि वह मेरे कुछ कहने की प्रत्याशा में रही।

"बेशक, यह हो सकता है कि मैं अभी उसे पूरी तरह समझती नहीं हूं, अच्छी तरह जानती नहीं हूं। बात यह है कि मैं तो मानो उससे डरती रही थी। वह हमेशा ही इतना गम्भीर, मानो घमण्डी-सा रहता था। वैसे निश्चय ही मैं यह जानती हूं कि वह केवल ऐसा प्रतीत होता है, कि उसके हृदय में मुझसे कहीं अधिक कोमलता है... मुझे याद है, जैसा कि मैं आपको बता चुकी हूं, कि जब मैं गठरी लिये हुए उसके पास पहुंची, तो उसने कैसे मेरी ओर देखा था। मगर फिर भी मैं उसकी बहुत ही अधिक इज़्ज़त करती हूं और यह तो ऐसे लगता है मानो हम बराबर के न हों?"

"नहीं, नास्तेन्का, नहीं," मैंने कहा, "इसका मतलब तो यह है कि आप दुनिया में उसी को सबसे ज़्यादा, खुद अपने से भी ज़्यादा प्यार करती हैं।"

"मान लीजिये कि यह ऐसा ही है," भोली-भाली नास्तेन्का बोली, "जानते हैं कि अब क्या विचार मेरे दिमाग़ में आया है? मगर अब मैं उसकी नहीं, आम बात करूंगी। मैं बहुत पहले से ही यह सोचती रही हूं। हम सभी भाइयों जैसे क्यों नहीं हो जाते? अच्छे से अच्छा आदमी हमेशा दूसरों से कुछ छिपाता क्यों है, किसी चीज़ के बारे में चुप्पी क्यों लगा जाता है? अगर वह बेकार बक-बक नहीं करता, तो जो कुछ उसके दिल में है, फ़ौरन उसे कह क्यों नहीं देता? हर कोई अपने को हक़ीक़त से ज़्यादा कठोर ज़ाहिर करने की कोशिश करता है मानो डरता हो कि झटपट अपनी भावनायें व्यक्त करके वह उनका अपमान कर देगा..."

"आह, नास्तेन्का! आप सच कह रही हैं, मगर ऐसा तो कई कारणों से होता है," इस क्षण अपनी भावनाओं को इतना अधिक छिपाते हुए, जितना कि पहले कभी नहीं छिपाया था, मैंने उसकी बात काटी।

"नहीं, नहीं!" अत्यधिक भावना-विभोर होकर उसने कहा। "मसलन आप दूसरों जैसे नहीं हैं! मैं सचमुच यह नहीं जानती कि जो कुछ अनुभव कर रही हूं, उसे आपके सामने कैसे व्यक्त करूं, किन्तु मुझे लगता है कि... बेशक, उदाहरण के लिये... इसी समय... मुझे ऐसा लगता है कि मेरी ख़ातिर आप कुछ बलिदान कर रहे हैं," मुझ पर उड़ती-सी नज़र डालकर उसने सहमे-सहमे कहा। "अगर मैं आपसे ऐसे कह रही हूं तो इसके लिये आप मुझे क्षमा कर दीजियेगा – मैं तो सीधी-सादी लड़की हूं, अभी मैंने दुनिया को देखा-जाना ही बहुत कम है और सचमुच कभी-कभी तो अपनी बात भी नहीं कह पाती," उसने किसी गुप्त भावना से कांपती आवाज़ में और साथ ही मुस्कराने की कोशिश करते हुए कहा। "मगर आपसे केवल इतना कहना चाहती हूं कि इस बात के लिये भी आभारी हूं कि मैं भी यह सब कुछ अनुभव करती हूं... ओह, इसके लिये भगवान आपको सुखी करे! हां, और उस दिन आपने अपने स्वप्नदर्शी के बारे में जो कुछ कहा था, वह सब झूठ है, मेरा मतलब यह है कि आपसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। आप स्वस्थ हो रहे हैं, आपने अपनी जो तस्वीर पेश की थी, आप वास्तव में उससे बिल्कुल भिन्न हैं। अगर आपको कभी किसी से प्यार हो जाये, तो मेरी तो यही कामना है कि भगवान आपको उसके साथ सौभाग्यशाली बनाये! उसके लिये तो मैं किसी भी चीज़ की कामना नहीं करती हूं, क्योंकि मैं जानती हूं कि वह आपके साथ सौभाग्यवती होगी। मैं यह जानती हूं, मैं खुद औरत हूं और अगर मैं ऐसा कहती हूं तो आपको मुझ पर अवश्य विश्वास करना चाहिये..."

वह चुप हो गयी और उसने ज़ोर से मेरा हाथ दबाया। मैं भी भावाभिभूत होने के कारण कुछ न कह सका। कुछ मिनट गुज़र गये।

"हां, लगता है कि वह आज नहीं आयेगा!" सिर ऊपर उठाकर उसने आखिर कहा। "काफ़ी देर हो चुकी है!.."

"वह कल आयेगा," मैंने बहुत ही विश्वासभरी और दृढ़ आवाज़ में कहा।

"हां," उसने खिलते हुए कहा, "यह तो अब मैं खुद भी देख रही हूं कि वह केवल कल ही आयेगा। तो नमस्ते! कल फिर मिलेंगे! अगर बारिश हुई, तो शायद मैं न आऊं। मगर परसों, चाहे कुछ भी क्यों न हो, मैं ज़रूर आऊंगी। आप अवश्य ही यहां आइयेगा। मैं चाहती हूं कि आप ज़रूर आयें, मैं आपको सब कुछ बताऊंगी।"

विदा होते समय उसने अपना हाथ मेरे हाथ में देते हुए खिले चेहरे से मेरी ओर देखकर कहा:

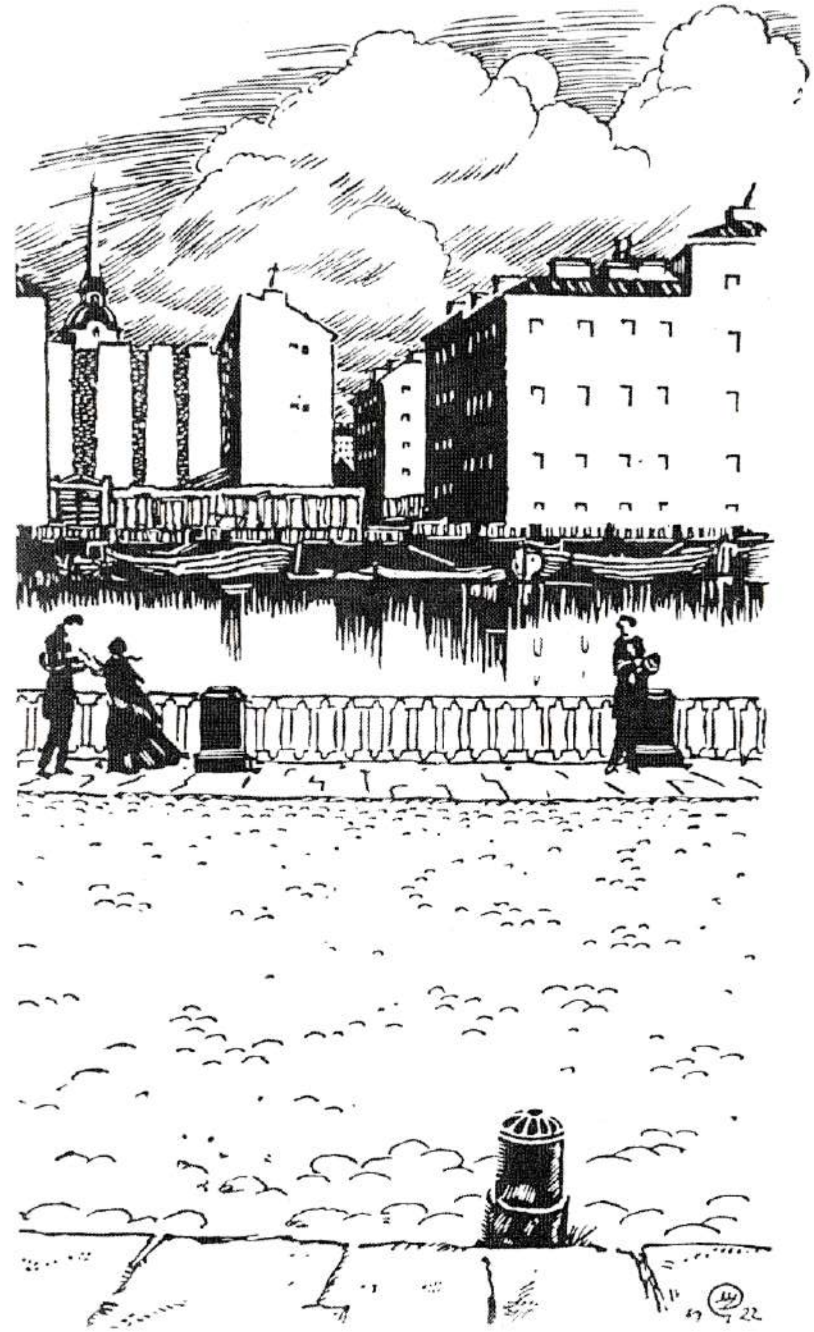
"हम तो अब हमेशा साथ-साथ हैं न?"

ओह, नास्तेन्का! काश तुम्हें मालूम होता कि अब मैं कितना एकाकी हूं!

जब नौ बजे, तो मेरे लिये कमरे में बैठे रहना दूभर हो गया और मैं बरखा-बूंदी के बावजूद कपड़े पहनकर बाहर चला गया। मैं वहां पहुंचा, हमारी बेंच पर बैठा। मैं उनके कूचे में जा पहुंचा, मगर मुझे शर्म महसूस हुई और उनकी खिड़की तक पर नज़र डाले बिना ही उनके घर के बिल्कुल पास से वापस आ गया। मैं ऐसा लुटा-लुटा-सा घर लौटा, जैसा कि पहले कभी नहीं हुआ था। कितनी नमी थी हवा में, कैसा उदासीभरा समय था! अगर मौसम अच्छा होता तो मैं रात भर वहां घूमता रहता...

मगर कल तक, कल तक इन्तज़ार करना होगा! कल वह मुझे सब कुछ बतायेगी।

खत आज नहीं आया। वैसे आना भी नहीं चाहिये था। वे दोनों तो अब एकसाथ हैं...



चौथी रात

हे, भगवान, कैसा अन्त हुआ इस सब का! कैसा अन्त हुआ इस सारे क़िस्से का!

मैं नौ बजे आया। वह वहां पहले से ही मौजूद थी। मैंने उसे दूर से ही देख लिया था। वह पहली बार की भांति घाट के जंगले पर कोहनियां टिकाये हुए खड़ी थी। उसने मेरे पैरों की आहट नहीं सुनी।

"नास्तेन्का!" अपनी उत्तेजना को जैसे-तैसे दबाते हुए मैंने उसे पुकारा।

वह जल्दी से मेरी ओर घूमी।

"तो," वह बोली, "तो! जल्दी कीजिये न!"

मैं उसका मुंह ताकता हुआ खड़ा रह गया।

"तो, कहां है खत? खत लाये?" जंगले को हाथ से थामते हुए उसने पूछा।

"खत, मेरे पास खत नहीं है," आखिर मैंने कहा। "तो क्या वह अभी तक नहीं आया?"

एकदम उसके चेहरे का रंग उड़ गया और देर तक वह मुझे एकटक देखती रही। मैंने उसकी आखिरी उम्मीद तोड़ डाली थी।

"नहीं, तो न सही!" आखिर उसने टूटती-सी आवाज़ में कहा। "अगर वह इसी तरह से मुझे ठुकराये दे रहा है, तो ऐसा ही सही।"

उसने नज़र झुका ली, कुछ क्षण बाद मेरी ओर देखना चाहा, मगर ऐसा न कर सकी। कुछ और देर तक उसने मन के तूफ़ान पर क़ाबू पाने की कोशिश की, मगर फिर अचानक मुंह फेर लिया और घाट के जंगले का सहारा लेकर आंसुओं की झड़ी लगा दी।

"बस कीजिये, बस कीजिये!" मैंने कहना शुरू किया, मगर उसकी हालत देखते हुए मैं अपनी बात जारी न रख सका। लेकिन मैं कहता भी, तो क्या?

"मुझे तसल्ली नहीं दीजिये," उसने रोते हुए कहा, "उसके बारे में कुछ नहीं कहियेगा, यह नहीं कहियेगा कि वह आयेगा, कि उसने मुझे ऐसे क्रूर, ऐसे अमानुषी ढंग से नहीं ठुकराया है, जैसा कि उसने किया है। मगर क्यों? किसलिये? क्या मेरे खत में, मेरे उस क़िस्मत के मारे खत में कोई ऐसी बात थी?.."

यहां उसका गला सिसकियों से रुंध गया। उसे देखते हुए मेरा कलेजा मुंह को आता था।

"ओह, कैसी अमानुषी क्रूरता है यह!" उसने फिर से कहना शुरू किया। "एक पंक्ति, एक पंक्ति तक नहीं! और कुछ नहीं, तो इतना ही लिख देता कि उसे मेरी ज़रूरत नहीं है, कि वह मुझसे नाता तोड़ता है। मगर पूरे तीन दिनों में एक पंक्ति भी नहीं! कितना आसान है उसके लिये एक ग़रीब और असहाय लड़की का अपमान करना, उसके दिल को ठेस लगाना, जिसका सिर्फ़ यही अपराध है कि वह उसे प्यार करती है! ओह, कितना कुछ सहा है मैंने इन तीन दिनों में। हे भगवान, हे भगवान! मुझे याद आता है कि कैसे मैं पहली बार उसके पास गई थी, कैसे मैंने अपने आप को अपमानित किया था, रोई-गिड़गिड़ाई थी, ज़रा-से प्यार की भीख मांगी थी... और इस सब कुछ के बाद यह!.. मगर सुनिये," उसने मुझे सम्बोधित करते हुए कहा और उसकी काली आंखें चमक उठीं, "नहीं, ऐसा कुछ नहीं है! ऐसा हो ही नहीं सकता, यह सब अस्वाभाविक है! या तो आपसे, या फिर मुझसे कोई भूल हुई है। मुमकिन है कि उसे अभी तक खत ही न मिला हो? मुमकिन है कि वह अभी तक कुछ जानता ही न हो? आप खुद ही सोचिये, बताइये मुझे, भगवान के लिये समझाइये मुझे, क्योंकि मेरी समझ में यह बात नहीं आ रही कि कैसे कोई ऐसा बर्बर व्यवहार कर सकता है, जैसा उसने मेरे साथ किया है! एक शब्द तक नहीं! बुरे से बुरे व्यक्ति के साथ भी अधिक सहानुभूति बरती जाती है। हो सकता है कि उसने मेरे बारे में कुछ भला-बुरा सुना हो, हो सकता है कि किसी ने मेरे खिलाफ़ उसके कान भर दिये हों?" मुझसे प्रश्न करते हुए वह चिल्लाई। "क्या ख्याल है आपका?"

"सुनिये, नास्तेन्का, मैं आपकी ओर से कल उसके पास जाऊंगा।"

"फिर?"

"मैं उससे सब कुछ पूछूंगा, उसे सब कुछ बताऊंगा।"

"फिर, फिर!"

"आप मुझे खत लिख दीजियेगा। इन्कार नहीं कीजियेगा, नास्तेन्का, इन्कार नहीं कीजियेगा! मैं उसे आपके व्यवहार का सम्मान करने को विवश करूंगा। उसे सब कुछ मालूम हो जायेगा और अगर ..."

"नहीं, मेरे दोस्त, नहीं," उसने मुझे टोका, "बस, काफ़ी हो चुका! एक शब्द, एक भी शब्द, एक भी पंक्ति मैं अब नहीं लिखूंगी। बस, बहुत हो चुका। मैं उसे नहीं जानती, मैं अब उसे प्यार नहीं करती, मैं उसे भूल जा-ऊंगी ..."

वह अपनी बात पूरी नहीं कर पाई।

"शान्त हो जाइये, शान्त हो जाइये! बैठ जाइये यहां, नास्तेन्का," उसे बेंच पर बिठाते हुए मैंने कहा।

"मैं शान्त हूं। बस! यह तो सब ऐसे ही है। ये आंसू, ये तो सूख जायेंगे। आप क्या सोचते हैं कि मैं अपनी जान दे दूंगी, डूब मरूंगी?.."

मेरा दिल भरा हुआ था। मैंने कुछ कहना चाहा, मगर कह न सका।

"सुनिये!" मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर वह कहती गई, "कहिये, आप तो ऐसा न करते, न? आप तो खुद ही आपके पास आ जानेवाली को न ठुकराते, आप तो उसके भावुक, उसके पागल दिल का ढिठाई से उपहास न उड़ाते? आप तो उसे सहेज लेते न? आप तो इस बात को ध्यान में रखते कि वह एकाकी है, कि वह अपने को वश में नहीं रख सकी, कि वह अपने को आपके प्यार की लपट से न बचा सकी, कि वह दोषी नहीं है, कि वह अपराधी नहीं है ... कि उसने कोई भी तो क़सूर नहीं किया है!.. हे भगवान, हे भगवान ..."

"नास्तेन्का!" अपनी भावनाओं की ज्वार पर क़ाबू न पाते हुए आखिर मैं चिल्ला उठा। "नास्तेन्का! आप मेरे दिल के टुकड़े-टुकड़े किये दे रही हैं! आप मेरे दिल में ज़हर उंडेल रही हैं, मेरी हत्या कर रही हैं, नास्तेन्का! मैं चुप नहीं रह सकता! आखिर मुझे बोलना ही होगा, वह कहना ही होगा, जो मेरे इस दिल में भरा हुआ है ..."

यह कहते हुए मैं बेंच से उठकर खड़ा हो गया। उसने मेरा हाथ

अपने हाथ में ले लिया और हैरानी से मेरी ओर देखती रह गई।

"यह क्या हुआ है आपको?" आखिर उसने पूछा।

"सुनिये!" मैंने दृढ़तापूर्वक कहा। "मेरी बात सुनिये, नास्तेन्का! मैं अब जो कुछ कहूंगा, वह सब बकवास है, हवाई क़िला है, बेसिरपैर की बात है। मैं जानता हूं कि यह सब कुछ कभी हक़ीक़त नहीं बन सकता, मगर मैं चुप भी नहीं रह सकता। जिसके कारण आप अब यातना सह रही हैं, उसी के नाम पर मैं पहले से ही मुझे क्षमा कर देने का आपसे अनुरोध करता हूं!.."

"मगर कुछ कहिये तो!" उसने रोना बन्द करके मुझे एकटक देखते हुए कहा। उसकी आश्चर्यचकित आंखों में एक अजीब-सी जिज्ञासा चमक रही थी, "आपको यह हुआ क्या है?"

"यह सपना, झूठा सपना ही रहेगा, मगर मैं आपको प्यार करता हूं, नास्तेन्का! समझीं! बस, सब कुछ कह चुका!" मैंने हाथ झटककर कहा। "अब आप ही तय करें कि क्या उसी तरह मुझसे बातचीत कर सकती हैं, जैसे अभी तक कर रही थीं, क्या वह सब कुछ सुन सकती हैं जो मैं आपसे कहूंगा ..."

"मगर इसमें ऐसी बात ही कौन-सी है?" नास्तेन्का ने मुझे टोका। "क्या फ़र्क़ पड़ता है इससे? मैं तो बहुत पहले से ही यह जानती थी कि आप मुझसे प्यार करते हैं। किन्तु मुझे लगता था कि आप कुछ ऐसे ही, योंही मामूली तौर पर मुझे प्यार करते हैं ... हे भगवान, हे भगवान!"

"शुरू में तो कुछ ऐसे ही था, मगर अब, अब ... अब मेरी बिल्कुल वही हालत है, जैसी आपकी उस समय थी, जब आप अपनी गठरी लेकर उसके पास गई थीं। मेरी हालत आपसे ज़्यादा ख़राब है, नास्तेन्का, क्योंकि उस समय उसे किसी से प्यार नहीं था, मगर आप प्यार करती हैं।"

"यह आप मुझसे क्या कह रहे हैं! मैं तो आपको बिल्कुल नहीं समझ पा रही हूं। मगर सुनिये तो, यह सब किसलिये है, मेरा मतलब, किसलिये नहीं, बल्कि क्यों आपने यह ... और वह भी ऐसे अचानक ... हे भगवान! मैं ऊल-जलूल बातें कह रही हूं! मगर आप ..."

नास्तेन्का बिल्कुल परेशान हो उठी। उसके गालों पर लालिमा

दौड़ गई, उसने नज़र झुका ली।

"मैं क्या करूं, नास्तेन्का, मैं क्या करूं! मैं अपराधी हूं, मैंने यह बहुत बुरा किया... मगर नहीं, नहीं, मैं अपराधी नहीं हूं, नास्तेन्का! मैं यह देख रहा हूं, अनुभव कर रहा हूं, क्योंकि मेरा दिल मुझसे कह रहा है कि मैंने ठीक किया है, क्योंकि मैं किसी तरह भी आपके दिल को ठेस नहीं पहुंचा सकता। मैं आपका अपमान नहीं कर सकता। मैं आपका दोस्त था, अब भी हूं। किसी तरह का भी आपसे विश्वासघात नहीं किया मैंने। देखिये, अब मेरे आंसू बहे जा रहे हैं। बहते हैं, तो बहते रहें – किसी का कुछ नहीं बिगाड़ते हैं। ये सूख जायेंगे, नास्तेन्का..."

"आप बैठ जाइये, बैठ जाइये," मुझे बेंच पर बैठाने की कोशिश करते हुए उसने कहा। "ओह, मेरे भगवान!"

"नहीं! मैं नहीं बैठूंगा, नास्तेन्का। मैं अब यहां और नहीं ठहर सकता, मैं आपसे फिर कभी नहीं मिलूंगा। मैं सब कुछ कहकर चला जाऊंगा। मै सिर्फ़ इतना कहना चाहता हूं कि आपको कभी यह पता न चलता कि मैं आपसे प्यार करता हूं। मैं अपने रहस्य को छिपाये रखता। अब, ऐसे क्षण में, अपने स्वार्थ से मैं आपका दिल न दुखाता। नहीं! मगर अब मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता था। आपने ख़ुद ही इसकी चर्चा कर दी, आप ही दोषी हैं, यह सब आप ही का दोष है, मैं दोषी नहीं हूं। आप मुझे दुतकार नहीं सकतीं..."

"नहीं, नहीं, मैं आपको नहीं दुतकारूंगी!" अपनी परेशानी को जैसे-तैसे छिपाते हुए बेचारी नास्तेन्का ने कहा।

"आप मुझे नहीं दुतकारेंगी न? नहीं, न? मगर मैं ख़ुद आपसे दूर भाग जाना चाहता था। और मैं भाग भी जाऊंगा, मगर पहले आपको सब कुछ बता दूंगा। कारण कि जब आप यहां अपनी बात कह रही थीं तो मैं बड़ी मुश्किल से वह सहन कर पा रहा था, जब आप यहां रो रही थीं, जब आप इस बात से बेहद दुःखी हो रही थीं, इस बात से, (अब मैं उसे कह ही दूंगा, नास्तेन्का), इस बात से कि आपको ठुकराया जा रहा है, कि आपके प्यार की उपेक्षा की जा रही है, तो मैंने अनुभव किया, मैंने देखा कि मेरे दिल में आपके लिये कितना अधिक प्यार है, नास्तेन्का, कितना अधिक!.. और इस बात से मेरा दिल ख़ून के आंसू रो दिया कि अपने इस प्यार से मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता... मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े होने लगा और मैं, मैं चुप नहीं रह सकता। मुझे बोलना पड़ा, नास्तेन्का, मुझे बोलना ही पड़ा!.."

"हां, हां। कहते जाइये, मुझसे ऐसे ही कहते जाइये!" एक अनबूझ-से उत्साह के साथ नास्तेन्का ने कहा। "शायद आपको यह अजीब-सा लग रहा होगा कि मैं आपसे ऐसा कह रही हूं, मगर... कहते जाइये! मैं बाद में आपसे अपनी बात कहूंगी। सब कुछ बताऊंगी आपको!"

"आपको मेरे लिये दुःख हो रहा है, नास्तेन्का, मेरे लिये आपको दुःख हो रहा है न, मेरी प्यारी-सी मित्र! जो होना था, वह हो चुका। ज़बान से जो कुछ निकल गया, वह लौटाया नहीं जा सकता। ऐसे ही है न? तो अब आप सब कुछ जानती हैं। तो यही हमारा आरम्भ-बिन्दु है। यह अच्छा है! अब सब कुछ बहुत ख़ूब है, लेकिन पूरी तरह मेरी बात सुन लीजिये। जब आप बैठी हुई रो रही थीं, तो मैंने मन ही मन सोचा (ओह, मुझे कहने दीजिये कि मैंने क्या सोचा था), मैंने सोचा कि (हां, यह तो ज़ाहिर ही है कि ऐसा नहीं हो सकता, नास्तेन्का), मैंने सोचा कि आप... मैंने सोचा कि आप किसी... मेरा मतलब, किसी दूसरे, वस्तुगत कारण से अब उसे प्यार नहीं करतीं। तब – कल और परसों में यही सोचता रहा, नास्तेन्का, – तब मैं कुछ ऐसा करता, मैं अवश्य ही कुछ ऐसा करता कि आप मुझे प्यार करने लगतीं – आपने तो ख़ुद ही मुझसे यह कहा था, नास्तेन्का, कि आपको मुझसे लगभग प्यार हो गया है। तो, मुझे और क्या कहना है? बस, लगभग वह सब कुछ कह दिया, जो मैं कहना चाहता था। सिर्फ़ इतना ही कहना बाक़ी रह गया है कि अगर आपको मुझसे प्यार हो जाता, तब क्या होता – सिर्फ़ इतना ही, और कुछ नहीं। सुनिये तो, मेरी मित्र, – क्योंकि आप मित्र तो मेरी हैं ही – मैं बेशक मामूली, ग़रीब, बहुत छोटा-सा आदमी हूं (लगता है कि मैं बहक रहा हूं, यह मेरी घबराहट का नतीजा है, नास्तेन्का), मगर मैं आपको ऐसे, ऐसे प्यार करता कि अगर आप उसे भी प्यार करती होतीं, उसे भी प्यार करती जातीं, जिसे मैं नहीं जानता, तो आपको यह कभी महसूस न होता कि मेरा प्यार आपके लिये किसी तरह का बोझ है। आपको केवल ऐसा लग-

ता, हर क्षण केवल यही अनुभूति होती कि आपके निकट कृतज्ञ, एक कृतज्ञ हृदय, एक उत्तप्त हृदय धड़क रहा है, जो आपके लिये... ओह, नास्तेन्का, नास्तेन्का! क्या कर दिया है आपने यह मेरे साथ!..."

"रोइये नहीं, मैं नहीं चाहती कि आप रोयें," बेंच से झटपट उठते हुए नास्तेन्का ने कहा। "आइये चलें, उठिये, मेरे साथ चलिये, रोइये नहीं, नहीं रोइये," अपने रूमाल से मेरे आंसू पोंछते हुए वह बोली, "तो आइये, अब चलें। हो सकता है कि मैं आपसे कुछ कहूं... हां, अब, जब कि उसने मुझे ठुकरा दिया है, जब कि वह मुझे भूल गया है, गो मैं अभी भी उसे प्यार करती हूं (आपको धोखा देना नहीं चाहती)... मगर, कहिये तो, मुझे जवाब दीजिये। अगर मैं, मिसाल के तौर पर, आपको प्यार करने लगती, मेरा मतलब, अगर केवल मैं... ओह, मेरे दोस्त, दोस्त मेरे। जब मुझे यह याद आता है, जब मैं यह याद करती हूं कि मैंने इस चीज़ के लिये आपकी तारीफ़ की थी कि आपको मुझसे प्यार नहीं हुआ, तो मैंने आपके दिल को बहुत दुःख पहुंचाया था, आपके प्यार की खिल्ली उड़ाई थी!.. हे भगवान! क्यों मैंने इसका अनुमान नहीं लगाया, क्यों इसे नहीं भांपा? क्यों मैं इतनी बुद्धू रही, मगर... हां, हां, मैंने सब कुछ कहने का निर्णय कर लिया है..."

"जानती हैं, नास्तेन्का, मैं आपसे क्या कहना चाहता हूं? यही कि मैं आपको छोड़कर जा रहा हूं! मैं आपको केवल यातना ही दे रहा हूं। अब आप अपने को इसलिये धिक्कारने लगी हैं कि आपने मेरी खिल्ली उड़ाई थी। मैं नहीं चाहता, हां, मैं बिल्कुल नहीं चाहता कि आप अपने दुःख के अलावा और... हां, मैं ही दोषी हूं, नास्तेन्का, नमस्ते।"

"ज़रा रुकिये, मेरी बात सुनिये – आप थोड़ा इन्तज़ार कर सकते हैं?"

"इन्तज़ार, किस चीज़ का?"

"मैं उसे प्यार करती हूं, मगर यह प्यार मर जायेगा, इसे मरना ही चाहिये, यह मरे बिना रह ही नहीं सकता। मैं महसूस कर रही हूं कि यह दम तोड़ रहा है... कौन जाने, यह आज ही दम तोड़ दे, क्योंकि मैं उससे नफ़रत करती हूं, क्योंकि उसने मेरा मज़ाक़

उड़ाया, जब कि आपने मेरे साथ यहां आंसू बहाये, क्योंकि आपने उसकी भांति मुझे ठुकराया न होता, क्योंकि आप मुझे प्यार करते हैं, जबकि वह मुझे प्यार नहीं करता था, क्योंकि मैं ख़ुद भी आपको प्यार करती हूं... हां, प्यार करती हूं! उसी तरह प्यार करती हूं जैसे आप मुझसे। मैं तो पहले ही ख़ुद आपसे यह कह चुकी हूं, आप तो यह सुन ही चुके हैं। मैं इसलिये प्यार करती हूं आपसे कि आप उससे अच्छे हैं, क्योंकि आप उससे अधिक भले हैं, क्योंकि, क्योंकि वह..."

उस बेचारी का भावनाओं का तूफ़ान इतना तेज़ था कि वह अपनी बात पूरी नहीं कर पाई। उसने अपना सिर मेरे कंधे, फिर मेरी छाती पर रख दिया और फूट-फूटकर रो पड़ी। मैंने उसे शान्त किया, चुप कराया, मगर उसके आंसू नहीं रुके। वह लगातार मेरा हाथ दबाते हुए सिसकियों के बीच कहती गयी – "ज़रा रुकिये, ज़रा रुकिये, मैं अभी चुप हो जाऊंगी, मैं आपसे कहना चाहती हूं... आप यह नहीं सोचियेगा कि ये आंसू... यह तो ऐसे ही हैं, मेरी कमज़ोरी का नतीजा हैं, थोड़ा सब्र कीजिये, अभी रुक जायेंगे..." आख़िर उसने रोना बन्द किया, आंसू पोंछे और हम फिर से आगे चल दिये। मैंने कुछ कहना चाहा, मगर वह देर तक मुझसे चुप रहने का ही अनुरोध करती रही। हम ख़ामोश रहे... आख़िर उसने अपना मन कड़ा करके कहना शुरू किया...

"मैं कहना चाहती हूं," उसने मरी-सी और कांपती आवाज़ में आरम्भ किया, किन्तु उसमें अचानक कुछ ऐसा झनझना उठा कि वह सीधा मेरे दिल में उतर गया और वहां मीठा-मीठा दर्द होने लगा, "यह नहीं सोचियेगा कि मैं ऐसी ढुलमुल, ऐसी चंचल हूं, यह नहीं सोचियेगा कि मैं इतनी आसानी से और इतनी जल्दी भूल सकती हूं, बेवफ़ाई कर सकती हूं... मैं साल भर उसे प्यार करती रही और भगवान की क़सम खाकर कहती हूं कि कभी भी, ख़्याल तक में भी मैंने उसके साथ बेवफ़ाई नहीं की। उसने इसका तिरस्कार किया, मेरा मज़ाक़ उड़ाया – जैसी उसकी इच्छा! मगर उसने मेरे दिल पर चोट की है, वहां नासूर बना दिया है। मैं – मैं उसे प्यार नहीं करती, क्योंकि मैं केवल उसे ही प्यार कर सकती हूं जो दिल का बड़ा है, जो मुझे समझता है, जिसमें भलमनसाहत

है, कारण कि मैं खुद भी ऐसी हूं और वह मेरे लायक़ नहीं है – पर, ख़ैर! मगर उसने यह अच्छा ही किया। बाद में उसका असली रूप सामने आने पर मुझे कहीं अधिक निराशा होती ... बस, सब कुछ ख़त्म हो गया! मगर कौन जाने, मेरे अच्छे दोस्त," मेरा हाथ दबाते हुए वह कहती गई, "कौन जाने, शायद मेरा यह प्यार भावनाओं की मृगछलना ही हो, मेरी कल्पना ही हो, हो सकता है कि यह केवल शरारत के रूप में, ऐसे ही छुटपुट से इसलिये शुरू हुआ हो कि मैं नानी के पास से उठ ही नहीं सकती थी? शायद उसे नहीं, किसी दूसरे को, ऐसे व्यक्ति को नहीं, बल्कि किसी दूसरे को मुझे प्यार करना चाहिये, जो मुझ पर दया करे और, और ... ख़ैर, हटाइये, हटाइये इस बात को," उत्तेजना से हांफते हुए वह अपनी बात पूरी न कर पाई, "मैं आपसे केवल इतना कहना चाहती थी ... मैं आपसे कहना चाहती थी कि अगर इस चीज़ के बावजूद कि मैं उसे प्यार करती हूं (नहीं, प्यार करती थी), अगर इसके बावजूद, आप फिर से यह कहेंगे ... अगर आप यह अनुभव करते हैं कि आपका प्यार इतना ऊंचा है कि वह मेरे हृदय से पहले प्यार को निकाल सकता है ... अगर आप मुझ पर दया करना चाहते हैं, अगर आप सान्त्वना और आशा के बिना मुझे मेरे भाग्य पर अकेली ही नहीं छोड़ देना चाहते, अगर आप मुझे सदा ही इसी तरह प्यार करना चाहेंगे, जैसे अब करते हैं, तो क़सम खाकर कहती हूं कि मेरी कृतज्ञता ... कि मेरा प्यार आपके प्यार के योग्य होगा ... क्या अब आप मेरा हाथ थामने को तैयार हैं?"

"नास्तेन्का," सिसकियों से रुंधे जाते कण्ठ के साथ मैं चिल्ला उठा, "नास्तेन्का! .. ओ नास्तेन्का! .."

"बस, काफ़ी है, काफ़ी है। अब बहुत काफ़ी है!" उसने बड़ी मुश्किल से कहा। "अब सब कुछ कहा जा चुका। ठीक है न? ऐसे ही है न? अब आप भी सौभाग्यशाली हैं और मैं भी। इसके बारे में अब एक भी शब्द नहीं कहिये, रुक जाइये; मुझ पर दया कीजिये ... भगवान के लिये किसी और बात की चर्चा कीजिये! .."

"हां, नास्तेन्का, हां! इसके बारे में अब काफ़ी है। मैं अब सौभाग्यशाली हूं, मैं ... हां, नास्तेन्का, हां, हम किसी और बात की चर्चा करेंगे, अभी, अभी चर्चा करेंगे, हां! मैं तैयार हूं ..."

मगर हमारी समझ में नहीं आया कि हम क्या बात करें। हम हंसे, रोये, हमने हज़ारों असम्बद्ध और बेमानी शब्द कहे। हम कभी तो पटरी पर चलते, तो कभी अचानक पीछे लौटते और सड़क को पार करते, इसके बाद रुकते और फिर से घाट पर लौट आते। हम तो मानो दो बच्चे थे ...

"इस वक़्त मैं अकेला रह रहा हूं, नास्तेन्का," मैंने कहना शुरू किया, "मगर कल ... बेशक यह सही है, नास्तेन्का, कि मैं ग़रीब आदमी हूं, सिर्फ़ एक हज़ार दो सौ सालाना पाता हूं, मगर यह तो कोई बात नहीं है ..."

"ज़ाहिर है कि कोई बात नहीं है। नानी को पेंशन मिलती है, इसलिये वह हम पर बोझ नहीं बनेगी। नानी को हमें अपने साथ रखना चाहिये।"

"हां, हां, नानी को हमें अपने साथ रखना चाहिये ... मगर वह मात्र्योना ..."

"हां, और हमारी फ़्योक्ला भी तो है!"

"मात्र्योना भली है, सिर्फ़ उसमें एक कमी है – कल्पना नहीं है उसके पास, नास्तेन्का, तनिक भी कल्पना नहीं है। पर यह तो कोई बात नहीं है न! .."

"कोई बात नहीं। वे दोनों एकसाथ रह लेंगी। लेकिन आप कल हमारे यहां आकर बस जाइये!"

"क्या मतलब है आपका? आपके यहां! अच्छी बात है, मैं तैयार हूं ..."

"हां, आप हमारे किरायेदार बन जाइये। हमारे यहां, ऊपर एक दुछत्ती है, वह ख़ाली है। एक कुलीन बुढ़िया उसमें रहती थी, पर वह अब चली गयी। मैं जानती हूं कि नानी किसी जवान आदमी को वहां बसाना चाहती है। मैं पूछती हूं – 'जवान आदमी किसलिये?' और वह जवाब देती है – 'ऐसे ही, मैं तो बूढ़ी हो गयी, मगर तुम यह मत समझना, नास्तेन्का, कि मैं तुम्हारे लिये कोई पति ढूंढ़ना चाहती हूं।' और मैं भांप गयी कि वह यही चाहती है ..."

"आह, नास्तेन्का!"

और हम दोनों हंस पड़े।

"बस, काफ़ी है। आप रहते कहां हैं? मैं तो भूल ही गई।"

"वहां, पुल के पास बारान्नीकोव के घर में।"

"वह, जो बड़ा-सा घर है?"

"हां, वही जो बड़ा-सा घर है।"

"ओह, मैं जानती हूं, अच्छा घर है वह। लेकिन आप उसे छोड़-कर जल्दी से हमारे यहां आ जाइये..."

"कल ही आ जाऊंगा, नास्तेन्का, कल ही। मुझे वहां थोड़ा-सा किराया देना है, मगर यह कोई बात नहीं... जल्दी ही मुझे वेतन मिलनेवाला है..."

"हां, मैं शायद ट्यूशन करने लगूं। पहले खुद पढ़ूंगी और फिर दूसरों को पढ़ाया करूंगी..."

"यह तो बहुत ही अच्छा रहेगा... और मुझे जल्द ही अच्छे काम का इनाम मिलनेवाला है, नास्तेन्का..."

"तो आप कल ही मेरे किरायेदार बन जायेंगे..."

"हां, और हम 'सेविले का नाई' ऑपेरा देखने चलेंगे। जल्द ही वह फिर से प्रस्तुत किया जायेगा।"

"हां, चलेंगे," नास्तेन्का ने हंसते हुए कहा, "नहीं, हम 'नाई' नहीं, कुछ और देखने चलेंगे..."

"अच्छी बात है, कुछ दूसरा ही सही। हां, यह ज़्यादा अच्छा रहेगा, मुझे तो ध्यान ही नहीं आया कि..."

ऐसे बातें करते हुए हम तो मानो नशे में, मानो अपनी सुध-बुध भूले हुए घूम रहे थे, मानो खुद ही यह नहीं जानते थे कि हमारे साथ क्या हो रहा था। तो हम रुककर एक ही जगह पर खड़े हुए बातें करते रहते, तो फिर से चलना शुरू कर देते और भगवान ही जाने कि कहां पहुंच जाते। फिर-फिर हंसते, फिर-फिर आंसू बहाते... तो अचानक नास्तेन्का घर जाने को कहती, मेरी रोकने की हिम्मत न होती और मैं उसे घर तक पहुंचाने को तैयार हो जाता। हम चल देते और कोई पन्द्रह मिनट बाद फिर से घाट पर अपनी बेंच के पास ही अपने को पाते। तो कभी वह गहरी सांस लेती और आंसू की बूंदें उसकी आंखों में फिर से झलक उठतीं। मैं सहम जाता, मेरे प्राण सूख जाते... मगर वह इसी क्षण मेरा हाथ दबाती और फिर से चलने-फिरने, बोलने-बतियाने के लिये मुझे अपने साथ खींच ले चलती...

"अब मुझे घर चलना चाहिये, चलना ही चाहिये। मेरे ख़्याल में तो बहुत ही देर हो चुकी है," नास्तेन्का ने आखिर कहा, "काफ़ी बचपना हो चुका!"

"हां, नास्तेन्का, लेकिन अब मुझे तो नींद नहीं आयेगी। मैं घर नहीं जाऊंगा।"

"लगता है कि नींद तो मुझे भी नहीं आयेगी, लेकिन आप मुझे पहुंचा दीजिये..."

"चलिये!"

"इस बार तो हम अवश्य ही घर जायेंगे।"

"अवश्य, अवश्य ही..."

"वादा करते हैं न?.. आखिर कभी तो घर लौटना ही होगा!"

"वादा करता हूं," मैंने हंसते हुए जवाब दिया...

"तो चलें!"

"चलिये।"

"आकाश पर नज़र डालिये, नास्तेन्का, आकाश पर! कल बहुत ही सुहावना दिन होगा। कैसा नीलाकाश है, कैसा चांद है! देखिये तो – वह पीला बादल अब चांद को ढंकने जा रहा है, देखिये, देखिये!.. नहीं, वह पास से गुज़र गया। देखिये तो, देखिये तो!.."

मगर नास्तेन्का बादल को नहीं देख रही थी। वह तो चुपचाप ऐसे खड़ी थी मानो उसे काठ मार गया हो। घड़ी भर बाद वह सहम गयी, मुझसे सट गई। मेरे हाथ में उसका हाथ कांप रहा था। मैंने उस पर नज़र डाली... वह मुझसे और अधिक चिपक गई।

इसी क्षण एक जवान आदमी हमारे पास से गुज़रा। वह अचानक रुका, टकटकी बांधकर हमें देखता रहा और फिर कुछ क़दम और आगे बढ़ गया। मेरा दिल कांप उठा...

"नास्तेन्का," मैंने दबी आवाज़ में पूछा, "यह कौन है, नास्तेन्का?"

"यह वही है!" उसने फुसफुसाकर जवाब दिया, और पहले से भी अधिक कांपती हुई मेरे साथ और भी अधिक चिपक गयी... मेरी टांगें जवाब दिये जा रही थीं...

"नास्तेन्का! नास्तेन्का! यह तुम हो!" हमारे पीछे ये शब्द सुनाई दिये और इसी क्षण यह जवान आदमी हमारी ओर बढ़ आया...

हे भगवान, वह कैसे चीखी! वह कैसे कांपी! कैसे वह मेरी बांहों से निकलकर उसकी तरफ़ लपकी! ... मैं तो बेजान-सा खड़ा हुआ उन्हें देखता रहा। मगर वह उसके हाथ में अपना हाथ देते ही, उसकी बांहों में जाते ही अचानक फिर से मेरी तरफ़ मुड़ी, हवा की तरह, बिजली की तरह मेरे पास आ पहुंची और इसके पहले कि मैं कुछ समझ पाता, उसने अपने दोनों हाथ मेरे गले में डाल दिये और बहुत ज़ोर से, बहुत कसकर मुझे चूमा। इसके बाद मुझसे एक भी शब्द कहे बिना वह फिर से उसकी ओर लपकी और उसके हाथ पकड़कर उसे अपने साथ खींच ले चली।

मैं खड़ा हुआ देर तक उन को देखता रहा ... आखिर वे दोनों मेरी नज़र से ओझल हो गये।

सुबह

सुबह मेरी रातों का अन्त बनी। दिन बुरा था। पानी बरस रहा था और मेरी खिड़की के शीशे पर उदासी भरी टपटप हो रही थी। मेरे छोटे-से कमरे में अन्धेरा था, बाहर बादल छाये हुए थे। मेरे सिर में दर्द था, वह चकरा रहा था। बुखार चुपके-चुपके मेरे अंगों को अपने चुंगल में लेता जाता था।

"मालिक, तुम्हारे लिये शहरी डाक से खत आया है, डाकिया लाया है," मेरे पीछे खड़ी हुई मात्र्योना ने कहा।

"खत! किसका है?" कुर्सी से उछलकर खड़े होते हुए मैंने पूछा।

"मैं नहीं जानती, मालिक, देख लो, शायद वहां ही लिखा हो कि किसने भेजा है।"

मैंने लिफ़ाफ़ा खोला। यह उसी का खत था!

"ओह, मुझे माफ़ कीजिये, माफ़ कीजिये मुझे!" नास्तेन्का ने लिखा था, "आपके पांवों पड़ती हूं, मुझे माफ़ कीजिये! मैंने आपको भी धोखा दिया और अपने को भी। वह सपना था, छाया थी ... मैं आज आपके लिये बहुत दुःखी होती रही। माफ़ कीजिये, मुझे माफ़ कर दीजिये!..

"मुझे दोष नहीं दीजियेगा, क्योंकि मैं आपके प्रति ज़रा भी तो नहीं बदली हूं। मैंने कहा था कि मैं आपको प्यार करूंगी और मैं अब भी आपको प्यार करती हूं, प्यार से भी कुछ बढ़कर। हे भगवान! काश, मैं आप दोनों को एकसाथ ही प्यार कर सकती! ओह, काश आप उसकी जगह होते!"

"ओह, काश वह आपकी जगह होता!" मेरे दिमाग़ में ये शब्द कौंध गये। मुझे तुम्हारे ही शब्द याद आ गये हैं, नास्तेन्का!

"भगवान साक्षी है कि अब मैंने आपके लिये क्या कुछ किया होता! मैं जानती हूं कि आप पर बहुत भारी गुज़र रही है और आप बहुत उदास हैं। मैंने आपका दिल दुखाया है, मगर आप तो जानते हैं कि अगर प्यार हो, तो नाराज़गी जल्दी ही दूर हो जाती है। और आप मुझे प्यार करते हैं!

"मैं आपकी आभारी हूं, क्योंकि मेरी स्मृति में वह एक ऐसे मधुर सपने की तरह अंकित होकर रह गया है, जिसकी जागने के बाद देर तक याद बनी रहती है, क्योंकि मैं जीवनभर उस क्षण को याद रखूंगी, जब आपने भाई की तरह अपना दिल खोलकर मेरे सामने रख दिया था और बड़ी उदारता से मेरे टुकड़े-टुकड़े हुए दिल को उपहारस्वरूप स्वीकार कर लिया था ताकि उसे सहेजें, उसे दुलरायें, उसे नया जीवन दें ... अगर आप मुझे क्षमा कर देंगे, तो मेरे हृदय में आपकी याद शाश्वत कृतज्ञता की भावना बनकर रह जायेगी ... मैं इस स्मृति को संजोये रहूंगी, इसके प्रति निष्ठा बनाये रहूंगी, विश्वासघात नहीं करूंगी, अपने हृदय के साथ, जो बहुत ही स्थिर है, छल नहीं करूंगी। वह तो कल फ़ौरन ही उसके पास लौट गया, जिसका सदा-सदा के लिये हो चुका है।

"हम मिलेंगे, आप हमारे यहां आयेंगे, हमसे मुंह नहीं मोड़िये-गा, आप हमारे चिरमित्र होंगे, मेरे भाई होंगे ... और जब हमारी भेंट होगी, तो आप सस्नेह मुझसे हाथ मिलायेंगे ... ठीक है न? आप मुझसे हाथ मिलायेंगे, आपने मुझे माफ़ कर दिया, ठीक है न? आप मुझे पहले की तरह ही प्यार करते हैं न?

"ओह, मुझे प्यार कीजिये, मुझसे नाता नहीं तोड़िये, क्योंकि मैं इस वक़्त आपको इतना अधिक प्यार करती हूं, क्योंकि मैं आपके प्यार के योग्य हूं, क्योंकि मैं आपके प्यार के योग्य बनूंगी ... मेरे

प्यारे दोस्त! अगले हफ़्ते मैं उससे शादी कर रही हूं। वह मेरे प्यार में डूबा हुआ लौटा है, वह मुझे कभी नहीं भूला... आप नाराज नहीं होइयेगा कि मैंने आपसे उसकी चर्चा की है। मगर मैं उसके साथ आपके पास आना चाहती हूं, आप उसे भी अपना स्नेह देंगे। ठीक है न?..

"मुझे माफ़ कीजिये, अपनी नास्तेन्का को याद रखिये और प्यार कीजिये।"

मैं देर तक इस पत्र को बार-बार पढ़ता रहा। मेरी आंखों में आंसू मचलते रहे। आखिर खत मेरे हाथों से गिर गया और मैंने मुंह ढांप लिया।

"मालिक! ओ प्यारे मालिक!" मात्र्योना कह उठी।

"क्या है, बुढ़िया?"

"मैंने छत से जाले तो पूरी तरह उतार दिये। अब तुम चाहो तो शादी कर लो, मेहमान बुला लो, ऐसी बढ़िया सफ़ाई कर दी है..."

मैंने मात्र्योना की ओर देखा... वह तो सदा जैसी ख़ुशमिज़ाज और "जवान" बुढ़िया थी, मगर न जाने क्यों, मुझे अचानक ऐसा लगा कि उसकी आंखों की चमक जाती रही है, चेहरे पर झुर्रियां पड़ गयी हैं, पीठ झुक गई है, वह जराजीर्ण हो गई है... मालूम नहीं क्यों, मुझे अचानक ऐसे लगा कि मेरा कमरा भी इस बुढ़िया की तरह ही बुढ़ा गया है, दीवारें और फ़र्श काले हो गये हैं, सब कुछ धुंधला गया है और जाले पहले से भी कहीं ज़्यादा हो गये हैं। न जाने क्यों, जब मैंने खिड़की से बाहर झांका, तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि सामनेवाला घर भी जर्जर हो गया है, धुंधला गया है, कि स्तम्भों का चूना गिरकर बिखर गया है, कि कार्निसें काली हो गयी हैं और उनमें दरारें पड़ गयी हैं और गहरे, चटक पीले रंग की दीवारें चित्तीदार हो गई हैं...

सूरज की किरण या तो अचानक बादलों में से झांककर फिर से जलमेघों के नीचे छिप गयी और मेरी आंखों के सामने फिर से सब कुछ धुंधला गया या शायद मेरी आंखों के सामने मेरा सारा उदास और बेरंग भविष्य झलक उठा और मैंने अपने आपको ऐसे ही अनुभव किया, जैसे कि अब ठीक पन्द्रह साल बाद कर रहा हूं – बुढ़ाया हुआ, इसी कमरे में, ऐसे ही एकाकी, इसी मात्र्योना के साथ, जो इन सालों में ज़रा भी समझदार नहीं हुई।

मगर मैंने अपनी उस ठेस को कभी याद किया हो, सो नहीं हुआ, नास्तेन्का! तुम्हारे सुख-सौभाग्य के निर्मल और उजले आकाश पर मैंने किसी काले बादल की छाया डाली हो, कि कटुता से तुम्हें कोसकर तुम्हारे दिल को पीड़ा पहुंचायी हो, गुप्त सन्ताप से उसे घायल किया हो और अत्यधिक उल्लास के क्षण में उसे उदासी से धड़कने के लिये विवश किया हो, कि मैंने उन कोमल फूलों में से एक को भी मसला हो, जिन्हें विवाह की वेदी पर जाते समय तुमने अपने काले घुंघराले केशों में गूंथा था... ओह, नहीं, कभी नहीं! हां, तुम्हारा आकाश सदा निर्मल रहे, हां, तुम्हारी मधुर मुस्कान सदा चमकती और खिली रहे, हां, तुम उस एक क्षण के उल्लास और सुख के लिये, जो तुमने किसी दूसरे, एकाकी और कृतज्ञ हृदय को दिया था, सदा सौभाग्यशाली रहो!

हे भगवान! उल्लास का पूरा एक क्षण! हां, मानव के सारे जीवन के लिये ही क्या यह काफ़ी नहीं है?..

टिप्पणियां

दरिद्र नारायण

'दरिद्र नारायण' सबसे पहले 'पीटर्सबर्ग का संकलन' में छपा जिसे लेखक निकोलाई नेक्रासोव ने १८४६ में प्रकाशित किया था। १८४७ में यह लघु उपन्यास अलग पुस्तक के रूप में छपा और लेखक ने इसमें बहुत-से महत्त्वपूर्ण संशोधन किये थे। दोस्तोयेव्स्की के जीवन काल में यह १८६० (संकलित रचनायें, मास्को, खण्ड १) और १८६५ में (पूर्ण संकलित रचनायें, पीटर्सबर्ग, खण्ड २, तथा अलग प्रकाशन के रूप में) छपा। इन संस्करणों में लेखक ने बहुत ही मामूली तब्दीलियां की थीं।

दोस्तोयेव्स्की के समकालीन, महान रूसी समालोचक विस्सारिओन बेलीन्स्की ने, जिनके पास न० नेक्रासोव मई १८४५ में उनकी राय जानने के लिये 'दरिद्र नारायण' ले गये, बड़े उत्साह से इसका स्वागत किया और पीटर्सबर्ग के साहित्यिक जगत में एक नई प्रमुख प्रतिभा के उदय होने की खबर बहुत जल्दी से फैल गयी। इस उपन्यासिका के प्रकाशन से दोस्तोयेव्स्की को बड़ी सफलता मिली। "रूसी साहित्य में श्री दोस्तोयेव्स्की के समान तेज़ी से, इतनी जल्दी से ख्याति पाने का उदाहरण नहीं है," बेलीन्स्की ने '१८४६ के रूसी साहित्य पर दृष्टि' लेख में लिखा।

पृष्ठ ११

ओह, ये क़िस्से-कहानियां लिखनेवाले! – यह आदर्श वाक्य रूसी लेखक व्लादीमिर ओदोयेव्स्की (१८०४–१८६९) की 'जीवित मृत' (१८३९) कहानी से लिया गया है।

पृष्ठ १३

काश कि मैं पक्षी ही होता एक शिकारी पक्षी! – यह महान रूसी कवि मिखाईल लेर्मोन्तोव (१८१४–१८४१) की 'अभिलाषा' कविता से लिया गया उद्धरण है जो पूरी तरह से सही नहीं है। कविता की सही पंक्तियां ऐसे हैं –

काश कि मैं पक्षी ही होता,
स्तेपी का वह कौवा
अभी-अभी जो मेरे ऊपर से है यहां उड़ा!

पृष्ठ १४

ब्राम्बेउस – बैरोन ब्राम्बेउस – यह समालोचक, कथाकार और 'पठनीय पुस्तकालय' पत्रिका के प्रकाशक ओ० इ० सेन्कोव्स्की (१८००–१८५८) का उपनाम था।

पृष्ठ २८

तेरेज़ा और फ़ाल्दोनी – १८ वीं शताब्दी के अन्त और १९वीं शताब्दी के आरम्भ में फ़्रांसीसी लेखक न० ज० लेओनार (N. G. Léonard, १७४४–१७९३) के लोकप्रिय भावुकतापूर्ण उपन्यास के एक दूसरे को प्यार करनेवाले भाग्यहीन नायक और नायिका। इस उपन्यास का रूसी अनुवाद म० काचेनोव्स्की ने किया। मास्को, १८०४ और १८१६।

पृष्ठ ३७

लोमोंड का व्याकरण – 'लोमोंड रचित और लेतेल्ये द्वारा संशोधित तथा परिवर्द्धित फ़्रांसीसी भाषा के उस पूर्ण व्याकरण से अभिप्राय है जिसमें रचनायें, निबन्ध और शब्दों के हिज्जे भी दिये गये थे'। मास्को, १८३१ (इसके पूर्व कई रूसी संस्करण भी निकल चुके थे जिनमें विद्यार्थियों के लिये सहायक पुस्तकें भी शामिल थीं)।

ज़ापोल्स्की का व्याकरण उससे कहीं बेहतर है – 'फ़्रांसीसी भाषा की नयी पाठ्यपुस्तक जिसमें वर्णमाला, शब्द-व्युत्पत्ति, वाक्य-विन्यास और पाठावली को भी स्थान दिया गया था। इसे व० ज़ापोल्स्की ने प्रकाशित किया'। मास्को, १८१७ (दूसरा संस्करण, मास्को, १८२४)।

पृष्ठ ७८–८०

प्रतिभाहीन साहित्यिक नक़लची राताज़्यायेव (जिसकी भोला-भाला मकार देवुश्किन प्रशंसा करता है) की रचनाओं के उद्धरण बहुत ही तीखी पैरोडियां हैं। 'इतालवी प्रेम-भावनायें' में रूसी लेखक अलेक्सान्द्र बेस्तूजेव-मार्लीन्स्की (१७९७-१८३७) की रोमानी

रचनाओं का मज़ाक़ उड़ाया गया है जो १६वीं शताब्दी के चौथे-पांचवें दशक में बहुत लोकप्रिय थीं। समालोचक विस्सारिओन बेलीन्स्की ने भावावेशों की अस्वाभाविक अतिशयोक्ति और मार्लीन्स्की के भाषा-आडम्बर की खिल्ली उड़ाई जिसके बाद इस लेखक की लोकप्रियता बहुत तेज़ी से कम हो गयी। पांचवें दशक में स्वच्छन्दतावाद की भोंडी नक़ल के विरुद्ध संघर्ष रूसी साहित्य में यथार्थवाद की स्थापना के संघर्ष का अभिन्न अंग था।

पृष्ठ ८१

'येर्माक और ज़ुलेईका' – स्वच्छन्दतावादी ऐतिहासिक उपन्यासों की पैरोडी जिसमें घटनायें, परिस्थितियां और पात्र जीवन से ज़रा भी मेल नहीं खाते और जिनकी शैली बहुत आडम्बरपूर्ण है।

येर्माक (मृत्यु १५८४) – कज़्ज़ाक सरदार, जिसने अन्य रूसी खोजी यात्रियों की तरह १६वीं शताब्दी में साइबेरिया को आबाद करने के मामले में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

इवान रौद्र (१५३०–१५८४) – रूसी ज़ार।

पृष्ठ ८२

... छोटा-सा अंश जो मज़ाक़िया अन्दाज़ में लिखा गया है ... – महान रूसी लेखक नि० गोगोल (१८०६–१८५२) की नक़ल करनेवालों की पैरोडी जिन्होंने पाठकों को हंसाने के लिये गोगोल की शैली के बाहरी लक्षणों की अंधाधुंध नक़ल की, मगर उनके विचारों की गहराई में नहीं गये।

पृष्ठ ८४

पोल-दे-कोक (१७६३–१८७१) (Paul de Kock) – दैनिक जीवन का चित्रण करनेवाले फ़्रांसीसी उपन्यासकार जिनकी रचनाओं को १६वीं शताब्दी के पांचवें दशक के रूसी समालोचक अश्लील, "गन्दी" मानते थे।

पृष्ठ ८६

'इवान बेल्किन की कहानियां' – पुश्किन रचित कहानियां जो

१८४६ तक तीन बार यानी १८३१, १८३४ और १८३८ में प्रकाशित हुईं।

पृष्ठ ६२

'मानव का चित्र' – यहां 'सभी शिक्षित सामाजिक श्रेणियों के आत्म-बोध के सभी विषयों से सम्बन्धित उपदेशात्मक पाठ की अ० गालिच द्वारा अनुरेखित पुस्तक से अभिप्राय है। (पीटर्सबर्ग, १८३४)। अ० इ० गालिच (१७८३–१८४८) अ० पुश्किन के स्कूली अध्यापक, मनोवैज्ञानिक और भाववादी दार्शनिक।

'घंटियां बजानेवाला लड़का' – फ़्रांसीसी लेखक फ़० ग० दुक्रे-दुमेनिल (F. G. Ducray-Duminil, १७६१–१८१६) के 'घंटियां बजानेवाला लड़का' (१८०६) उपन्यास में ग़रीबी के वातावरण में बड़े होनेवाले बालक का दुर्भाग्यपूर्ण जीवन चित्रित किया गया है। इसका अन्त सुखद होता है – नायक को अपने सगे-सम्बन्धी मिल जाते हैं और वह भिखारी गायक की जगह प्रतिष्ठित काउंट बन जाता है।

'ईविक के सारस' – फ़० शिल्लेर (१७६७) का महाकाव्य जिसका श्रेष्ठ रूसी कवि व० अ० जुकोव्स्की (१७८३–१८५२) ने अनुवाद किया।

पृष्ठ ६४

अब सचित्र तथा तरह-तरह के सुन्दर वर्णनवाली पुस्तकों का अधिक चलन है। – १६वीं शताब्दी के पांचवें दशक में रूस में "शरीरक्रिया-शब्दचित्र" का बहुत प्रचार हुआ। इस प्रकार के शब्दचित्रों के साथ सामान्यत: विभिन्न सामाजिक श्रेणियों और व्यवसायों के प्रतिनिधियों के रेखाचित्र भी छापे जाते थे।

पृष्ठ ६४.

आपको एक किताब भेज रही हूं ... – यहां निकोलाई गोगोल की संकलित रचनाओं के तीसरे खण्ड से अभिप्राय है। 'गरम कोट' लघु उपन्यास इसी में पहली बार प्रकाशित हुआ था।

पृष्ठ १२६

आप लवलेस हैं ... – लवलेस – औरतों को बहकानेवाला। यह शब्द १८वीं शताब्दी के अंत और १६वीं शताब्दी के आरम्भ में अंग्रेज़ लेखक स० रिचर्डसन (१६८६–१७६१) के रूस में बहुत लोकप्रिय उपन्यास 'क्लारिस्सा हार्लो' (१७४७–१७४८) के नायक के नाम से बना है।

पृष्ठ १५७

'मधुमक्खी' समाचारपत्र पढ़ा – यहां प्रतिक्रियावादी समाचारपत्र 'उत्तरी मधुमक्खी' की ओर संकेत है जिसे फ़० व० बुल्गारिन और न० इ० ग्रेच १८२५ से १८६४ तक पीटर्सबर्ग से निकालते रहे।

रजत रातें

यह लघु उपन्यास पहली बार 'ओतेचेस्त्वेन्निये ज़पीस्की' ('मातृ-भूमि की टिप्पणियां') पत्रिका में छपा। इसे दोस्तोयेव्स्की की बाद में प्रकाशित सभी संकलित रचनाओं में स्थान दिया गया।

स्वप्नदर्शी – यह दोस्तोयेव्स्की का एक प्रिय पात्र है। इस लघु उपन्यास के नामकरण और "रातों" में इसके विभाजन में दोस्तोये-व्स्की ने रोमानी परम्परा का अनुकरण किया। किन्तु यदि स्वच्छन्द-वादियों के नायक अपने भाग्य-विधाता भी हैं, तो दोस्तोयेव्स्की के नायक के भाग्य में केवल सपने देखना ही लिखा है, इसके कारण उसे बड़ी यातना सहनी पड़ती है – वास्तविक जीवन के एक दिन के लिये वह कल्पना के अपने सभी साल क़ुर्बान करने को तैयार है।

पृष्ठ १८७

दिव्य साम्राज्य के रंग से – अर्थात् पीला रंग। "दिव्य साम्राज्य"–प्राचीन काल में चीनी साम्राज्य का यही नाम था। १६१२ तक पीली पृष्ठभूमि पर अजगर के चिह्नवाला उसका राष्ट्रीय ध्वज था।

पृष्ठ २०८

... "**कल्पना की देवी**" (अगर आपने जुकोव्स्की को पढ़ा है, प्यारी नास्तेन्का) ... – यहां व० अ० जुकोव्स्की की 'मेरी देवी' कविता (१८०६) की ओर संकेत है जो वास्तव में गेटे की 'Meine Gottin' (१७८०) का ही स्वतन्त्र परिवर्तित रूप है। इसमें कवि ने "ज़ियस की प्रियतमा, कल्पना-देवी" का स्तुतिगान किया है।

पृष्ठ २१०-२११ . . . .

होफ़मान की दोस्ती – एर्नस्ट थियोडोर अमाडेई होफ़मान (१७७६–१८२२) जर्मन स्वच्छन्दतावादी लेखक, कल्पनाप्रधान उपन्यासिकाओं के रचयिता।

बार्थोलोमिओ की रात – सन् १५७२ की २४ अगस्त की रात को (कैथोलिक धर्म के अनुसार सेंट बार्थोलोमिओ का दिन) पेरिस में कैथोलिकों द्वारा ह्यूगेनोटों (प्रोटेस्टेंटों) का क़त्लेआम किया गया।

डिआना वर्नोन – अंग्रेज़ लेखक वाल्टर स्कॉट (१७७१–१८३२) के उपन्यास Rob Roy (१८१७) की नायिका। उसके चरित्र में सपने देखने के साथ साथ साहस और संकल्प का बहुत अच्छा मेल है।

...ज़ार इवान वसील्येविच की क़ाज़ान-विजय में वीरतापूर्वक भूमि-का ... – काज़ान पर डेढ़ महीने के घेरे और घमासान लड़ाइयों के बाद १५५२ में क़ब्ज़ा किया गया था। एक लाख रूसी सैनिकों का इवान रौद्र ने नेतृत्व किया था।

क्लारा मोबरे (Clara Mawbray) – वाल्टर स्कॉट के उपन्यास St. Ronan's Well (१८२३) की नायिका।

एफ़ी डीन्स (Effie Deans) – वाल्टर स्कॉट के The Heart of Mid-Lothian (१८१८) की एक प्रमुख पात्र।

प्रीलेट परिषद के सामने खड़ा हुस – यान हुस – (१३६६–१४१५) – महान चेक देशभक्त, प्राग विश्वविद्यालय के कुलपति, सुधारान्दोलन के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता और चेक में कैथोलिक चर्च तथा जर्मन प्रभुत्व के विरुद्ध जन-आन्दोलन के प्रेरक। कोन्स्तांस की धर्म-परिषद ने उन्हें काफ़िर घोषित करके जला डालने का आदेश दिया।

प्रीलेट – कैथोलिक के उच्च पदाधिकारियों की उपाधि।

'रोबेर्टो' में मृतों का पुनर्जन्म – 'रोबर्ट-शैतान' (१८२४) – प्रसिद्ध स्वरकार, पियानोवादक और वाद्यवृन्द-निर्देशक जकोमो मेयर-

बेर (१७६१–१८६४) का ऑपेरा।

बेरेज़ीना की लड़ाई – बेरेज़ीना – द्नेपर की दायी धारा है। नवम्बर १८१२ में बेरेज़ीना को पार करने के समय रूसी फ़ौजों ने मास्को से पीछे हटती हुई नेपोलियन बोनापार्ट की सेनाओं को पूरी तरह तबाह कर डाला और स्वयं नेपोलियन बमुश्किल क़ैदी बनते-बनते बचा।

काउंटेस व० द० की बैठक में कविता-पाठ–सम्भवत: पीटर्सबर्ग की विज्ञान अकादमी की डायरेक्टर और रूसी अकादमी की प्रेज़ीडेंट येकतेरीना रोमानोव्ना वारोन्त्सोवा-दाश्कोवा (१७४३–१८१०) से अभिप्राय है।

दांतोन, जार्ज जाक (१७५९–१७९४) – १७८९ की महान फ़्रांसीसी क्रान्ति के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता। रोबेसपियर के पक्षपातियों ने उन पर जनतन्त्र-विरोधी षड्यन्त्र का आरोप लगाया और क्रान्तिकारी अदालत ने उन्हें मृत्यु-दण्ड दिया।

क्लियोपेत्रा और उसके प्रेमी – (ईसा-पूर्व के ६९–३०) मिस्र की महारानी जो अपने सौन्दर्य के लिये विख्यात थी। "क्लियोपेत्रा और उसके प्रेमी" – पुश्किन की 'मिस्र की रातें' (१८३५) लम्बी कविता का उद्धरण है। यह विषय इतालवी आशुकवि को दिया जाता है।

कोलोमना में छोटा-सा घर – पुश्किन (१७९९–१८३७) के खण्ड-काव्य 'कोलोमना में छोटा-सा घर' से अभिप्राय है।

पृष्ठ २१२ . . . .

... प्यार करते थे, "इतने अधिक समय तक और अत्यधिक भावना-विभोर होकर" ... – म० लेर्मोन्तोव (१८१४–१८४१) की कविता की पंक्ति है। लेर्मोन्तोव की यह कविता वास्तव में हाइने (१७९७–१८५६) की कविता Sie liebten sich beide का स्वतन्त्र रूपान्तर है।

पृष्ठ २२३

'सेविले का नाई' – इतालवी स्वरकार जाकोमो अन्तोनियो रोज़ीनी (१७९२–१८६८) द्वारा रचा गया ऑपेरा रूस में बहुत लोकप्रिय रहा।

चिन्तन की गहराई और नैतिक जगत के करणीयों के विस्तार की दृष्टि से, जिन्हें उन्होंने प्रस्तुत किया है, लेखक दोस्तोयेव्स्की का हमारे यहां सर्वथा विशेष स्थान है। वह न केवल उन हितों की वैधता को स्वीकार करते हैं जो आधुनिक समाज को विह्ल करते हैं, बल्कि आगे भी जाते हैं, भविष्यदर्शन और पूर्वानुभूतियों के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं जो मानवजाति की निकटतम नहीं, बल्कि दूर भविष्य की खोज का लक्ष्य है।

मिख़ाईल साल्तिकोव श्चेद्रीन

आप कहते हैं कि दोस्तोयेव्स्की ने यह कल्पना करते हुए कि सभी लोग उनके जैसे हैं, अपने नायकों में खुद को ही चित्रित किया है। तो क्या हुआ! परिणाम यह है कि इन अपवाद-व्यक्तियों में न केवल हम, उनके अपने जाति-बन्धु, बल्कि विदेशी भी अपने को, अपनी आत्मा को पहचान पाते हैं।

लेव तोलस्तोय

तीस वर्ष बाद दोस्तोयेव्स्की ने अपनी 'डायरी' में इस पाण्डुलिपि के प्रथम पाठक, प्रमुखतम रूसी समालोचक विस्सारिओन बेलीन्स्की के इन शब्दों का उल्लेख किया – "कलाकार के रूप में आपके सामने सचाई का उद्घाटन और उद्घोषण हो चुका है ..... अपनी प्रतिभा का मूल्यांकन कीजिये, उसके प्रति निष्ठावान रहिये और आप महान लेखक बन जायेंगे।"

लघु उपन्यास 'रजत रातें' (1848) दोस्तोयेव्स्की की सबसे काव्यमयी, सुख की मधुर कल्पना से ओत-प्रोत रचना है। इस लघु उपन्यास का नायक पीटर्सबर्ग का एक ग़रीब बुद्धिजीवी, स्वप्नद्रष्टा और कवि है। नास्तेन्का नाम की बड़ी प्यारी लड़की के प्रति उसके प्यार की दास्तान ही इस उपन्यासिका का कथानक है।